वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा

SW-09

Social Welfare Administration and Welfare Services

समाज कल्याण प्रशासन एवं कल्याण सेवाएं

अनुक्रमणिका

इकाई व	इकाई का नाम	पृष्ठ संख्या
1.	समाज कल्याण :अवधारणा ,अर्थ , परिभाषा एवं उद्देश्य	1-12
2.	समाज कल्याण प्रशासन:सिद्धांत,प्रकार्यएवं विषय–क्षेत्र	13-28
3.	समाज कल्याण प्रशासन:स्वयंसेवी एवं गैर सरकारी संगठन	29-37
4.	केंद्रीय समाज कल्याण परिषद एवं राज्य समाज कल्याण परामर्श परिषद	38-48
5.	समाज कल्याण प्रशासन:केन्द्रीय,राज्य एवं अन्तर्राष्ट्रीय स्तर	49-62
6.	सामाजिक नीति	63-80
7.	सामाजिक नीति :भारतीय संविधान एवं पंचवर्षीय योजनाएं	81-92
8.	भारत में सामाजिक नीति	93-104
9.	सामाजिक नियोजन	105-121
10.	सामाजिक एवं आर्थिक नियोजन :योजना आयोगएवं पंचवर्षीय योजनाएं	122-140
11.	आर्थिक एवं सामाजिक विकास	141-160
12.	अक्षय विकास	161-170

इकाई-1

समाज कल्याण प्रशासन: अवधारणा, उद्देश्य एवं महत्व

इकाई की रूपरेखा

1.0 उद्देश्य (Objectives)

1.1 प्रस्तावना (Preface)

1.2 भूमिका (Introduction)

1.3 समाज कल्याण प्रशासन की अवधारणा (Concept of Social Welfare Administration)

1.4 प्रशासन का अर्थ (Meaning of Administration)

1.5 समाज कल्याण प्रशासन (Social Welfare Administration)

1.6 समाज कल्याण प्रशासन के उद्देश्य (Objectives of Social Welfare Administration)

1.7 समाज कल्याण प्रशासन का महत्व (Importance of Social Welfare Administration)

1.8 सारांश (Summery)

1.9 अभ्यास प्रश्न (Questions for Practice)

1.10 सन्दर्भ पुस्तकें (Reference Books)

1.0 उद्देश्य (Objectives)

प्रस्तुत अध्याय के अध्ययन के पश्चात आप –

1. समाज कल्याण के अर्थ तथा इससे सम्बंधित विभिन्न दृष्टिकोणों को जान सकेंगे।
2. प्रशासन के अर्थ एवं उससे सम्बन्धित अन्य अवधारणाओं को जान सकेंगे |
3. समाज कल्याण प्रशासन की अवधारणा, उद्देश्यों एवं महत्त्व से अवगत हो जायेंगे।

1.1 प्रस्तावना (Preface)

व्यवसायिक समाज कार्य का उद्देश्य समाज के प्रत्येक व्यक्ति की आवश्यकताओं की पूर्ति उचित ढंग से करना, जिससे कि वह सुखी और संतोषजनक जीवन व्यतीत कर सके। प्रभावकारी सेवाओं को विस्तृत स्तर पर लागू करने के लिए, योजना, निर्देशन, समन्वय और नियंत्रण का सामूहिक प्रयास किया जाता है। समाज कार्य की सेवाओं को व्यवसायिक स्वरूप प्रदान करने के लिए यह आवश्यक है कि समाज कार्यकर्ताओं को आवश्यक ज्ञान और कौशल प्रदान किया जाये। समाज कार्य सेवाओं को प्रदान करने में आवश्यक प्रशासनिक एवं नेतृत्व दक्षता के लिए कार्यकर्ता को इस ज्ञान और कौशल का प्रयोग करके सेवाओं को और प्रभावकारी बनाया जा सकता है।

अतः यह आवश्यक है कि समाज कार्यकर्ताओं को एक व्यवस्थित ज्ञान एवं तकनीकी कौशल प्रदान किया जाये। समाज कार्य प्रशासन, समाज कार्य की एक प्रणाली के रूप में कार्यकर्ताओं को प्रभावकारी सेवाओं हेतु ज्ञान एवं कौशल प्रदान करता है।

1.2 भूमिका (Introduction)

समाज कल्याण प्रशासन, समाज कार्य की द्वितीयक प्रणाली मानी जाती है परन्तु प्रथम तीनों प्राथमिक प्रणालियों, वैयक्तिक सेवा कार्य, सामूहिक सेवा कार्य, तथा सामुदायिक संगठन की सेवाओं में सेवार्थी को सेवा प्रदान करने हेतु समाज कल्याण प्रशासन की आवश्यकता पड़ती है। समाज कल्याण प्रशासन का आशय जन सामान्य के लिए बनायी गयी एवं सामुदायिक सेवाओं जैसे स्वास्थ्य, आवास शिक्षा और मंनोरजन के प्रशासन से है। जिसे समाज सेवा प्रशासन के पर्यायवाची शब्द के रूप में समझा जाता है।

1.3 समाज कल्याण प्रशासन की अवधारणा (Concept of Social Welfare Administration)

समाज कल्याण प्रशासन की अवधारणा को समझने से पूर्व समाज कल्याण एवं प्रशासन को अलग-अलग रूप में समझना आवश्यक हैः-

1.3.1 समाज कल्याण (Social Welfare)

भारत में समाज कल्याण की आवधारणा अत्यन्त प्राचीन है। निर्धनता, बीमारी, कष्ट आदि मानव जीवन में सदैव विद्यमान रहे है। मानव प्रारम्भ में अव्यवस्थित समूह तथा कबीलों के रूप में जीवन व्यतीत करता था। किन्तु यह जीवन असुरक्षित एवं अव्यवस्थित था। फलस्वरूप समूह, समुदाय, समाज तथा राज्य के रूप में मनुष्य ने समष्टिगत व्यवस्था को जन्म दिया। इस व्यवस्था के परिणामस्वरूप समाज में विशेषीकरण का विकास हुआ और श्रम विभाजन ने जन्म लिया।

इस श्रम-विभाजन के कारण समाज में उत्पादन के साधन एक दूसरे से पृथक हो गये। श्रम और पूँजी दो पृथक व्यक्तियों के हाथ में चली गई। इससे समाज में शोषण, उत्पीड़न तथा सम्पत्ति व शक्ति का असमान वितरण प्रारम्भ हुआ। असमान वितरण के कारण ही अनेक सामाजिक समस्याओं का जन्म हुआ और इन समस्याओं को हल करने के लिए समाज कल्याण का विकास हुआ।

1.3.2 समाज कल्याण का अर्थ (Meaning of Social Welfare)

समाज कल्याण, समाज की विविध समस्याओं को हल करने के लिए निर्धारित किया गया एक लक्ष्य है। सामाजिक जीवन का प्रत्येक पहलू इसके अन्तर्गत सम्मिलित है। फलस्वरूप समाज कल्याण की कोई निश्चित परिभाषा नही है। यह एक लक्ष्य है जिसका सम्बन्ध वर्ग तथा व्यक्ति विशेष के कल्याण से नहीं है, बल्कि सम्पूर्ण समाज का कल्याण है। इसके सर्व स्वीकृत लक्ष्यों में सर्वसाधारण के रहन-सहन के स्तर में प्रगति, व्यक्ति की अनिवार्य आवश्यकताओं की पूर्ति, बीमारी की अवस्था में चिकित्सा और देखभाल, शिक्षा व मनोरंजन का प्रसार, समाज-विरोधी वर्गों का सुधार तथा विभिन्न वर्गों के बीच पारस्परिक सहयोग इत्यादि मुख्य है।

समाज कल्याण के अन्तर्गत उन दुर्बल वर्गो के लिए आयोजित सेवाएँ आती हैं, जो किसी सामाजिक, आर्थिक, शारीरिक, या मानसिक बाधा के कारण उपलब्ध सामाजिक सेवाओं का उपयोग करने में असमर्थ हो अथवा परंपरागत धारणाओं और विश्वासों के कारण उनको इन सेवाओं से वांछित रखा जाता है। समाज कल्याण के कार्यक्षेत्र में बालकों, महिलाओं, वृद्धों, अशक्तों, बाधित व्यक्तियों, पिछड़ी हुई जातियों, आदिवासियों आदि के लिए सामाजिक सेवाओं और समाज कल्याण उपायों की व्यवस्था आती है।

1.3.3 समाज कल्याण के विभिन्न दृष्टिकोण (Dierent Views of Social Welfare)

समाज कल्याण का अभिप्राय प्रत्येक व्यक्ति की उन्नति का अवसर तथा उस उन्नति के लिए सहायता प्रदान करना ही है। अतः कोई भी राज्य, जिसमें इस प्रकार की व्यवस्था विद्यमान है, उसे हम कल्याणकारी राज्य की संज्ञा देते है। इस प्रकार की राज्य-व्यवस्था के अन्तर्गत विभिन्न व्यक्तियों के बीच, प्रगति की सुविधाओं को प्रदान करने में किसी प्रकार का भेद-भाव नही किया जाता है। इन सुविधाओं में समाज का स्वामित्व आवश्यक है। यदि इनका नियंत्रण किसी वर्गविशेष के हाथ में होता है, तो समाज का प्रत्येक सदस्य इन सुविधाओं से लाभ नहीं उठा सकता है। ऐसी दशा में कल्याणकारी राज्य का मूल आधार विलीन हो जाता है।

1.3.3.1 सुधारात्मक दृष्टिकोण

समाज कल्याण को जब हम सामाजिक नीति का लक्ष्य स्वीकार कर लेते हैं, तो उसे प्राप्त करने के साधनों को निर्धारित करना भी आवश्यक हो जाता है। समाज कल्याण के लिए पुनर्निर्माण आवश्यक है किन्तु पुनर्निर्माण मौजूदा व्यवस्था में तब तक सम्भव नही होता, जब तक की उसमें इच्छित परिवर्तन नहीं किया जाये। परिवर्तन की इस इच्छित रूप को ही हम सामाजिक सुधार कहते है । इस सुधार के द्वारा हम समाज कल्याण के लक्ष्य को प्राप्त करना चाहते हैं। सुधार की इस प्रक्रिया को अधिक गतिशील बनाने के उद्देश्य से सामाजिक कानूनों की व्यवस्था का होना आवश्यक है। सामाजिक कानूनों द्वारा सुधार को वैधानिक मान्यता मिलती है। कोई भी व्यक्ति जो सुधार की गति को रोकने का प्रयत्न करता है, वह कानून की दृष्टि में दण्ड पाने का अधिकारी हो जाता है।

सामाजिक कानूनों के क्षेत्र में श्रम कानूनों काविशेष स्थान है। कारखाना कानून, बाल तथा महिला श्रमिको के संरक्षण से सम्बन्धित कानून, क्षतिपूर्ति तथा मातृत्व हित लाभ के कानून, कल्याण तथा सामाजिक सुरक्षा से सम्बन्धित कानून, समाज कल्याण के लक्ष्य को प्राप्त करने में अत्यन्त सहायक रहे हैं।

1.3.3.2 सुरक्षात्मक दृष्टिकोण

क्षति, दुर्घटना, बीमारी, असमर्थता, वृद्धावस्था तथा बेकारी आदि व्यक्ति के जीवन में ऐसी दशायें है , जब उसके लिए बाह्य सहायता आवश्यक हो जाती है। अतः इन विभिन्न प्रकार के जोखिम के विरूद्ध सुरक्षा की जो व्यवस्था की जाती है, उसे सामाजिक सुरक्षा कहा जाता है। यह सामाजिक कल्याण की प्राप्ति का एक महत्वपूर्ण आधार है। इसके अन्तर्गत, सामाजिक बीमा, सामाजिक सहायता तथा व्यावसायिक बीमा की योजनायें आती है । बीमा के अन्तर्गत बीमाकृत व्यक्ति को क्षति तथा असमर्थता की दषा में लाभों को प्रदान करना है। सामाजिक सहायता में राज्य द्वारा व्यक्ति को संकट के समय सहायता प्रदान की जाती है।

इस प्रकार सामाजिक सुरक्षा, समाज कल्याण का एक महत्वपूर्ण अंग है। किन्तु समाज कल्याण का क्षेत्र, सामाजिक सुरक्षा से अधिक विस्तृत है। सामाजिक कल्याण के अन्तर्गत, सामाजिक सुरक्षा के अतिरिक्त सामाजिक उत्थान, जागृति तथा षिक्षा का भी समावेश होता है।

1.3.3.3 प्रजातांत्रिक दृष्टिकोण

आरम्भ में समाज कल्याण व्यक्ति, परिवार, व्यावसायिक संघ तथा दानी लोगों के द्वारा धार्मिक भावना से प्रेरित होकर, उपकार के उद्देश्यसे किये गए प्रयत्नों तक ही सीमित था। उन्नीसवीं सदी तक यह विश्वास था कि समाज कल्याण के लिए किसी प्रकार के राजकीय हस्तक्षेप की आवश्यकता नहीं है। विकासवादी सिद्धान्त के अनुसार, जिस व्यक्ति में जीवित रहने की क्षमता नहीं होती, उसे प्रकृति स्वयं समाप्त कर देती है। अतः असमर्थ को जीवित रहने में सहायता प्रदान करने का तात्पर्य प्राकृतिक चुनाव की प्रक्रिया में बाधा पहुँचाना है। इस दृष्टि में समाज

कल्याण की आवश्यकता समाप्त हो जाती है, क्योंकि इसके अन्तर्गत असमर्थ को संघर्ष का सामना करने के लिए समर्थ बनाया जाता है। किन्तु यह दृष्टिकोण आज पूर्णतया बदल गया है।

1.3.3.4 सामुदायिक दृष्टिकोण

कल्याण कार्यों के लिए राज्य तथा व्यक्ति को समान रूप से उत्तरदायी स्वीकार किया गया है। इसलिए भारत में पंचवर्षीय योजनाओं के अन्तर्गत, कल्याण कार्यां के लक्ष्य को पूरा करने के लिए सामुदायिक दृष्टिकोण को अपनाया गया है। समाज कल्याण के लिए न तो व्यक्ति के प्रयत्नों को ही उत्तरदायी माना गया है और न राजकीय प्रयत्नों को ही। वस्तुतः राज्य तथा नागरिकों के प्रयत्नों के मध्य एक उ उत्तरदायी पूर्ण समन्वय स्थापित करने की चेष्टा की गई है। समाज कल्याण के कार्यो को उस सीमा तक विकसित करने का प्रयास किया गया है। जिस सीमा तक स्थानीय समुदाय इन कल्याण कार्यो के दायित्व को अपने कंधों पर वहन करने के लिए तत्पर है। आयोजन के सामाजिक उद्देश्यों में यह स्वीकार किया गया है कि योजना से निजी लाभ अथवा कुछ थोड़े से लोगों की स्वार्थ सिद्धि नहीं बल्कि सभी सदस्यों की भलाई होनी चाहिए। इसके लिए राज्य द्वारा ऐसी नीतियाँ अनपाई गई है, जो समाज के निर्बल अंगो की रक्षा तथा उन्हें यथाषीघ्र अन्य लोगों के समकक्ष पहुँचाने के प्रयत्नषील है। योजना को संचालित करते समय इस बात का ध्यान रखा गया है कि वह समाज के सभी अंगों के लिए लाभदायक सिद्ध हो। इस लक्ष्य की प्राप्ति के लिए योजना को सफल बनाने कि लिए सभी लोगों पर समान दायित्व है।

अतः सामुदायिक कार्यक्रम के अन्तर्गत, राज्य लोगों को सहायता प्रदान करता है, ताकि वे अपने प्रयत्नों से अपनी प्रगति कर सकने में समर्थ हो सकें। इस कार्यक्रम के अन्तर्गत निम्नलिखित बातें मुख्य है -

- स्वयं अपनी सहायता और पारस्परिक सहायता।
- संगठित सामुदायिक प्रयासों द्वारा स्थानीय संसाधनों का अधिकतम उपयोग।
- सहकारी प्रयत्नों में भाग लेना।
- आर्थिक प्रगति, सामाजिक सुधार और सांस्कृतिक विकास।

सुखी एवं समृद्ध जीवन के लिये मानव सदैव प्रत्यनषील रहा है। मनुष्य को असमर्थता बीमारी निर्धनता व अन्य परेशानियों से मुक्ति हेतु परिवार, समुदाय एवं प्रशासन प्रारम्भ से ही प्रयास करता रहा है। प्रजातांत्रिक व्यवस्था में नागरिकों का महत्व सर्वाधिक माना गया है तथा वर्तमान कल्याणकारी राज्य व्यवस्था में नागरिकों के हित का दायित्व शासन का हो गया है ऐसी परिस्थितियों में समाज कल्याण प्रशासन का महत्व समाज कार्य की एक प्रणाली के रूप में और बढ़ जाता है।

1.4 प्रशासन का अर्थ (Meaning of Administration)

'प्रशासन' मूल रूप से संस्कृत का शब्द है। यह 'प्र' उपसर्ग पूर्वक 'शास' धातु से बना है इसका अर्थ है प्रकृष्ट या उत्कृष्ट रीति से शासन करना है। आज कल शासन का अभिप्राय 'सरकार' से समझा जाता है। किन्तु इसका वास्तविक अर्थ निर्देश देना, पथ प्रदर्शन करना, आदेश या आज्ञा देना है।

सामान्य बोलचाल में प्रशासन का संदर्भ व्यवस्था के लिए किया जाता है। अध्ययन के क्षेत्र में यह विज्ञान की तरह है तथा अभ्यास के क्षेत्र में एक कला की तरह है। प्रशासन शब्द अंग्रेजी के एडमिनिस्ट्रेशन का अनुवाद है जो कि लेटिन भाषा के एड और मिनिस्ट्रेट शब्द से बना है, जिनका संयुक्त अर्थ व्यक्तियों से सम्बन्धित मामलों को

व्यवस्थित करना है। प्रशासन को एक प्रक्रिया जिसमें, योजना, संगठन, निर्देशन समन्वय और नियंत्रण के संयुक्त प्रयास जिसके व्यक्तियों को सेवायें प्रदान की जाती है , के रूप में परिभाषित कर सकते हैं।

प्रशासन का प्रारम्भिक स्वरूप शासकों की देन थी। तब प्रशासन में कोई लिखित नियम नहीं थे। जो कुछ नियमावली थी, वह शासकों के मस्तिष्क में थी। वे अपने इच्छानुसार शासन चलाते थे । यदि कोई शासक उदार हुआ तो वह प्राचीन परम्पराओं का पालन भी करता था। धीरे-धीरे स्थिति बदली, औद्योगिक विकास और विस्तार का प्रशासनिक विधि पर प्रभाव पड़ा उन्नीसवीं शताब्दी के आरम्भ में वैज्ञानिक प्रबन्ध का श्री गणेश हुआ। श्री टेलर नामक एक इंजीनियर ने प्रशासन की तुलना एक मशीन से की। उनका कथन था कि मानव और मशीन को यदि सुसंगठित किया जाए तो सफल परिणाम निकलने की संभावना है। मशीन के पुर्जे की भाँति यदि कोई व्यक्ति प्रशासन में उपयोगी सिद्ध नहीं होता है तो उसे निकाल देना चाहिए। इसके पश्चात् कई विचारकों ने यह अनुभव किया कि मानव शरीर की मशीन से तुलना अनुचित है। उनका यह कथन था कि प्रशासन व्यक्ति को अपना सर्वोत्तम योगदान देने में सहायता करता है। सामाजिक और आर्थिक विज्ञान केविशेषज्ञों ने प्रशासन में मानवीय संस्पर्श लाने का यत्न किया। यह अनुभव किया गया कि समाज कल्याण प्रशासन के लिए परंम्परागत सम्बन्धी सिद्धान्तों से भिन्न सिद्धान्त बनाये जाये।

आधुनिक विचारकों के मतानुसार प्रशासन एक सुनिश्चित उद्देश्य की पूर्ति के लिए मनुष्यों द्वारा परस्पर सहयोग से की जाने वाली एक सामूहिक क्रिया है। इससे यह स्पष्ट होता है कि प्रशासन एक से अधिक व्यक्तियों द्वाराविशेष उद्द्देश्यों की पूर्ति के लिए सहयोगी ढंग से किया जाने वाले कार्य है। प्रशासन के लिए अनेक व्यक्तियों का सहयोग संगठन और सामाजिक हित का उद्देश्य अवश्य होना चाहिए। साइमन के अनुसार अपने व्यापक रूप से प्रशासन की व्याख्या उन समस्त सामूहिक क्रियाओं से की जा सकती है जो सामान्य लक्ष्य की प्राप्ति के लिए सहयोगात्मक रूप में प्रस्तुत की जाती है''

1.4.1 प्रशासन की परिभाषाएं (Definition pf Administration)

उपरोक्त विश्लेषण के पश्चात् प्रशासन की परिभाषाओं को निम्नवत् समझा जा सकता हैः-

एनसाइक्लोपीडिया ब्रिटानिका में प्रशासन शब्द की व्याख्या इस प्रकार की गयी है कि ''यह कार्यो के प्रबन्ध अथवा उनकी पूर्ण करने की एक क्रिया है।''

मार्क्स के अनुसार ''प्रशासन चैतन्य उद्देश्य की प्राप्ति के लिए निश्चयात्मक क्रिया है। यह उन वस्तुओं के एक संगठित प्रयत्न तथा साधनों का निश्चित प्रयोग है जिसको कि हम कार्यान्वित करवाना चाहते हैं।''

'मिश्रर के अनुसार, ''मनुष्य तथा भौतिक साधनों का संगठन एवं नियंत्रण ही प्रशासन हैं''।

निगरों के अनुसार, ''प्रशासन लक्ष्य की प्राप्ति के लिए मनुष्य तथा सामग्री दोनों का संगठन हैं।''

वाइट के अनुसार, ''प्रशासन किसी विशिष्ट उद्देश्य अथवा लक्ष्य की प्राप्ति के लिए बहुत से व्यक्तियों के सम्बन्ध में निर्देश नियंत्रण तथा समन्वयीकरण की कला है।''

लूथर गुलिक के अनुसार, ''प्रशासन का सम्बन्ध कार्यों को सम्पन्न कराने से है जिससे कि निर्धारित लक्ष्य पूरे हो सके।''

उपरोक्त परिभाषाओं के आधार पर यह निष्कर्ष स्पष्ट है कि प्रशासन मनुष्य एवं सामग्री का ऐसा प्रयोग तथा संगठन है जिससे लक्ष्य की प्राप्ति हो सके और इसमें कार्य करना तथा दूसरों से कार्य करवाना सम्मिलित है।

हम सरल रूप में प्रशासन को परिभाषित करते हुए कह सकते हैं कि पूर्व निर्धारित उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए लिये जाने वाले कार्य ही प्रशासन हैं।

1.4.2 प्रशासन के क्षेत्र (Areas of Administration)

प्रशासन के निम्नलिखित कार्यक्षेत्र हैः-

- संगठनात्मक ढ़ाचा
- नीति-निर्धारण और आयोजन
- कार्यक्रम का विकास, प्रक्रिया और विधियाँ
- प्रबंध-समिति के कार्य और कर्मचारियों के साथ संबंध
- कार्मिक और पर्यवेक्षण
- जन-सम्पर्क और सूचना
- मूल्यांकन और अनुसंधान
- अभिलेख-अनुरक्षण और
- वित्तीय साधनों का संग्रहण और बजट, लेखा-अभिलेख, लेखा परीक्षा आदि।

1.4.3 प्रशासन से सम्बन्धित अन्य अवधारणाएं (Other concepts related to Administration)

प्रशासन से सम्बन्धित अन्य अवधारणाओं को निम्नवत् उल्लेख किया गया हैः-

1.4.3.1 सामाजिक सुरक्षा प्रशासन

सामाजिक सुरक्षा प्रशासन का आशय व्यक्तियों को आकस्मिक विपत्ति के समय जिसमें वह अपने अथवा अपने परिवार के वर्तमान जीवन स्तर को बनायें रखने में अक्षम अनुभव करता है, को प्रदान की जाने वाली सेवाओं के प्रशासन से है।

सामाजिक सुरक्षा विविध व्याख्याओं के लिए एक गतिशील अवधारणा है। विशिष्ट अर्थों में, सामाजिक सुरक्षा उन लोगों जो पंगुता, वृद्धायु, बेरोजगारी, परिवार के मुखिया की मृत्यु अथवा नियंत्रण से बाहर परिस्थितियों के कारण आय के साधन खो देते हैं, की सरकार द्वारा सुरक्षा इंगित करती है। अमेरिका में इस शब्द को सामान्यतया सरकार द्वारा क्रियान्वित सामाजिक बीमा के साथ सम्बद्ध किया जाता है। इस बीमा के अधीन बेरोजगार, श्रमिकों, वृद्ध व्यक्तियों तथा मृत कर्मचारियों के परिवारों को सहायता दी जाती है। सामाजिक सुरक्षा इस प्रकार, मूलभूत जीवन स्तर को उठाने, सुरक्षा प्रदान करने एवं बनाये रखने हेतु लोक कार्यक्रमों को सूचित करता है। विशिष्टतया इस शब्द के अन्तर्गत सरकार द्वारा प्रशासित कार्यक्रम जो गर्भावस्था, बीमारी, दुर्घटना, पंगुता, परिवार के मुखिया की मृत्यु अथवा अनुपस्थिति, बेरोजगारी, वृद्धायु, सेवानिवृत्ति अथवा अन्य कारणों के कारण खोई गई आय की क्षतिपूर्ति करते हैं, सम्मिलित है। इन कार्यक्रमों में वित्त भी सरकार द्वारा लागता था।

1.4.3.2 सार्वजनिक प्रशासन

लुई मरियम ने सार्वजनिक प्रशासन की कैंची जैसे दो धारों वाले उपकरण से तुलना की हैं, जिसका एक भाग आयोजन, संगठन, कर्मचारीगण, निदेशन, समन्वय, बजट, आदि का प्रतिनिधित्व करता है तो दूसरा कार्यक्रमों के विषय और विधियों के ज्ञान का। आज की सामाजिक समस्याओं की जटिलता को ध्यान में रखते हुए किसी भी संस्था की कार्यकुशलता के लिए सुदृढ़ सामजिक प्रशासन आवश्यक है।

1.4.3.3 कल्याण प्रशासन

कल्याण प्रशासन का अर्थ जन सामान्य के हित के लिए विभिन्न प्रकार की सेवाओं के प्रशासन से है। लोक कल्याण प्रशासन का आशय, निराश्रित व्यक्तियों हेतु सेवाओं के आयोजन, उत्पत्ति एवं निराश्रित बच्चों, बाल अपराधी की चिकित्सा एवं पुर्नवास तथा मानसिक रूप से बीमार व्यक्तियों की देखभाल एवं चिकित्सा से सम्बन्धित है। यह शासन द्वारा प्रायोजित एवं नियंत्रित समाज कल्याण प्रशासन के रूप में जाना जाता है।

1.4.3.4 लोक प्रशासन

शासन द्वारा प्रायोजित एवं नियंत्रित सेवाओं के प्रशासन को लोक प्रशासन जो कि पुनः व्यवसायिक एवं प्रशासनिक के रूप में जाना जाता है। व्यवसायिक प्रशासन लाभ प्राप्ति के उद्देश्य से सेवायें प्रदान करता है जबकि सामाजिक प्रशासन का उद्देश्य बिना स्वार्थ के सेवायें प्रदान करना है, चाहे वे सेवायें लोक प्रशासन द्वारा अथवा निजि संस्थाओं द्वारा प्रदान की जा रही हों। समाज कल्याण प्रशासन सामाजिक प्रशासन के अन्तर्गत कार्य करता है।

1.4.3.5 सामाजिक संस्था प्रशासन

सामाजिक संस्था प्रशासन का आशय, जनसामान्य को समाजिक सेवायें प्रदान करने मे संलग्न सामाजिक संस्थाओं की कार्य प्रणाली, संरचना एवं प्रबधन से है। समाज कल्याण संस्था प्रशासन का अर्थ, समाज कल्याण संस्था की संरचना, कार्यवृत्ति एवं प्रबन्धन से है। समाज कल्याण संस्था प्रशासन का आशय समाज कार्यकर्ता द्वारा समाज कल्याण के विभिन्न क्षेत्रों में प्रदान की जा रही सेवाओं से है।

1.4.3.6 जन प्रशासन

राज्य द्वारा नियंत्रित तथा संचालित सेवाओं के प्रशासनको जन प्रशासनसमझा जाता है। लेकिन समाज सेवाओं से सम्बन्धित प्रशासनको सामाजिक प्रशासन कहते है । ये समाज सेवायें सरकार के द्वारा अथवा स्वैच्छिक संस्थाओं के द्वारा संचालित की जा सकती है । समाज कल्याण प्रशासनसामाजिक प्रशासनका अंग है। सामाजिक प्रशासनके अन्तर्गत सामाजिक तथा सामुदायिक सेवाओं जैसे स्वास्थ्य, आवास, शिक्षा, मनोरंजन, इत्यादि का संचालन और नियंत्रण आता है जो कोई भेदभाव किये बिना सामान्य जनता को प्रदान की जाती है। समाज कल्याण या जन कल्याण प्रशासनका अभिप्राय उन सेवाओं के नियंत्रण से हैं जो दुखियों, गरीबों, आश्रितों, पिछड़े वर्गों, अनुसूचित जातियों, जनजातियों, रोगियों, इत्यादि को प्रदान की जाती है।

1.5 समाज कल्याण प्रशासन (Social Welfare Administration)

समाज कल्याण प्रशासन उस क्रियाविधि को कहते हैं, जिसके द्वारा सामाजिक संस्था अपनी निर्धारित नीति और उद्देश्यों की पूर्ति के हेतु समाज कल्याण कार्यक्रमों के आयोजनों के लिए व्यावसायिक कुशलता और सामथ्र्य का उपयोग करती है। समुदाय को प्रभावशाली और सुदृढ़ सेवाएँ प्रदान करने के लिए सामाजिक संस्था को कुछ

प्रशासनिक, वित्तीय और विधि सम्बन्धी नियमों का पालन करना पड़ता है। इन्ही तीनों के सम्मिश्रण को 'समाज कल्याण प्रशासन' का नाम दिया गया है।

समाज कल्याण प्रशासन विभिन्न समानार्थी शब्दों और समाज कल्याण प्रशासन के उपरोक्त विश्लेषण से यह निष्कर्ष निकलता है कि समाज कल्याण प्रशासन का अर्थ अत्यन्त व्यापक है, जिसके अन्तर्गत जन सामान्य के हित के लिए विभिन्न सामाजिक सेवाओं चाहे वे लोक प्रशासन के अन्तर्गत हो या निजी समाज कल्याण संस्था के तत्वाधान में प्रदान की जा रही प्रशासन से है।

1.5.1 समाज कल्याण प्रशासन की परिभाषाएं (Definitions of Social mWelfare Adminstration)

समाज कल्याण प्रशासन की प्रमुख परिभाषाएं निम्नवत् है :

जॉन किडनाई (1957): समाज कल्याण प्रशासन सामाजिक नीति को समाज सेवाओं में बदलने की एक प्रक्रिया है।

राजा राम शास्त्री (1970): सामाजिक अभिकरण तथा सरकारी कल्याण कार्यक्रमों से संबंधित प्रशासनको समाज कल्याण प्रशासन कहते हैं। यद्यपि इसकी विधियाँ, प्रविधियाँ, तौर-तरीके, इत्यादि भी लोक प्रशासनया व्यापार प्रशासन की ही भाँति होते है। किन्तु इसमें एक बुनियादी भेद यह होता है कि इसमें सभी स्तरों पर मान्यताओं और जनतंत्र का अधिक से अधिक ध्यान रखते हुए ऐसे व्यक्तियों या वर्ग से सम्बन्धित प्रशासनकिया जाता है जो बाधित होते हैं।

डनहम (1949): समाज कल्याण प्रशासन को उन क्रिया कलापों में सहायता प्रदान करने तथा आगे बढ़ाने में योगदान देने के रूप में परिभाषित किया जा सकता है जो किसी सामाजिक संस्था द्वारा प्रत्यक्ष सेवा करने के लिए अनिवार्य है।

1.6 समाज कल्याण प्रशासन के उद्देश्य (Objectives of Social Welfare Administration)

समाज कल्याण प्रशासन के निम्नलिखित प्रमुख उद्देश्य हैं:-

1.6.1 राष्ट्र की सुरक्षा तथा कानून और व्यवस्था का संरक्षण

आपातकाल की स्थिति में समाज कल्याण प्रशासन नागरिक सुरक्षा की व्यवस्था करने से सम्बद्ध लोगों की सहायता करता है तथा जनता का उत्साह बढ़ाता है जिससे चिन्ताजनक घटनाओं के घटित होने पर भी मानसिक संतुलन बना रहता है। समाज कल्याण प्रशासन शांति काल में एकता के लिए कार्य करता है जिससे सामाजिक वैमनस्य तथा संकीर्ण क्षेत्रीय भावना का ह्रास तथा एकता और समन्वय का अधिक से अधिक विकास हो सके। कानून और व्यवस्था की समस्या का दीर्घकालीन समाधान निकालने में भी समाज कल्याण प्रशासन संलग्न रहता है जिससे वयस्क युवा और बाल अपराधों में कमी होती है तथा इन अपराधियों के लिए मानवतापूर्ण व्यवस्था करते हुए इनका समाज में पुनर्वास करता है।

1.6.2 आर्थिक विकास

एक विकासशील देश में राज्य का प्रमुख कार्य आर्थिक विकास करना होता है। इससे राजकीय क्षेत्र में उतरोत्तर वृद्धि होती है तथा निजी क्षेत्र में व्यवस्था बनी रहती है तथा इसे उचित प्रोत्साहन एवं नियंत्रण मिलता है।

आर्थिक विकास में समाज कल्याण प्रशासन का सहयोग आवश्यक है।विशेष रूप से समाज कल्याण प्रशासन आर्थिक विकास में निम्नलिखित रूप से योगदान देता है।

- यह लोगों की आकांक्षा के स्तर के साथ उनकी कार्यक्षमता में वृद्धि करता है।
- औद्योगिक उत्पादकता में वृद्धि करता है। इसके लिए समाज कल्याण प्रशासन उद्योगपतियों और प्रबन्धकों तथा श्रमिकों को अच्छे पारस्परिक सम्बन्धों की स्थापना के लिए प्रोत्साहित करता है, षिक्षा और तकनीकी प्रशिक्षण, आवास तथा स्वास्थ्य सेवाओं की व्यवस्था करता है।
- समाज कल्याण प्रशासन आर्थिक विकास कार्यों को प्रोत्साहित करते हुए उनके रहन-सहन के स्तर में उतरोत्तर वृद्धि को स्थायित्व प्रदान करता है, आय के अपव्यय को रोकता है और सबके पर्याप्त भोजन, वस्त्र आवास, शिक्षा, स्वास्थ्य, कल्याण सेवाओं, आदि की व्यवस्था करता है जिसके परिणामस्वरूप जन साधारण का वास्तविक कल्याण होता है।

1.6.3 सामाजिक विकास

समाज कल्याण प्रशासन जनशक्ति के अधिकतम विकास हेतु पोषाहार, स्वास्थ्य, शिक्षा, प्रशिक्षण, रोजगार, इत्यादि की व्यवस्था करता है। विभिन्न प्रकार की समाज कल्याण सेवायें प्रायः ऐसे लोगों को प्रदान की जाती है जिन्हे उनकी कमजोर और निम्न स्थिति के कारण समाज में उनके व्यक्तित्व विकास और सामाजिक कार्यात्मकता से वंचित रखा गया है। इन सेवाओं में, महिला और बच्चों, युवा, वृद्ध, श्रमिक, निर्धन, ग्रामीण क्षेत्रों के शोषित व्यक्ति, नगरीय मलिन बस्ती के शोषित व्यक्ति, सामाजिक रूप में अक्षम, विकलांग, बीमारियों के कारण कार्य न कर पाने वाले व्यक्ति आदि वर्गो हेतु कल्याणकारी कार्यक्रम शामिल किये गये है । ये सेवायें शासकीय एवं निजी संस्थानों के माध्यम से लागू की जाती हैं।

1.6.4 सामाजिक संस्था

उपचारात्मक और निरोधक समाज कल्याण सेवाओं का आयोजन करने के लिए सामाजिक संस्थाओं की आवश्कता होती है ताकि समुदाय की आवश्यकताओं और साधनों के अनुसार संस्था के उद्देश्यों के पूर्ति के लिए समाज कार्य की विधियों का प्रयोग किया जा सके। सामाजिक संस्थाएँ दो प्रकार की है :

(क) सरकारी संस्था:-सरकारी संस्था सरकार द्वारा स्थापित कर साधनों से संचालित और वैतनिक पदाधिकारियों द्वारा चलाई जाने वाली संस्था होती है। सरकारी संस्था सरकारी कानूनों द्वारा विनियमित की जाती है।

(ख) स्वैच्छिक संस्था :- स्वैच्छिक संस्था समुदाय द्वारा आत्म सहायता के सिद्धान्त पर समुदाय से संग्रहित धनराशि से चलाई जाने वाली संस्था होती है। स्वैच्छिक संस्था समुदाय द्वारा बनाई गई उपविधियों द्वारा संचालित की जाती है और समुदाय में संग्रहित धन से इसका खर्च चलता है। यद्यपि स्वैच्छिक संस्था सरकारी निधि से अनुदान भी प्राप्त करती है, तथापि वह समाज कल्याण सेवा के आयोजन करने के लिए एक ऐसी सामाजिक संस्था है, जिसकी पूर्व निर्धारित नीति और उद्देश्य आयोजित कार्यक्रम, समुचित कर्मचारी-वर्ग प्रयोजनात्मक विधियां होती है और जिसे समुदाय का सहयोग प्राप्त होता है। स्वैच्छिक संस्था उन व्यक्तियों के समूह को कहते है , जो अपने आपकों विधिवत् निगमित निकाय के रूप में संगठित करते हैं। इसका गठन स्वतः स्फूर्त होता है बिना किसी बाह्य नियंत्रण और हस्तक्षेप के सदस्यों द्वारा ही इसका संचालन किया जाता है। यह पूर्व निर्धारित उद्देश्यों की पूर्ति के लिए कार्यक्रम बनाती है, जिस पर व्यय समुदाय से संगृहीत निधि और सरकारी अनुदान द्वारा प्राप्त धनराशि में से

किया जाता है। समाज कल्याण के इन लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए केन्द्रीय, प्रान्तीय और स्थानीय शासन का यह कर्तव्य है कि वे अपने क्षेत्रों में उचित संगठनात्मक और प्रशासनिक अभिकरण प्रदान करे। साथ ही वे पिछले अनुभवों के प्रकाश में अपनी संरचनाओं, पद्धतियों प्रक्रियाओं में उचित परिवर्तन करे जिससे वे अपने लक्ष्यों की और अधिक सक्षमता और प्रभावषीलता से बढ़ सके।

1.7 समाज कल्याण प्रशासन का महत्व (Importance of Social Welfare Administration)

समाज कल्याण प्रशासन एक कला के साथ-साथ विज्ञान भी है। विज्ञान के रूप में यह एक व्यवस्थित ज्ञान है जिसका कि प्रमाणिक परीक्षण किया जा चुका है, तथा जिसके उपयोग से सेवायें और अधिक प्रभावकारी ढंग से प्रदान करना सम्भव हो सकता है। इसके ज्ञान में सर्वसामान्य योजना के सिद्धान्त, आयोजन, कार्मिक व्यवस्था, निर्देशन, समन्वय, प्रतिवेदन, वित्तीय व्यवस्था, मूल्यांकन एवं अनुश्रवण सम्मिलित है। समाज कल्याण प्रशासन सेवाओं को प्रदान करने में अनेक प्रकार की तकनीकी एंव दक्षताओं के प्रयोग किये जाने से यह एक कला के रूप में परिभाषित की जा सकती है।

समाज कल्याण प्रशासन एक ऐसी प्रक्रिया है जिसके माध्यम से, सरकारी एवं निजी समाज कार्य सेवाओं का आयोजन एवं संचालन किया जाता है। भारत एक कल्याणकारी राज्य है। भारतीय संविधान के अन्तर्गत राज्य के नीति निर्देशक तत्वों के द्वारा जनता के कल्याण को प्रोन्नत करना तथा जनता को, सामाजिक आर्थिक एवं राजनैतिक न्याय प्रदान करने का दायित्व राज्य को दिया गया है। संविधान की सातवीं अनुसूची में समाज कल्याण के अनेक क्षेत्र जैसे, सामाजिक सुरक्षा एवं सामाजिक बीमा, श्रम कल्याण, समवर्ती सूची में सम्मिलित व्यक्तियों के राहत पुनर्वास कार्यक्रमों का विवरण दिया गया है जिसके अन्तर्गत केन्द्र व राज्य सरकारें संविधान के समाज कल्याण उद्देश्यों की पूर्ति के लिए अनेक कार्यक्रम व गति विधियाँ चला सकती है। संविधान की प्रस्तावना में संकल्प राज्य के नीति निर्देशक तत्वों तथा अन्य विधिक प्राविधानों व नीतियों व नागरिकों के कल्याण को शासन राज्य का दायित्व स्वीकृत किया गया है ऐसी स्थिति मे भारत में समाज कल्याण प्रशासन का महत्व और बढ़ जाता है।

प्रत्येक व्यवसाय की कुछ व्यवसायिक विधियाँ होती है जिनके प्रयोग से कुछ परिणाम प्राप्त किए जा सकते हैं। शिक्षा, चिकित्सा, विधि, उद्योग आदि के क्षेत्रों में प्रभावकारी सेवाओं का आयोजन करने के लिए प्रशासन विधि का महत्वपूर्ण स्थान है। चिकित्सक को चिकित्सालय के संचालन और शिक्षक को शिक्षा संस्थान चलाने के लिए प्रशासनिक विधियों और कुछ कार्यकर्ताओं की आवश्यकता होती है। इसी प्रकार प्रत्येक सामाजिक संस्था को निराश्रितों को धर्मार्थ सहायता देने और असंमायोजतों के उपचार और निरोधक कार्यक्रमों संबंधी सेवाओं की व्यवस्था के लिए प्रशासनिक विधियो की आवश्यकता होती है।

विभिन्न प्रकार की समाज कल्याण सेवायें प्रायः ऐसे लोगों को प्रदान की जाती हैं जिन्हे उनकी कमजोर और निम्न स्थिति के कारण समाज में उनके व्यक्तित्व विकास और सामाजिक कार्यात्मकता से वंचित रखा गया है। इन सेवाओं में, महिला और बच्चों, युवा, वृद्ध, श्रमिक, निर्धन, ग्रामीण क्षेत्रों के शोषित व्यक्ति, नगरीय मलिन बस्ती के शोषित व्यक्ति, सामाजिक रूप में अक्षम, विकलांग, बीमारियों के कारण कार्य न कर पाने वाले व्यक्ति आदि वर्गों हेतु कल्याणकारी कार्यक्रम शामिल किये गये हैं। ये सेवायें शासकीय एवं निजी संस्थानों के माध्यम से लागू की जाती है।

स्वैच्छिक संस्थाएँ भी सरकारी नियमों और विधियों का पालन करने का प्रयत्न करती है । हमें समाज कल्याण प्रशासन का नया ढाँचा बनाना हैं, जो स्वैच्छिक संस्थाओं के प्रशासन कि लिए उपयुक्त हो। देश के अधिंकाश संस्थाएँ एक ही व्यक्ति द्वारा चलाई जाती हैं और प्रायः प्रशासनिक विधियों का पालन नहीं करती है । इसके फलस्वरूप, संस्था का विकास नहीं हो पाता है। इसके विपरीत, कुछ ऐसी भी संस्थाएँ हैं, जो सरकारी प्रशासन विधि का अनुसरण करने का प्रयत्न करती हैं। इसलिए, समाज कल्याण के स्वैच्छिक क्षेत्र में समाज कल्याण प्रशासन की विधियों को प्रसारित करने की आवश्यकता है।

स्वतंत्रता के पश्चात् सामान्यता सभी क्षेत्रों में थोडे बहुत परिवर्तन के साथ परंपरागत प्रशासनिक विधियों को अपना लिया गया ताकि देश की राजनीतिक, सामाजिक और और आर्थिक आवश्यकताओं को पूरा किया जा सके। इसके विपरीत समाज कल्याण के लिए ऐसा प्रशासनिक संगठन स्थापित किया गया, जिसका पहले कोई उदाहरण नहीं था। सरकारी प्रतिनिधियों, स्वैच्छिक समाज कार्यकर्ताओं और संसद के प्रतिनिधियों का एक संगठन केन्द्रीय समाज कल्याण बोर्ड के नाम से सन् 1953 ई0 में स्थापित किया गया। ऐसे बोर्ड प्रत्येक राज्य में बनाए गए। केन्द्रीय समाज कल्याण बोर्ड का मुख्य कार्य देश भर में कार्यरत स्वैच्छिक संस्थाओं के तकनीकि, संगठनात्मक, प्रशासनिक और वित्तिय पक्षों को विकसित करना और नई स्वैच्छिक संस्थाओं की स्थापना को प्रोत्साहित करना है।

1.8 सारांश (Summary)

सारांश के रूप में समाज कल्याण प्रशासन एक ऐसी प्रक्रिया है जिसके माध्यम से, सरकारी एवं निजी समाज कार्य सेवाओं का आयोजन एवं संचालन किया जाता है। समाज कल्याण सेवायें प्रायः ऐसे लोगों को प्रदान की जाती है जिन्हे उनकी कमजोर और निम्न स्थिति के कारण समाज में उनके व्यक्तित्व विकास और सामाजिक कार्यात्मकता से वंचित रखा गया है। इन सेवाओं में, महिला और बच्चों, युवा, वृद्ध, श्रमिक, निर्धन, ग्रामीण क्षेत्रों के शोषित व्यक्ति, नगरीय मलिन बस्ती के शोषित व्यक्ति, सामाजिक रूप में अक्षम, विकलांग, बीमारियों के कारण कार्य न कर पाने वाले व्यक्ति आदि वर्गो हेतु कल्याणकारी कार्यक्रम शामिल किये गये है ।

1.9 अभ्यासार्थ प्रश्न (Questions for Practice)

(1) समाज कल्याण प्रशासन की अवधारणा का उल्लेख कीजिए।

(2) समाज कल्याण प्रशासन के अर्थ को समझाइये।

(3) समाज कल्याण प्रशासन से सम्बन्धित विभिन्न दृष्टिकोणों को स्पष्ट कीजिए।

(4) प्रशासन से सम्बन्धित विभिन्न अवधारणाओं का उल्लेख कीजिए।

(5) निम्नलिखित पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए।

(अ) स्वैच्छिक संस्था

(ब) समाज कल्याण

(स) समाज कल्याण प्रशासन का महत्व

(द) सामाजिक विकास

1.10 सन्दर्भ पुस्तकें (Reference Books)

1. Singh, S.k and Mishra, P.D. k . Samaj Karya: Itihas, Darshan Evam Pranaliyan, NRBC, Lucknow, 2004.
2. Soodan, K.S.k. Samaj Karya: Siddhant evam Abhyas, N.k, S.k, Publication, Lucknow, 2011.
3. Sharma, P.k. and Sharma, H.k. Lok Prashashan: Siddhant evam Vyavhar, College Book Depot, New Delhi, 1996.
4. Singh, S.k.and Soodan, K.S.k. (ed.), Horçon of Social Work, Jyotsna Publication, Lucknow, 1986.
5. Kulkarni, V.k. M.k. Essay on Social Administration, Delhi Research Publication in Social Sciences, 1972.
6. Singh, D.k. K.k.Bharat mein Samaj Kalyan: Avdharna, Prashsshan evam Karyakram, NRBC, Lucknow, 2012.

इकाई-2

समाज कल्याण प्रशासन: सिद्धान्त, प्रकार्य एवं विषय-क्षेत्र

इकाई की रूपरेखा

2.0 उद्देश्य (Objectives)

2.1 प्रस्तावना (Preface)

2.2 भूमिका (Introduction)

2.3 समाज कल्याण प्रशासन सिद्धान्त (Principles of Social Welfare Administration)

2.4 समाज कल्याण प्रशासन के प्रकार्य (Functions of Social Welfare Administration)

2.5 जॉन किडने द्वारा प्रस्तुत समाज कल्याण प्रशासन के कार्य (Functions of Social Welfare Administration by John Kidnigh)

2.6 हैराल्ड सिलवर द्वारा प्रस्तुत समाज कल्याण प्रशासन के प्रकार्य (Functions of Social Welfare Administration: Herald Silver)

2.7 समाज कल्याण प्रशासन के विषय-क्षेत्र (Scope of Social Welfare Administration)

2.8 सारांश (Summary)

2.9 अभ्यास प्रश्न (Questions for Practice)

2.10 सन्दर्भ पुस्तकें (Reference Books)

2.0 उद्देश्य (Objective)

प्रस्तुत अध्याय के अध्ययन के बाद आप -

1. समाज कल्याण प्रशासन से सम्बंधित विभिन्न सिद्धान्तों से परिचित हो जायेंगे |
2. समाज कल्याण प्रशासन के प्रकार्यों को जान सकेंगे |
3. समाज कल्याण प्रशासन के विषय क्षेत्र को समझ सकेंगें|

2.1 प्रस्तावना (Preface)

समाज कल्याण प्रशासन समाज कार्य की द्वितीयक प्रणाली है। प्रशासन सम्बन्धी शिक्षा समाज कार्य शिक्षा संस्थाओं के पाठ्यक्रम में पूर्ण रूप से स्थापित हो चुकी है। 1944 से ही यह बात मानी ली गयी थी कि समाज कल्याण प्रशासन, समाज कार्य शिक्षा के आठ मौलिक क्षेत्रों में से एक क्षेत्र है और इसे समाज कार्यकर्ताओं के प्रशिक्षण में पूरा स्थान दिया जाना चाहिए। हौलिस टेलर रिपोर्ट में भी सामुदायिक संगठन के साथ प्रशासन को समाज कार्य की शिक्षा संस्थाओं के अध्ययन के चार विस्तृत और मुख्य क्षेत्रों में से एक माना गया है। यद्यपि प्रशासक सिद्धान्तों की दृष्टि से अपने विकास के प्रथम चरणों से गुजर रहा है, फिर भी प्रशासन सम्बन्धी साहित्य

सामने आ रहा है। कार्मिक प्रशासन ने महत्वपूर्ण प्रगति की है। सामाजिक संस्थाओं के प्रशासक के मानदण्ड निर्धारित किये जाने लगे हैं। आर्थर डनहम द्वारा प्रतिपादित प्रशासन के बारह सिद्धान्तों का सुझाव समाज कल्याण संस्थाओं द्वारा मान्यता प्राप्त करता जा रहा है।

2.2 भूमिका (Introduction)

समाज कल्याण प्रशासन, प्रशासन एक विकासशील विषय है। समाज कल्याण प्रशासन को सुनिश्चित सिद्धान्तों की परिसीमाओं में नहीं बांधा जा सकता, तथापि इसे विज्ञान की परिधि में लाने के लिए कुछ ऐसे सिद्धान्तों की प्रस्थापना अवश्य करनी होगी जो इसके मार्गदर्शन का कार्य करें तथा इसे वैज्ञानिक स्वरूप प्रदान कर सके।

2.3 समाज कल्याण प्रशासन सिद्धान्त (Principles of Social Welfare Administration)

समाज कल्याण प्रशासन का अभ्यास सामान्य रूप से प्रशासन के सिद्धान्तों एवं प्रविधियों पर आधारित है,विशेष रूप से सार्वजनिक प्रशासन के सिद्धान्तों एवं प्रविधियों पर। प्रशासन के निम्न प्रमुख सिद्धान्तों की व्याख्या की जा सकती है क्योंकि इनका प्रयोग समाज कल्याण संस्थाओं के प्रशासन में किया जाता है। इस बात को ध्यान में रखकर साइमन ने लोक प्रशासन के सम्बन्ध में चार सिद्धान्त प्रस्थापित किए हैं जो ग्लैडन द्वारा इस रूप में उद्धृत किये गये हैः-

- कार्य विशेषीकरण का सिद्धान्त,
- पदाधिकारियों के अधिकार स्तर के निश्चय का सिद्धान्त,
- किसी एक केन्द्रबिन्दु पर प्रशासकीय सत्ता को आश्रित करने का सिद्धान्त, एवं
- नियंत्रण के आधार पर कर्मचारियों के समूहीकरण का सिद्धान्त।

2.3.1 प्रो. वार्नर द्वारा प्रस्तुत प्रशासन के सिद्धान्त

प्रो. वार्नर ने अधिक स्पष्टता और विस्तार के साथ प्रशासन के आठ आधारभूत सिद्धान्तों का निरूपण किया है जिनकी प्रो. ह्राइट ने विस्तार से निम्नांकित रूप से व्याख्या की हैं:-

राजनीतिक निर्देशन का सिद्धान्त

प्रशासन को एक ऐसे अभिकरण के रूप में कार्यशील रहना चाहिए जो राजनीतिक कार्यपालिका के नियंत्रण में कार्य करता हो और उसके प्रति उत्तरदायी रहता हो। राजनीतिक कार्यपालिका द्वारा निर्धारित नीतियों का अनुपालन करना लोक प्रशासको का कर्तव्य है। प्रशासकीय संगठन सामान्यतः दूसरों की इच्छानुसार कार्य करता है। उसके पास स्वयं का कोई उपक्रम नहीं होता और होता भी है तो केवल उन्हीं विषयों के बारे में जो ऐसे उच्चतर कार्यपालिका द्वारा सौंपा जाए। प्रशासन यद्यपि स्थायी कार्यपालिका है तथापि उसे अस्थायी राजनीतिक कार्यपालिका के संरक्षण में कार्य करना होता है और इसका यह स्वाभाविक निष्कर्ष है कि प्रशासकीय कर्मचारियों को राजनीतिक में सक्रिय भाग लेने का निषेध है।

उत्तरदायित्व का सिद्धान्त

प्रशासन का अन्तिम उद्देश्य जनता की हित साधना है, अतः वह अन्तिम रूप में जनता के प्रति उत्तरदायी होता है। राजनीतिक कार्यपालिका द्वारा लोक प्रशासन का उत्तरदायित्व जनता के प्रति स्थापित होता है। लोक प्रशासकों को

स्वयं को जनता का स्वामी नहीं, सेवक मानना चाहिए। उनका यह कर्तव्य है कि वे जनता की कठिनाईयों को दूर करें और जनता की समस्याओं का समाधान करने को सदैव तैयार रहें। यही कारण है कि प्रशासकीय कार्यों के व्यापक अभिलेख रखे जाते हैं ताकि यदि व्यवस्थापिकाओं में अथवा अन्यत्र कोई प्रश्न उठे तो प्रशासकीय कर्मचारी प्रमाणित उत्तर दे सकें। लोक प्रशासकों में यह अपेक्षित है कि वे जनता के साथ निष्पक्ष और समान व्यवहार करें, किसी वर्ग अथवा व्यक्तिविशेष के साथ पक्षपात न करें। ऐसा करने पर ही लोक प्रशासन जन-विश्वसनीयता अर्जित कर सकता हैं।

सामाजिक आवश्यकता का सिद्धान्त

प्रशासन के हित के लिए अर्थात् उसका उद्देश्य सामाजिक आवश्यकताओं की पूर्ति होना चाहिए। लोक प्रशासन को सभ्यता और संस्कृति का रक्षक तथा शान्ति और व्यवस्था बनाये रखने वाला यन्त्र इसलिए कहा जाता है कि वह सामाजिक यान्त्रिक संगठन का केन्द्र है और सामाजिक आवश्यकताओं की पूर्ति के सिद्धान्त का आचरण करता है। लोक प्रशासन के सिद्धान्त की अन्तिम कसौटी यह है कि वह जन-आकांक्षाओं के कितना अनुरूप हैं। योजनाएं बना लेना आसान है, लेकिन उनका वास्तविक महत्व तो उनके क्रियान्वयन में हैं और इस क्रियान्वयन का उत्तरदायित्व लोक प्रशासन पर है। यदि लोक प्रशासन कर्तव्यपरायण, ईमानदार और कुशल है तो योजनाओं के समुचित क्रियान्वयन द्वारा वह देश और समाज को लाभान्वित कर सकता है, अन्यथा उनके भ्रष्टाचार और अनुत्तरदायित्वपूर्ण कार्यकलाप राजनीतिक अधिशासकों के स्वप्नों को चूर कर सामाजिक हित की कब्र खोद देंगे। सामाजिक प्रगति के सन्दर्भ में लोक प्रशासन की मात्रात्मक सफलता की अपेक्षा गुणात्मक सफलता अधिक महत्वपूर्ण हैं।

कार्यकुशलता का सिद्धान्त

प्रशासकों से अपेक्षा की जाती है कि वे अधिकाधिक कार्यकुशल बनें, युक्ति एवं विवेक से काम लें तथ अपनी कार्यक्षमता को इतना बढ़ाएं कि वांछित लक्ष्यों की प्राप्ति सुगम हो जाए। प्रशासनिक कार्यकुशलता का विकास करने के लिए प्रशासन में यथासम्भव स्थिरता लाई जाए अर्थात् जल्दी-जल्दी परिवर्तन की नीति को छोड़ा जाए, अधिकारियों और कर्मचारियों के कर्तव्यों का स्पष्ट एवं निश्चित निर्धारण किया जाए, प्रशासक उपक्रम की स्थापना की जाए, पदोन्नति के न्यायसंगत नियम बनाए जाएं निर्णय में शीघ्रता और सुनिश्चितता लाई जाए तथा उत्तरदायित्व एवं शोध आदि के लिए पदाधिकारियों को प्रोत्साहन दिया जाए। कम से कम व्यय पर अधिक से अधिक कुशलता और कार्यक्षमता के सिद्धान्त का आचरण किया जाए। प्रशासनिक कार्य-कुशलता बहुत कुछ राजनीतिक और स्थायी कार्यपालिका के पारस्परिक सम्बन्ध पर भी आश्रित हैं। यदि दोनों के सम्बन्ध मधुर और समन्वयात्मक है तो प्रशासन की गाड़ी सुचारू रूप से चलता है। यह उचित है कि भर्ती की समुचित व्यवस्था की जाए और राजनीतिक कार्यपालिका के निर्देश और उसकी नीतियों में स्पष्टता बरती जाए। राजनीतिक कार्यपालिका नीति-निर्धारण में स्थाई कार्यपालिका के कुशल कर्मचारियों में परामर्श ले और उनका सहयोग प्राप्त करें। कार्यकुशलता ही लोक प्रशासन की सफलता की कुंजी होती हैं।

जनसम्पर्क का सिद्धान्त

सुनियोजित जन-सम्पर्क लोकप्रिय प्रशासन की कल्पना के बिना निरर्थक है। लोककल्याणकारी राज्य में लोक सम्पर्क का महत्व निर्विवाद है। प्रशासन के क्षेत्र में लोक-सम्पर्क के कुछ मूलभूत उद्देश्य होतें हैं, यथा (1) सरकार द्वारा संचालित अभियानों (उदाहरणार्थ, अल्प बचत या परिवार-नियोजन) में जन साधारण को सहयोग के लिए प्रेरित करना, (2) सरकारी नियमों और कानूनों का पालन, (3) सरकारी नीतियों के समर्थन के लिए जनता में प्रचार,

आदि। लोकतन्त्रीय शासन प्रणाली में सरकार के लिए यह नितान्त आवश्यक है कि वह समय-समय पर राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय समस्याओं पर अपनी नीतियों से जनता को अवगत कराती रहे। कई बार सरकार के आन्तरिक अथवा बाह्य विरोधियों के जवाब प्रचार (प्रोपेगण्डा) भी करना पड़ता है। इस प्रकार की भूमिकाएं लोक सम्पर्क को निभानी पड़ती है। पुनश्च, प्रशासन का एक मूल उद्देश्य जनता की आवश्यकताओं का समझना और उन्हें दूर करने का प्रयास करना है। लोक सम्पर्क के माध्यम से कठिनाईयों को खोजकर उनके उचित निदान की व्यवस्था करना अधिक सुगम हो जाता है। भारत में लोक सम्पर्क के लिए केन्द्रीय सूचना तथा प्रसार मंत्रालय के अन्तर्गत निम्नलिखित विभाग या शाखाएं कार्यरत हैं:-

आकाशवाणी, पत्र-सूचना कार्यालय, रजिस्ट्रार, न्यूजपेपर्स ऑफ इण्डिया, फिल्मस डिवीजन, प्रकाशन विभाग, विज्ञापन तथा दृश्य प्रचार निदेशालय, फोटो डिवीजन, सन्दर्भ तथा अनुसंधान विभाग, और क्षेत्रीय प्रचार विभाग।

संगठन का सिद्धान्त

प्रशासन एक सहकारी प्रक्रिया है। इसमें अनेक व्यक्ति पूर्व-निर्धारित योजना के अनुसार मिलकर कार्य करते हैं। योजनाबद्ध व्यवहार किसी संगठन की मूलविशेषता होती है। लोक प्रशासन को सफलता की सीढ़ियां चढ़ने के लिए संगठन के सिद्धान्त का अनुसरण करना चाहिए। प्रशासकीय विभागों में पारस्परिक आदान-प्रदान के साथ-साथ समन्वय होना नितान्त आवश्यक है। संगठन में दो बातें सम्मलित हैं- श्रम-विभाजन और कार्य-विशेषीकरण, दोनों की सफलता इस बात में है कि किसी भी कार्य के आते ही जनता और सरकारी कर्मचारियों का यह पता लग जाए कि उसका सम्बन्ध सरकार के किस विभाग तथा संगठन के किस सोपान से हैं। प्रशासन को 'पदसोपान' की जरूरत है, पदसोपान में नेतृत्व निहित है और प्रभावशाली नेतृत्व एक नेता द्वारा सम्पन्न होता है। कोई भी प्रशासनिक क्रिया संगठन के बिना संचालित नहीं की जा सकती। प्रशासन और संगठन के बीच अटूट सम्बन्ध है।

विकास एवं प्रगति का सिद्धान्त

प्रशासन सामाजिक हित के साध्य की उपलब्धि का साधन है। अतः स्वाभाविक है कि वह सामाजिक प्रगति के साथ कदम मिलाकर चले तथा सामाजिक आवश्यकताओं और परिस्थितियों के अनुरूप अपने स्वरूप, संगठन और प्रक्रियाओं में परिवर्तन और संशोधन के लिए सम्बद्ध रहें। उसमें नए मूल्यों और दृष्टिकोणों के अनुकूल ढलने का लचीलापन हो। सिद्धान्त और व्यवहार में लोक प्रशासन यह मानकर चले कि लोक कल्याणकारी राज्य में उसका व्यापक दायित्व है और उसे समाज की विभिन्न समस्याओं तथा आवश्यकताओं का निदान करते हुए देश को विकास और प्रगति के पथ पर अग्रसर करना है। अतः लोक प्रशासन सदैव वैज्ञानिक और मानवीय दृष्टिकोण को अपनाते हुए पुराने घिसे-पिटे तर्कों के स्थान पर नवीन पद्धतियों को प्रयोग में लाए तथा लोक सम्पर्क का अधिकाधिक विकास करे। अपनी गति और शक्ति बनाए रखने इंजन से बल प्राप्त करे और निकम्मे नौकरशाही के आवरण को हटाकर लोक हित का जामा पहने।

अन्वेषण अथवा खोज का सिद्धान्त

प्रशासन में यद्यपि भौतिक विज्ञान की तरह प्रयोगशालाएं स्थापित नहीं की जा सकती तथापि मस्तिष्क और अनुभव द्वारा ऐ सी सामग्री अवश्य ही एकत्रित की जा सकती है जिसके आधार पर कार्योपयोगी निष्कर्ष निकाले जा सकें, प्रशासनिक कुशलता बढ़ाई जा सके तथा लोकप्रशासन संस्थान प्रशासकीय खोज के क्षेत्र में प्रशंसनीय कार्य कर रहा है। उसने अनेक खोज, कार्यक्रमों और योजनाओं को संचालित किया है।

कुछ विद्वानों ने वार्नर द्वारा स्थापित उपर्युक्त आठ सिद्धान्तों के अतिरिक्त कुछ और भी सिद्धान्त सुझाएं हैं, जैसे- सत्ता का सिद्धान्त, आज्ञापालन कासिद्धान्त, कर्तव्य एवं रूचि का सिद्धान्त, उत्तरदायित्व का सिद्धान्त, पदसोपान का सिद्धान्त, सहयोग एवं एकीकरण का सिद्धान्त, औचित्य एवं न्याय का सिद्धान्त तथा श्रम-विभाजन और कार्य-विशेषीकरण का सिद्धान्त। लेकिन गहराई से विश्लेषण करने पर इन सिद्धान्तों में पाई जाने वाली सभी बातें वार्नर के आठ सिद्धान्तों में उपलब्ध है। पुनश्चः प्रशासन एक सतत् विकासशील विज्ञान है जिसको सुनिश्चित सिद्धान्तों के कटघरे में बाधित नहीं किया जा सकता। इसके बावजूद यही कहा जा सकता है कि कोई भी सिद्धान्त ऐसे नहीं हो सकते जिनसे प्रशासन कठोरता से चिपक कर लकीर का फकीर बना रहे।

2.3.2 अन्य सिद्धान्त (Other Principles)

जो आधारभूत सिद्धान्त प्रतिपादित किए गए वे केवल यही प्रस्थापित करते हैं कि लोक प्रशासन को उनके अनुकूल आचरण करना चाहिए। इस आधार पर समाज कल्याण प्रशासन से सम्बन्धित अन्य सिद्धान्तों को निम्नवत् बताया गया है:-

समन्वय का सिद्धान्त (Principle of coordination)

सभी संस्थाओं में बड़े या छोटे स्तर के व्यक्ति कार्य करते हैं जिनकोविशेष कार्यों के लिए रखा जाता है और जो सम्पूर्ण कार्यक्रम से सम्बन्धित होते है, और पूरी संस्था से सम्बन्धित होते हैं। इन सभी स्तरों के व्यक्तियों के कार्य सम्बन्ध स्पष्टता से परिभाषित होने चाहिए और उन्हें एक सरल कार्यात्मक क्रम में रखना चाहिए। इन सभी स्तरों के व्यक्तियों के कार्यों में पूरा समन्वय होना संस्था के उद्देश्यों की पूर्ति के लिए आवश्यक है।

कार्यात्मकता का सिद्धान्त (Principle of Functionality)

यह मानते हुए कि व्यक्ति में विभिन्न क्षमताएं, योग्यताएं और व्यावसायिक प्रशिक्षण होता है कार्यात्मकता के सिद्धान्त के अनुसार, जिन व्यक्तियों को भी कार्य और उत्तरदायित्व दिया जाए, वह प्रत्येक व्यक्ति की अपनी योग्यता और प्रशिक्षण के अनुसार होना चाहिए। कार्य पूर्णरूप से स्पष्ट किया जाना चाहिए। उनके संस्था के पूरे कार्यक्रम से सम्बन्ध को भी समझा जाना चाहिए।

प्राधिकार और इसका प्र्रत्योजन का सिद्धान्त (Principle of Authority and Delegation)

सभी संस्थाओं में प्राधिकार का एक प्रमुख स्रोत होता है। प्राधिकार का अर्थ एकतन्त्र नहीं होता। अधिक संस्थाओं में प्रबन्ध मण्डल में ही यह एक प्राधिकार होता है। यह मण्डल अपना प्राधिकार समिति या अधिशासक को दे सकता है। अधिशासक यह प्राधिकार संस्था के अन्य कर्मचारियों को दे सकता है।

कार्यों का श्रेयीकरण का सिद्धान्त

इसका अर्थ है कर्मचारियों के कार्यों का श्रेणीकरण उत्तरदायित्व एवं प्राधिकार की मात्रा के अनुसार निर्धारित करना: यह श्रेणीकरण कार्यों के अनुसार या भौतिक पदार्थों को लेकर किया जा सकता है। कार्यों का ठीक से परिभाषित किया जाना और प्राधिकार को प्रत्योजित किया जाना संस्था में संघर्ष को रोकने और कर्मचारियों की संतुष्टि के लिए अनिवार्य होता है।

नियंत्रण का आकार का सिद्धान्त

इसका अर्थ है कि एक व्यक्ति कितने व्यक्तियों के ऊपर पर्यवेक्षण रख सकता है। यह संख्या किसी एकविशेष कार्य की प्रकृति, पर्यवेक्षक में निपुणता और पहल की मात्रा और पर्यवेक्षण किये जाने वाले व्यक्ति कितनी स्थानिक दूरी में वितरित है पर निर्भर करती है।

लोकतंत्रीय सिद्धान्त (Democratic principles)

यह सिद्धान्त सभी समाज कल्याण संस्थाओं के लिए व्यावहारिक महत्व रखते हैं क्योंकि संस्था की स्थापना दर्शनशास्त्र और संगठनात्मक संरचना इन्हीं सिद्धान्तों पर होती है। इन सिद्धान्तों के मौलिक अर्थ यह है कि लोकतंत्रीय विचार न केवल आधारभूत मानवीय मूल्यों का ही प्रतिनिधित्व करता है बल्कि सहकारी मानव प्रयास में प्रेरणा का कारण भी बनता है। ब्लूमेन्थन ने इस लोकतंत्रीय विचार के इन पांच तत्वों का उल्लेख किया है: प्रत्येक व्यक्ति का अन्तर्निहित मूल्य, सामूहिक प्रयास में, साझेदारी और भाग ले ने का अधिकार, सामान्य कल्याण के प्रति उत्तरदायित्व, विचारों के आदान-प्रदान और उनके निर्मुक्त प्रकटन द्वारा ठोस निर्णय लेने की मनुष्य की योग्यता और निर्मुक्त विचार-विमर्श और खोज द्वारा एकमत का समीकलन या एकीकरण और एकता।

2.3.3 सामाजिक अभिकरणों द्वारा प्रयोग में लाये जाने वाले सिद्धान्त (Principles used by Social Agencies)

समाज कल्याण प्रशासन में किसी अधिकारिक अथवा सरकारी तौर पर संस्थापित प्रशासकीय मापदण्डों का अभाव है, तदपि निम्नलिखित सिद्धान्तों को समाज कल्याण व्यवहार एवं अनुभव होने के कारण सामान्य मान्यता दी गई है एवं जिनका पालन सुप्रशासित सामाजिक अभिकरणों द्वारा किया जाता है:-

- समाज कल्याण अभिकरण के उद्देश्यों कार्यों का स्पष्ट रूप से वर्णन होना चाहिए।
- इसका कार्यक्रम वास्तविक आवश्यकताओं पर आधारित होना चाहिए, इसका कार्यक्षेत्र एवं भू-क्षेत्र उस सीमा तक जिसमें यह प्रभावी तौर पर कार्य कर सकती है सीमित होना चाहिए, यह समुदाय के संसाधनों, प्रतिरूपों एवं समाज कल्याण अवाष्यकताओं से सम्बन्धित होना चाहिए, यह स्थिर होने की अपेक्षा गतिमान होना चाहिए तथा इसे बदलती हुई आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए बदलते रहना चाहिए।
- अभिकरण सुसंगठित होना चाहिए, नीति निर्माण एवं क्रियान्वन में स्पष्ट अन्तर होना चाहिए, आदेश की एकता, अर्थात् एक ही कार्यकारी अध्यक्ष द्वारा प्रशासकीय निदेशन, प्रशासन की सामान्य योजना अनुसार कार्यों का तर्कयुक्त विभाजन, सत्ता एवं दायित्व का स्पष्ट एवं निश्चित समनुदेशन, तथा संगठन की भी इकाइयों एवं स्टाफ सदस्यों का प्रभावी समन्वय।
- अभिकरण को उचित कार्मिक, नीतियों एवं अच्छी कार्यदशाओं के आधार पर कार्य करना चाहिए। कर्मचारियों की नियुक्ति योग्यता के आधार पर होनी चाहिए तथा उन्हें समुचित वेतन दिया जाना चाहिए। कर्मचारियों वर्ग अभिकरण की आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए मात्रा एवं गुण में पर्याप्त होना चाहिए।
- अभिकरण मानक सेवा की भावना से ओतप्रोत होकर कार्य करे, इसे उन व्यक्तियों एवं उनकी आवश्यकताओं की समुचित जानकारी होनी चाहिए जिनकी यह सेवा करना चाहता है। इसमें स्वतंत्रता, एकता एवं प्रजातंत्र की भावना भी होनी चाहिए।

- अभिकरण से सम्बन्धित सभी में कार्य की ऐसी विधियाँ एवं मनोवृत्तियाँ विकसित होनी चाहिए जिससे उचित जन सम्पर्क का निर्माण हो।
- अभिकरण का वार्षिक बजट होना चाहिए। लेखा रखने की प्रणाली ठीक होनी चाहिए। एवं इसके लेखों का सुयोग्य व्यावसायिक एजेंसी द्वारा जिसका अपना कोई हित नहीं है, परीक्षण होना चाहिए।
- यह अपने रिकार्ड को ठीक प्रकार से सरल एवं विस्तार से रखे जो आवश्यकता के समय सुगमता ये उपलब्ध हो सके।
- इसकी लिपिकीय एवं अनुरक्षण सेवाएँ भी मात्रा एवं गुण में पर्याप्त तथा क्रियान्वयन में दक्ष होनी चाहिए।
- अभिकरण उपयुक्त अन्तराल पर स्वमूल्याँकन करे, गत वर्ष की अपनी सफलताओं एव असफलताओं का अपनी वर्तमान प्रस्थिति एवं कार्यक्रमों का, उद्देष्यों एवं संस्थापित मानदण्डों के अनुसार मापित अपने निष्पादन का, अपनी शक्ति एवं कमजोरियों का अपनी वर्तमान समस्याओं का तथा अपनी सेवा को बेहतर बनाने के लिए अगले उपायों का लेखा-जोखा लेने के लिए।
- प्रशासन को कार्यक्रम का तकनीकी ज्ञान और कुशलताओं के विषय में जानकारी होनी चाहिए।
- समूह-कार्य के सिद्धान्तों को आधार पर उसे कार्यकर्ताओं को दायित्व सौंप कर उनके सहयोग को प्रोत्साहित करना चाहिए।
- सुविचारित और स्पष्ट रूप से परिभाषित क्रिया-विधियाँ हो, और उनका दृढ़ता से पालन किया जाए।
- प्रशासन विधि के पालन का कार्य दक्ष और योग्य कार्यकर्ताओं को सौंपना चाहिए। विधि का समान रूप से पालन हो।
- संस्था का प्रत्येक कार्यकर्ता यह अनुभव करे कि उसका कार्य भाग बहुत महत्वपूर्ण है।
- प्राशासनिक विधियाँ समुदाय के कल्याण का साधन है, साध्य नहीं।
- क्रिया-विधियाँ जड़ नहीं होनी चाहिए। आवश्यकता पड़ने पर उनमें परिवर्तन करने की गुंजाइश हो।
- प्रशासनिक ढाँचा लोकतांत्रिक पद्धति पर आधारित होना चाहिए, जिसमें दायित्वों का बँटवारा हो।
- समाज कल्याण प्रशासन व्यक्तियों की सहायता करने का एक सुव्यवस्थित एवं संगठनात्मक प्रयास है जिसके द्वारा शासन, प्रशासन, आम जनता एवं उपलब्ध योजनाओं के मध्य अन्तर को कम करने का एक माध्यम है।

2.4 समाज कल्याण प्रशासन के प्रकार्य (Functions of Social Welfare Administration)

सामाजिक संस्थाओं के प्रशासकीय क्रियाकलापों को सात प्रमुख कार्यों में विभाजित किया जा सकता है। लूथर गलिक द्वारा अविष्कार किए गए एक जादूगरी सूत्र ''POSDCORB''पर आधारित वर्गीकरण का प्रयोग करके समाज कल्याण प्रशासन के कार्यों की व्याख्या की जाती है। इस सूत्र के अनुसार च् का अर्थ Palnning (नियोजन) से है, Organising (संगठन करना) से, Stffaing (कर्मचारीगण) से, Directing (निर्देशन करना) से Coordinating (समन्वय करना) से, Reporting (प्रतिवेदन) से, और Budgeting (बजट बनाने) से है। इसमें अब एक और कार्य जोड़ दिया गया है Evaluation and Feedback (मूल्यांकन एवं प्रतिपुष्टि) । समाज कल्याण प्रशासन की गतिविधियों में अनेक कार्यों की क्रमबद्ध श्रंखला के रूप में हैं, जिनमें प्रमुख निम्न तत्व सम्मिलित है-

2.4.1 नियोजन

नियोजन का आशय किसी कार्य की योजना से है। इसमें वर्तमान दशाओं का मूल्याँकन, समाज की समस्याओं एवं आवश्यकताओं की पहचान, लघु अथवा दीर्घ अवधि के आधार पर प्राप्त किये जाने वाले उद्देश्य एवं लक्ष्य तथा वाँछित साध्यों की प्राप्ति के लिए क्रियान्वित किये जाने वाले कार्यक्रम का चित्रण निहित है। भारत में योजना आयोग की स्थापना काल से तथा सन् 1951 में नियोजन प्रक्रिया के आरम्भ से समाज कल्याण नीतियों, कार्यक्रमों एवं प्रषासकीय संयत्र पर यद्यपि आरम्भ में अधिक बल नहीं दिया गया, परन्तु उसके बाद क्रमिक पंचवर्षीय योजनाओं में उन्हें उचित वाँछित स्थान दिया गया है। नियोजित विकास के गत चार दश कों के दौरान समाज कल्याण को योजना के एक घटक के रूप में महत्व प्राप्त हुआ है, जैसा योजनाओं में परिलक्षित है। उदाहरणतया प्रथम योजना में राज्यों से लोगों के कल्याण हेतु सेवाएँ प्रदान करने के लिए बढ़ती हुई योजना का आह्वान किया गया है। दूसरी पंचवर्षीय योजना में समाज के पीड़ित वर्गों को समाज सेवा प्रदान करने की धीमी गति के कारणों पर ध्यान दिया गया। तीसरी योजना में महिला एवं बाल देखभाल, सामाजिक सुरक्षा, विकलांग सहायता तथा स्वयंसेवी संगठनों को सहायता अनुदान पर बल दिया गया। चतुर्थ योजना में निराश्रित बच्चों की आवश्यकताओं को बल मिला। पाँचवी योजना में कल्याण एवं विकास सेवाओं के उचित समेकन को लक्ष्य बनाया गया। छठी योजना में समाज कल्याण के आकार चित्र के अन्दर बाल कल्याण को उच्च प्राथमिकता दी गई। सातवीं योजना में समाज कल्याण कार्यक्रमों को इस प्रकार से आकार दिया गया ताकि वे मानव संचालन विकास की दिषा में निर्देषित कार्यक्रमों के पूरक बने। तदुपरान्त आठवी, नवीं, दसवीं व ग्यारहवीं पंचवर्षीय योजनाओं में उत्त्रोत्तर वृद्धि करते हुए इन कल्याण कार्यक्रमों का विस्तार तथा नये कार्यक्रमों को सम्मिलित किया गया।

2.4.2 संगठन

संगठन से तात्पर्य किसी निष्चित उद्देष्यों हेतु मानवी कार्यक्रमों का संचेतन समेकन है। इसमें अन्र्तनिर्भर अंगों को क्रमबद्ध तौर पर इकट्ठा करके एक एकत्रित सृमष्टि का रूप दिया जाता है। भूतकाल में समाज कल्याण न्यूनाधिक एक छितरायी एवं तदर्थ राहत क्रिया थी जिसका प्रशासन किसी व्यापक संगठनात्मक संरचनाओं के बिना किया जाता था। जो कुछ भी कार्य किया जाना होता था, उसका प्रबन्ध सरल, तदर्थ, अनौपचारिक माध्यम से सामुदायिक एवं लाभ उपभोक्ताओं के स्तर पर ही हो जाता था। एक अन्य तत्व जो समाज कल्याण की अनौपचारिक एवं असंगठित प्रकृति का कारण बना, वह अशासकीय एवं स्वयंसेवी कार्य पर निर्भर था। सरकारी प्रक्रियाएँ जो विषाल संगठनात्मक संरचना तथा भारी नौकरषाही का रूप ले लेती है, से भिन्न अशासकीय क्रिया समाज कल्याण का मुख्य आधार रही जो अपनी प्राकृति के कारण अत्याधिक औपचारिक संगठित संयत्र पर कम आश्रित थी। परन्तु समाज कल्याण कार्यक्रमों के विस्तार तथा प्रभावित व्यक्तियों की संख्या एवं व्यथित धनराशि की मात्रा के कारण संगठन अपरिहार्य हो गया है।

संगठन औपचारिक एवं अनौपचारिक हो सकता है। औपचारिक संगठन में सहकारी प्रयासों की नियोजित प्रणाली है जिसमें प्रत्येक भागीदार की निष्चित भूमिका, कर्तव्य एवं कार्य होते हैं। परन्तु कार्यरत व्यक्तियों में सद्भावना एवं पारस्परिक विष्वास की भावनाएँ विकसित करने हेतु अनौपचारिक सम्बन्ध समाज कल्याण कार्यक्रमों के सुचारू संचालन के लिए आवश्यकहै।

संगठन के अन्तर्गत इसकी प्रभावी क्रियाशीलता के लिए कुछ सिद्धान्तों पर बल दिया जाता है। यह अपने सदस्यों के मध्य कार्य विभाजन करता है। यह विस्तृत प्रक्रियाओं के द्वारा मापक कार्यक्रमों की संस्थापना करता है, यह संचार प्रणाली की व्यवस्था करता है। इसकी पदोसोपानीय प्रक्रियायँ होती है जिससे सत्ता एवं दायित्व की

रेखाएँ विभिन्न स्तरों के मध्य से शीर्ष तथा नीचे की ओर आती जाती है तथा आधार चैड़ा एवं शीर्ष पर एक अकेला अध्यक्ष होता है। इसमें आदेश की एकता होती है जिसका अर्थ है कि कोई भी व्यक्ति कर्मचारी एक से अधिक तात्कालिक वरिष्ठ से आदेश प्राप्त नही करेगा, ताकि दायित्व स्पष्ट रहे और भ्राँति उत्पन्न न हो।

समाज कल्याण का स्वरूप संगठन कल्याण मंत्रालय के संगठन में देखा जा सकता है। इसमें मंत्री इसका राजनीतिक अध्यक्ष तथा सचिव प्रशासकीय मुख्य अधिकारी है। विभिन्न स्कीमों के लिए विभिन्न प्रभाग है, केन्द्रिय स्तर पर अधीनस्थ संगठन तथा राष्ट्रीय सामाजिक सुरक्षा संस्थान विकंलागों के लिए राष्ट्रीय आयोग एवं अल्पसंख्यक आयोग है। राज्यों एवं संघ क्षेत्रों के स्तरो पर समाज कल्याण विभाग का संगठन किया गया है। तथा केन्द्रीय एवं राज्य दोनों स्तरो पर समाज के विभिन्न वर्गो, यथा महिला, बालक, अनुसूचित जातियाँ एवं जनजातियाँ, भूतपूर्व सैनिकों के कल्याण हेतु निगमों की स्थापना की जाती है, स्वयंसेवी संगठनों में भारतीय बाल कल्याण परिषदमुख्य संस्था है। कल्याण मंत्रालय कल्याणकारी क्रियाकलापों में मूल एवं मुख्य रूप संलग्न स्वयं सेवी संगठनों को संगठनात्मक सहायता देती है जिनका क्रियाक्षेत्र उनकी विभिन्न गतिविधियों के समन्वय हेतु केन्द्रीय कार्यालय की माँग करता है। स्थानीय स्तर पर कल्याणकारी सेवाओं का संगठन विदेशों में उनके प्रतिभागों की तुलना में कमजोर है।

2.4.3 कर्मचारी प्रबन्ध

अच्छे संगठन की स्थापना के बाद, प्रशासन की दक्षता एवं गुणवत्ता प्रशासन में सुप्रस्थापित कार्मिको की उपर्युक्तता से प्रभावित होती है। दुर्बल तौर पर संगठित प्रशासन को भी चलाया जा सकता है यदि इसका स्टाफ सुप्रशिक्षित बुद्धिमान कल्पनाशील एवं लगनशील हो। दूसरी ओर, एक सुनियोजित संगठन का कार्य असंतोश जनक हो सकता है। इस प्रकार स्टाफ शासकीय एवं अशासकीय दोनों प्रकार के संगठनों का अनिवार्य अंगभूत आधार है। भर्ती, चयन, नियुक्ति, वर्गीकरण, प्रशिक्षण, वेतनमान एवं अन्य सेवा शर्तो का निर्धारण, उत्प्रेरणा एवं मनोबल, पदोन्नति आधार एवं अनुशासन, सेवानिवृत्ति, संघ एवं समिति बनाने का अधिकार इन सब समस्याओं की उचित देख भाल आवश्यक है। जिससे कि कर्मचारी अपने कार्यो को सच्ची लगन से निष्पादन एवं संगठन का अच्छा चित्र प्रस्तुत कर सके।

2.4.4 निर्देशन

निर्देशन से तात्पर्य है -संगठनों के कार्यक्रमों के क्रियान्वयन हेतु आवश्यक निर्देश एवं दिशा निर्देश जारी करना तथा बाधाओं को दूर करना। कार्यक्रम के क्रियान्वन से सम्बन्ध निर्देशों में क्रियाविधि नियमों का भी उल्लेख होता है ताकि निर्धारित उदेद्श्य की उपलब्धि सक्षम एवं सुगम ढ़ग से हो सके। क्रियाविधि नियमों में यह भी वर्णित किया जाता है कि अभिकरण की किसी विशिष्ट गतिविधि से सम्बन्धित किसी प्रार्थना अथवा जाँच-पड़ताल पर किस प्रकार कार्यवाही की जाए। समाज कल्याण प्रशासन में निर्देश अपरिधर्म है। क्योंकि ये लाभ उपभोक्ताओं को कल्याण सेवाएँ प्रदान करने में संलग्न अधिकारियों को दिशा निर्देश तथा योग्य प्रार्थियों को कोई लाभ दिये जाने से पूर्व अनुपालित क्रियाविधि के बारे में जानकारी प्रदान करते है। परन्तु क्रियाविधि की कठोरता से अनुपालन लालफिता शाही को जन्म दे सकता है जिसमें जरूरतमंद व्यक्तियों को वाँछित लाभ प्रदान करने में अनावश्यक देरी तथा परेशानी हो जाती है। समाज कल्याण प्रशासन के कार्मिकों द्वारा अपने दायित्व पर कोई निर्णय लेने से बचना तथा दायित्व दूसरे पर थोपना व्यक्तियों एवं समुदायों की प्रभावी सेवा को बाधित करने वाला दोष है जिसके विरूद्ध सुरक्षा की जानी आवशयक है।

2.4.5 समन्वय

प्रत्येक संगठन में कार्य विभाजन एवं विशिष्टिकरण होता है। इससे कर्मियों के विभिन्न कर्तव्य नियत कर दिए जाते है तथा उनसे प्रत्याशा की जाती है कि वे अपने सहकर्मियों के कार्य में कोई हस्तक्षेप न करे। इस प्रकार प्रत्येक संगठन में कर्मिकों के मध्य समूह भावना से कार्य करने तथा कार्यो के टकराव एवं दोहरेपन को दूर करने का प्रयास किया जाता है। कर्मचारियों में सहयोग एवं टीम वर्क को विश्वस्त करने के इस प्रबन्ध को समन्वय कहते है। इसका उद्देश्य सांमजस्य, कार्य की एकता एवं संघर्ष से बचाव को प्राप्त करना है। इसके उद्देश्य को दृष्टि में रखते हुए, मूने एवं रेले समन्वय को संगठन का प्रथम सिद्धान्त तथा अन्य सब सिद्धान्तों को इसके अधीन समझते है। क्योंकि यह संगठन के सिद्धान्तों का यौगिक तौर पर प्रकटीकरण करता है। चाल्सवर्थ के अनुसार ''समन्वय का अर्थ है उपक्रम के उद्देश्यको प्राप्त करने के लिए कई भागों को एक सुव्यवस्थित समग्रता में समेकन। न्यूमैन के अनुसार ''समन्वय का अर्थ है प्रयासों का व्यवस्थित ढंग से मिलाना ताकि निर्धारित उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए निष्पादन कार्य की मात्रा तथा समय को ठीक ढ़ग से निदेशित किया जा सके।

समाज कल्याण में समन्वय का केन्द्रीय महत्व है क्योंकि समाज कल्याण कार्यक्रमों में अनेक मंत्रालय, विभाग एवं अभिकरण कार्यरत है जिनमें कार्य के टकराव एवं दोहरेपन के दोष पाये जाते है जिससे मानव प्रयास एवं संसाधनों का अपव्यय होता है। इस समय केन्द्रीय स्तर पर कल्याण सेवाओं में कार्यरत 6 मंत्रालय है तथा कल्याण प्रशासन के क्रियान्वन में विषयों की छिन्न भिन्नता, अनुदान देने वाले निकायों की बहुलता, संचार में देरी तथा सहयोगी प्रयासों के प्रति विमुखता अधिक दिखाई देती है। इसी प्रकार, राज्य स्तर पर विभिन्न राज्यों में सात में सत्रह तक विभाग कल्याणकारी मामलों में सम्बद्ध है एवं कल्याणकारी सेवाओं के कार्यक्रमों में उपागम की एकता, संगठन में समरूपता एवं क्रियान्विति में समन्वय का अभाव पाया जाता है। स्वयंसेवी संगठन भी कल्याणकारी सेवाओं में कार्यरत है। उनके मध्य तथा उनके एवं सरकारी विभागों के मध्य समन्वय की समस्याएँ जटिल से जटिलतर होती जा रही है, जैसे-जैसे सहायता अनुदानों में उदारता आने के कारण उनकी संख्या में निरन्तर वृद्धि होती जा रही हैं।

विभिन्न मंत्रालयों, विभागों एवं स्वयंसेवी संगठनों के मध्य समन्वय को अंतर्विभागीय एवं विभागांतर्गत सम्मेलनों, विभिन्न हित समूहों के गैर-सरकारी प्रतिनिधियों को परामर्श हेतु सम्मिलित करके प्राप्त किया जा सकता है। अतः कल्याण मंत्रालय राज्य सरकारों एवं केन्द्रशासित प्रदेशों के समाज कल्याण मंत्रियों तथा विभाग सचिवों का वार्षिक सम्मेलन समाज कल्याण के विविध मामलों एवं कार्यक्रमों पर विचार विमर्श एवं उनके प्रभावी क्रियान्वयन को आश्स्त करने तथा दोहरेपन से बचने हेतु बुलाता है। संस्थागत अथवा संगठनात्मक विधियों, यथा अन्त्रविभागीय समितियों एवं समन्वय अधिकारियों, प्रक्रियाओं एवं विधियों के मानकीकरण, कार्यकलापों के विकेन्द्रीकरण आदि के द्वारा भी समन्वय प्राप्त किया जा सकता है। 1953 में स्थापित केन्द्रीय समाज कल्याण बोर्ड जिसमें सरकारी अधिकारी तथा गैर-सरकारी समाजिक कार्यकर्ता सम्मिलित है, को समाज कल्याण कार्यक्रमों में कार्यरत सरकारी संगठनों एवं स्वयंसेवी संगठनों के मध्य उचित समन्वय प्राप्त करने का एक माध्यम बनाया गया है। राज्यीय समाज कल्याण परामर्शदात्री बोर्डो को भी राज्य सरकार एवं केन्द्रीय समाज कल्याण बोर्ड के कार्यकलापों के मध्य अन्य कार्यों सहित समन्वय लाने तथा दोहरेपन को दूर करने का कार्य सुर्पुद किया गया। परन्तु समन्वय हेतु इन संस्थागत प्रबन्धों के बावजूद भी सरकारी एवं स्वयंसेवी संगठनों के क्षेत्राधिकारों मे कल्याण कार्यक्रमों में टकराव एवं दोहराव के दोष पाये जाते है। सरकारी एवं स्वयंसेवी संगठनों के कार्यकलापों के क्षेत्रों का सुस्पष्ट सीमांकन, कल्याण सेवाओं की समेकित विकास नीति एवं प्रेरक नेतृत्व कल्याण सम्बन्धी उद्देश्य अधिकतम प्राप्ति हेतु उचित समन्वय विश्वस्त करने में काफी सहायक होंगे।

2.4.6 प्रतिवेदन

प्रतिवेदन का अर्थ है, वरिष्ट एवं अधिनस्थ अधिकारियों को गतिविधियों से सूचित रखना तथा निरीक्षण, अनुसंधान एवं अभिलेखों के माध्यम से तत्सम्बधी सूचना एकत्रित करना। प्रत्येक समाज कल्याण कार्यक्रम के कुछ लक्ष्य एवं उद्देश्यहोते है। संगठन की सोपानात्मक प्रणाली में मुख्य कार्यकारी निचले स्तरों पर कार्य कर रहे कर्मचारियों की नीति, वित्तीय परिव्यय एवं निर्धारित उद्देश्यकी प्राप्ति हेतु समय सीमा से अवगत कराता है अधीनस्थ कर्मचारी उच्च अधिकारियों को समय-समय पर मासिक, त्रैमासिक एवं वार्षिक, लक्ष्यों के सापेक्ष में प्राप्त उपलब्धि, व्ययित राशि , एवं सामने आयी समस्याओं, यदि कोई है, तथा इन समस्याओं के समाधान हेतु उनका मार्गदर्षन प्राप्त करने के लिए रिर्पोट भेजते है। विभिन्न मामलों के समाधान हेतु अभिकरण एवं अन्तर्भिकरण स्तर पर आयोजित सम्मलनों एवं विचार विमर्षो की सूचना भी भेजी जाती है। उच्च अधिकारी अधीनस्थ कार्यालयों का निरीक्षण उनके कार्यकलापों की जानकारी प्राप्त करने एवं अनियमितताओं को पकड़ने तथा इनको भविष्य में दूर करने हेतु सुझाव देने के लिए समय-समय पर करते है। कभी-कभी किसी शिकायत की प्राप्ति पर समाज कल्याण अभिकरणों की गतिविधियों की जाँच पड़ताल करनी होती है जिसके निष्कर्षो से सम्बन्धित अधिकारियों को सूचित किया जाता है। कुछ कल्याण संगठन शोधकार्य भी करते हैं जिसके निष्कर्षों एवं सुझावों को नीतियों एवं कार्यक्रमों में संषोधन अथवा अन्य नये कार्यक्रमों के निर्माण में प्रयोग हेतु प्रतिवेदन कर दिया जाता है। सभी समाज कल्याण एजेंन्सिया, बिना किसी अपवाद के सम्बन्धित मंत्रालय विभाग को अपना वार्षिक प्रतिवेदन प्रस्तुत करते है जो राज्य के अध्यक्ष को विधानमंडल की सूचना हेतु अन्ततः भेज दी जाती है। विभिन्न प्रकार की रिपोर्टो के द्वारा जनता को कल्याण एजेन्सियों के क्रियाकलापों की सूचना मिल जाती है। इस प्रकार रिर्पाटिंग किसी भी समाज कल्याण प्रशासन का एक महत्वपूर्ण घटक है।

2.4.7 वित्तीय प्रबन्ध

बजट से अभिप्राय उस प्रक्रिया से है जिसके द्वारा सार्वजनिक अभिकरण की वित्तीय नीति कर निर्माण, विधिकरण एवं क्रियान्वन किया जाता है। व्यक्तिवाद के युग में, बजट अनुमानित आय एवं व्यय का साधारण विवरण मात्र था। परन्तु आधुनिक कल्याण राज्य में सरकार के क्रियाकलापों में तेजी से वृद्धि हो रही है जो सामाजिक जीवन के सभी पक्षों को आवंटित करती है। सरकार अब सकारात्मक कार्यों के द्वारा नागरिकों के सामान्य कल्याण को उत्पन्न करने का एक अभिकरण है। अतएव बजट को अब एक प्रमुख प्रक्रिया समझा जाता है जिसके द्वारा जनसंसाधनों के प्रयोग केा नियोजित एवं नियंत्रित किया जाता है। बजट निर्माण वित्तीय प्रबन्ध का एक प्रमुख घटक है जिसमें विनियोग अधिनियम, व्यय का कार्यकारिणी द्वारा निरीक्षण, लेखा एवं रिर्पोटिंग प्रणाली का नियंत्रण, कोश प्रबन्ध एवं लेखा परीक्षण सम्मिलित है।

2.4.8 मूल्यांकन एवं प्रतिपुष्टि

सामाजिक संस्थाओं के प्रशासकीय कार्यों में मूल्यांकन एवं प्रतिपुष्टि भी एक महत्वपूर्ण कार्य है। मूल्यांकन से इस बात का पता चलता है कि संस्था के सभी भाग अपने-अपने उद्देश्यों को कहां तक पूरा कर रहे हैं तथा प्रतिपुष्टि द्वारा इस बात का पता चलता है कि कहां तक सेवाओं का लाभ प्राप्त हुआ हैं।

2.5 जॉन किडने द्वारा प्रस्तुत समाज कल्याण प्रशासन के प्रकार्य (Functions of Social Welfare Administartion by John Kidnigh)

जॉन किडने के अनुंसार संस्थाओं के कार्यों को नौ प्रकार की क्रियाओं में विभाजित किया जा सकता है:-

2.5.1 तथ्य संकलन

तथ्य संकलन का अर्थ है समुदाय की सामाजिक एवं स्वास्थ्य संबंधी दशाओं के विषय में अनुसंधान कार्य के लिए तथ्य संकलन करना। विभिन्न सामाजिक समस्याओं का समाधान करने के लिए आवश्यक है कि पहले समस्या के पहलुओं का अध्ययन किया जाए। प्रशासकीय कार्य में तथ्य संकलन इसी उद्देश्य की पूर्ति के लिए किया जाता है। सरकारी संस्थाओं द्वारा किए जाने वाला अनुसंधान कार्य और इसके परिणाम जनता के सामने प्रस्तुत किये जाते हैं, विधान सभा के सामने भी इन परिणामों को प्रस्तुत किया जाता है जिससे विधानसभा इस समस्या के समाधान के लिए उचित कार्यवाही करे। निजी संस्थाएं अपने अनुसंधान कार्य के परिणामों को जनता के सम्मुख रखती है जिससे इन समस्याओं का समाधान जनता के सहयोग और संयुक्त प्रयासों द्वारा किया जा सके।

2.5.2 सामाजिक सेवाओं का विश्लेषण

जिन सामाजिक समस्याओं के समाधान के प्रयास समाजसेवी संस्थाएं करती हैं उनका विश्लेषण सामाजिक दशाओं में सुधार लाने और मानवीय आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए आवश्यक होता है। इस विश्लेलेश ण से यह भी पता चलता है कि वर्तमान सामाजिक सेवाएं कहां तक पर्याप्त है और किस प्रकार की और कितनी अन्य सेवाओं की आवश्यकता है।

2.5.3 उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए उपयुक्त का निर्धारण

विभिन्न सामाजिक सेवाओं का विश्लेलेश ण करने के बाद, समाज सेवा संस्था यह निश्चित करती है कि अपने साधनों केो देखते हुए किस प्रकार की कार्यविधियां निर्धारित की जाएं, क्या कार्यवाही की जाए और कर्मचारियों एवं साधनों का रचनात्मक प्रयोग किया प्रकार किया जाए। इस विषय में निर्णय लिया जाता है।

2.5.4 साधनों का नियोजन और विभाजन

संस्था अपने उद्देश्यों को सामने रखते हुए अति समीप और दीर्घकालीन लक्ष्यों का स्पष्टीकरण करती है और नीतियों को निर्धारित करती है जिससे सेवार्थियों की आवश्यकताएं पूरी की जा सके।

2.5.5 कर्मचारियों के बीच उत्तरदायित्व का विभाजन और अधिकारियों की सीमाओं का निर्धारण

प्रत्येक कर्मचारी के उत्तरदायित्व और उसके अधिकारों के विषय में स्पष्टता की जाती है जिससे प्रत्येक कर्मचारी अपनी भूमिका का ठीक से सम्पादन कर सके।

2.5.6 कर्मचारियों की व्यवस्था

संस्था के लिए कर्मचारियों की उचित व्यवस्था करना अधिशासक काकार्य होंता है। कर्मचारियों की भर्ती, पदावधि, पदोन्नित, अवकाश एवं कार्य सम्बन्धी दशाओं के सम्बन्ध में निश्चित नीति का निर्माण किया जाता है। कर्मचारी प्रशासन द्वारा निवृत्त, पदच्युति, सेवाकालीन प्रशिक्षण आदिके लिए नियम बनाये जाते हैं।

2.5.7 कर्मचारियों एवं आर्थिक साधनों का पर्यवेक्षण एवं नियंत्रण

संस्था के कार्यों पर नियंत्रण रखने से उद्देश्यों की प्राप्ति सरलता से संभव हो जाती है। उनके कार्य का पर्यवेक्षण किया जाता है,कर्मचारी बैठक की जाती है और विचार-विमर्श कियाजाता है जिससे कार्यों पर नियंत्रण रखा जा सके।

2.5.8 अभिलेखन एवं लेखांकन

निजी या सरकारी सभी प्रकार की संस्थाओं द्वारा अपनी क्रियाओं के अभिलेख रखने और आय-व्यय का लेखांकन रखने की आवश्यकता पड़ती है। यह अभिलेख लेखांकन प्रबन्ध सीमित या परिपरिषदया विधान सभा के सम्मुख रखे जाते हैं। इन्हीं अभिलेखों का प्रयोग अनुसंधान कार्य के लिए किया जाता है जिसके आधार पर संस्था की नीतियों में उचित परिवर्तन किये जाते हैं।

2.5.9 आर्थिक साधनों की उपलब्धि

सभी संस्थाओं को आर्थिक साधन जुटाने पड़ते हैं। संस्था के आर्थिक साधनों की उपलब्धि संस्था की रचना, आकार और प्रकार पर आधारित होती है। सरकारी संस्थाएं इसके लिए केन्द्रीय, राज्य एवं स्थानीय सरकारों पर निर्भर रहती है। निजी संस्थाएं धन एकत्र करने के एि धनदान के अच्छे आन्दोलन या कम्युनिटी चेस्ट पर आधारित होती है। धन को संस्था की नीतियों एवं नियमों के अनुसार व्यय किया जाता है। संस्था की विभिन्न शाखाओं एवं विभागों में धन का उचित वितरण किया जाता है जिससे वह कार्यक्षमता के साथ अपना-अपना कार्य पूरा कर सकें।

2.6 हैराल्ड सिलवर द्वारा प्रस्तुत समाज कल्याण प्रशासन के कार्य

हैराल्ड सिलवर ने प्रशासन के नौ प्रमुख कार्य या उत्तरदायित्व बताएं है।

- उद्देश्यों, कार्यों एवं नीतियों का निर्धारण एवं स्पष्टीकरण
- साधनों को जुटाना और बनाये रखना
- कार्यक्रम काविकास
- समन्वय
- नेतृत्व, निर्देशन और पर्यवेक्षण
- नियोजन, मानकीकरण और मूल्यांकन
- अभिलेखन, लेखांकन और संबंधित क्रियाकलाप
- संसाधन प्रक्रमण या नेमी कार्यविधियां
- जनसंपर्क

उपरोक्त प्रशासकीय कार्य या उत्तरदायित्व छः प्रमुख क्षेत्रों के संदर्भ में सम्पादित किये जाते हैं:-

संगठनात्मक संरचना

समाज कार्य संस्थाओं के माध्यम से अभ्यास में लाया जाता है। यह संस्थाएं चार तत्व लिये होती है: (क) अन्तिम नियंत्रण का समूह अर्थात् मतदाता, संस्था के सदस्य आदि (ख) प्रबन्ध मण्डल (ग) अधिशासी अधिकारी जो संस्था का प्रमुख प्रशासक होता है, जिसकी नियुक्ति प्रबन्ध मण्डल द्वारा की जाती है और जो इसी के प्रति उत्तरदायी होती है, (घ) कर्मचारीगण जिसमें उपअधिशासक, पर्यवेक्षक व्यावसायिक समाज कार्य अभ्यासकर्ता लिपिक एवं अन्य कार्यकर्ता आदि आते हैं।

कार्मिक कार्य

जिसमें संस्था की कार्मिक नीतियों का प्रतिपालन आता है अर्थात् कर्मचारियों की भर्ती, सेवायुक्ति, पदावधि, वेतन कार्य सम्बन्धी दशाएं, निवृत्ति शिकायत निवारण पद्धति, कार्मिक अभिलेखें का रख-रखाव, पर्यवेक्षण, मूल्यांकन सेवाकालीन प्रशिक्षण आदि।

- स्थिर यंत्र प्रशासन, साज-सामान और साधन उपलब्धि
- कोषीय (राजकोषीय) प्रशासन एवं नियंत्रण
- कार्यालय प्रशासन
- संस्था के बाहरी सम्बन्ध

संस्था से संबंधित प्रत्येक व्यक्ति प्रशासकीय उत्तरदायित्व निभाता है परन्तु अधिशासक का अपनाविशेष उत्तरदायित्व होता है। उसकी भूमिका या कार्यों में प्रशासन के सभी पक्षों की झलक मिलती है। कर्मचारियों सम्बन्धी उसके उत्तरदायित्व के मुख्य तीन पक्ष हैं: (क) कार्मिक नीतियां, (ख) कर्मचारी वर्ग में समन्वय और उनका विकास, (ग) संदेश वाहन चैनल्स या सारणियां अर्थात् अधिशासक और कर्मचारियों के बीच पारस्परिक संदेश वाहन का मार्ग।

2.7 समाज कल्याण प्रशासन के विषय-क्षेत्र (Scope of Social Welfare Administartion)

समाज कल्याण प्रशासन के विषय विभिन्न प्रकृति के है। यह प्रमुख तौर पर इन विषयों से संम्बन्धित है:-

1. सामाजिक समस्याएँ:-उनके कारणों का निरूपण एवं समाज सुधार तथा सामाजिक विधान के माध्यम से उनका उपचार, सामाजिक कुरीतियों को दूर करने हेतु निर्मित कानूनों की अप्रभाविकता के कारणों का पता लगाना तथा सामाजिक समस्याओं के बारे में जनचेतना तैयार करके इन कानूनों को अधिक प्रभावी बनाने हेतु सुझाव देना।

2 समाज सेवाएं:-स्वास्थ्य, शिक्षा, आवास आदि की व्यवस्थाओं द्वारा सामान्य जनता की कुश लता को लक्ष्य बनाना तथा अलाभान्वित, विशेषाधिकार रहित एवं समाज के पीड़ित वर्गां जैसे महिला एवं बच्चे, वृद्ध एवं विकलांग जन का सुधार।

.3 सामाजिक सुरक्षा :-बेरोजगारी, अयोग्यता, दुर्घटना के कारण मृत्यु, वृद्धायु के कारण आय की हानि की सामाजिक बीमा एवं सामाजिक सहायता के द्वारा क्षतिपूर्ति।

4 .समाज कार्य :-सामाजिक वैयक्तिक सेवा कार्य, सामाजिक सामूहिक सेवा कार्य एवं सामुदायिक संगठन की विधियों तथा अनुसंधान एवं प्रशासन की क्रियाशील प्रक्रियाओं के माध्यम से सामाजिक प्रकार्यता में वृद्धि करके लोगों को उनकी वैयत्तिक, पारिवारिक एवं सामुदायिक समस्याओं के सामाधान में सहायता करना ।

5 सामाजिक नीति :-सामाजिक कार्य के माध्यम से लोगों के कल्याण हेतु लक्ष्यों, उद्देष्यों एवं ध्यायों को आकारित करना।

8. समाज कल्याण :-केन्द्र, राज्य एवं स्थानीय सरकार के विभिन्न स्तरों पर समाज कल्याण कार्यक्रमों एवं समाज सेवाओं की संगठनात्मक एवं प्रषासकीय संरचना।

9. स्वयंसेवी संगठनों की भूमिका :-स्वयं अथवा सरकार द्वारा प्रायोजित किये जाने पर सहायता अनुदानों के माध्यमों से परियोजनाओं को क्रियान्वित एवं उनके संगठन एवं प्रभाविकता का अध्ययन कर सरकारी अभिकरणों के समाजसेवा एवं समाज कल्याणकारी सेवाएं प्रदान करने हेतु प्रयासों को पूरा करने में भूमिका।

10 अंतर्राष्ट्रीय समाज कल्याण अभिकरणों की भूमिका:-संयुक्त राष्ट्र आर्थिक एवं सामाजिक परिषद, प्रादेशिक आयोग, विषिष्ट अभिकरण श्रम संगठन, विश्व स्वास्थ्य संघ, यूनेस्कों, यूनीसेफ, आदि तथा अन्तर्राष्ट्रीय अशासकीय अभिकरण जैसे रैडक्रास , आक्सफैम, केयर, प्रादेशिक क संघ जैसे सार्क एवं व्यक्तिगत सरकार संगठन जैसे USAID, NORADODA, आदि विकासशील देशों में सामाजिक कल्याण को उन्नति करने के लिए उनके विभिन्न कल्याणकारी कार्यक्रमों हेतु वित्तिय एवं तकनीकि सहायता प्रदान करते है।

11 वित्तीय प्रशासन में भूमिका:-वित्तीय प्रशासन में सार्वजनिक धन को एकत्रित करने, बजट बनाने, विनियोजित करने एवं व्यय करनेए सम्मिलित है। लेखा रखने एवं लेखा परीक्षण से सम्बन्धित सभी क्रियाएं सम्मिलित है। कल्याणकारी राज्य को अपने नागरिकों के कल्याण हेतु अनेक प्रकार के क्रियाकलाप करने होते है। जिनके लिए इसे अपार धनराशी व्यय करनी होती है। वित्तीय प्रबन्ध इस बात को सुनिष्चित करता है कि लोक निधियों का सही तौर पर उपयोग हो तथा कोई अपव्यय न हो। यह बात समाज कल्याण प्रशासन के लिए और भी अधिक महत्वपूर्ण है क्योंकि इसके पास अपने आपार दायित्वों एवं कल्याणकारी कार्या को पूरा करने के लिए सीमित वित्तीय संसाधन होते है।

.**12 कार्मिक प्रशासन में भूमिका**:- कार्मिक प्रशासन में भर्ती सम्बन्धी नीतियाँ, कार्यो का सुनिष्चयीकरण कार्य वर्गीकारण, कैडर निर्माण प्रशिक्षण कार्यक्रमों, आजीविका विकास, सेवा सुरक्षा, व्यवसायिक मानकों का निर्धारण, सेवानिवृत्त योजनाएँ, प्रबन्धकों के साथ सामूहिक तौर पर सौदेबाजी करने के लिए संघ एवं समुदाय बनाने का अधिकार, मूल्यांकन आदि सम्मिलित है।

.13 जन सम्पर्क:-सरकार एवं स्वयंसेवी अभिकरण द्वारा किए जा रहे सामाजिक कल्याण कार्यक्रमों एवं समाज सेवियों के बारे में रेडियो, दूरदर्शन , प्रेस के माध्यम से लोगो के मध्य सूचना प्रसार एवं इस बारे में अनुकूल चित्र प्रस्तुत करना तथा जनता एवं लाभ उपभोक्ताओं के रूप में प्रतिपुष्टि प्राप्त करना ताकि कल्याण नीतियाँ एवं कार्यक्रमों में बेहतर सेवाएँ प्रदान हेतु आवश्यक संषोधन किये जा सके।

14 जन सहभाग -- किसी भी कार्यक्रम की सफलता के लिए जनता एवं उनके प्रतिनिधियों को सम्मिलित करना अनिवार्य है। अतः उनके कल्याण हेतु चलायें जा रहे कार्यक्रमों एवं नीतियों के क्रियान्वयन में उनको सहयोगी बनाकर उनके विश्वास एवं न्यास को जीतना होगा।

2.8 सारांश (Summary)

सारांश के रूप में समाज कल्याण प्रशासन एक वैज्ञानिक पद्धति पर आधारित व्यवसायिक तथ्यों की पूर्ति हेतु कार्य का एक ढंग है जिसमें व्यक्ति, समूह, समुदाय, संगठन, सरकारी संगठन, गैर सरकारी संगठन आदि की महत्वपूर्ण भूमिका है। स्वैच्छिक संस्थाओं की स्थापना को प्रोत्साहित करना है।

2.9 अभ्यासार्थ प्रश्न (Question for Practice)

(1) समाज कल्याण प्रशासन के सिद्धान्तों का उल्लेख कीजिए।

(2) समाज कल्याण प्रशासन के प्रकार्यों को समझाइये।

(3) समाज कल्याण प्रशासन से सम्बन्धित विषय क्षेत्रों को स्पष्ट कीजिए।

(4) प्रशासन से सम्बन्धित विभिन्न अवधारणाओं का उल्लेख कीजिए।

(5) निम्नलिखित पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए।

(अ) कर्मचारी प्रबन्ध

(ब) समाज कल्याण प्रशासन

(स) प्रतिवेदन

(द) जॉन किडने द्वारा प्रस्तुत समाज कल्याण प्रशासन के कार्य

2.10 सन्दर्भ पुस्तकें (Reference Books)

7. Singh, S.k.and Mishra, P.D.k.Samaj Karya: Itihas, Darshan Evam Pranaliyan, NRBC, Lucknow, 2004.

8. Soodan, K.S.k.Samaj Karya: Siddhant evam Abhyas, N.k.S.k.Publication, Lucknow, 2011.

9. Sharma, P.k.and Sharma, H.k.Lok Prashashan: Siddhant evam Vyavhar, College Book Depot, New Delhi, 1996.

10. Singh, S.k.and Soodan, K.S.k.(ed.), Horçon of Social Work, Jyotsna Publication, Lucknow, 1986.

11. Kulkarni, V.k.M.k.Essay on Social Administration, Delhi Research Publication in Social Sciences, 1972.

12. Singh, D.k. K.k.Bharat mein Samaj Kalyan: Avdharna, Prashsshan evam Karyakram, NRBC, Lucknow, 2012.

इकाई-3

समाज कल्याण प्रशासनः स्वयंसेवी एवं गैर सरकारी संगठन

इकाई की रूपरेखा

3.0 उद्देश्य

3.1 प्रस्तावना

3.2 भूमिका

3.3 समाज कल्याण प्रशासन एवं स्वयंसेवी संगठन

3.4 समाज कल्याण प्रशासन एवं गैर सरकारी संगठन

3.5 संगठन की स्थापना

3.6 सारांश

3.7 अभ्यास प्रश्न

3.8 सन्दर्भ पुस्तकें

3.0 उद्देश्य

प्रस्तुत अध्याय के अध्ययन के पश्चात आप –

1. स्वयं सेवी संगठन के अर्थ एवं विशेषताओं को जान सकेंगे |
2. गैर सरकारी संगठन के अर्थ ,प्रकार ,भूमिका तथा आवश्यक निपुणताओं का ज्ञान हो सकेगा |
3. समाज कल्याण प्रशासन में स्वयंसेवी तथा गैर सरकारी संगठनों की भूमिका एवं पंजीकरण की प्रक्रिया से अवगत हो जायेंगे |

3.1 प्रस्तावना

समाज कल्याण प्रशासन में स्वयंसेवी तथा गैर सरकारी संगठनों की भूमिका अत्यन्त महत्वपूर्ण होती है। समाज कल्याण सेवा के आयोजन करने के लिए स्वयंसेवी तथा गैर सरकारी संगठनों की पूर्व निर्धारित नीति और उद्देश्य, आयोजित कार्यक्रम, समुचित कर्मचारी-वर्ग प्रयोजनात्मक विधियां होती हैं और जिसे समुदाय का सहयोग प्राप्त होता है। समाज कल्याण के इन लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए केन्द्रीय, प्रान्तीय और स्थानीय शासन का यह कर्तव्य है कि वे अपने क्षेत्रों में उचित संगठनात्मक और प्रशासनिक अभिकरण प्रदान करे। साथ ही वे पिछले अनुभवों के प्रकाष में अपनी संरचनाओं, पद्धतियों प्रक्रियाओं में उचित परिवर्तन करे जिससे वे अपने लक्ष्यों की और अधिक सक्षमता और प्रभावशीलता से बढ़ सके।

3.2 भूमिका

भारत में समाज सेवा की परंपरा बहुत प्राचीन है। प्राचीन युग में स्वैच्छिक कार्यकर्ता ही जरूरतमंदों के लिए सेवाओं की व्यवस्था करते थे। उन दिनों वेतन पाने वाले प्रशिक्षित कार्यकर्ता नहीं थे। उस समय संस्थायें भी छोटी थी। अब सभ्यता के विकास के साथ-साथ सामाजिक सेवाओं का संचालन जटिल होता जा रहा है। सामाजिक विज्ञान का विकास हो रहा है। स्वैच्छिक कार्यकर्ताओं के पास अब उतना समय भी नही है जितना पहले होता था। इसके विपरीत संस्थाओं का कार्य क्षेत्र बढ़ रहा है। संस्थाओं में प्रषिक्षित कार्यकर्ताओं की नियुक्ति की जाने लगी है। अतः अवैतनिक स्वैच्छिक कार्यकर्ताओं की जिम्मेदारियों में कुछ परिवर्तन आ रहें है। कार्यकर्ता अब नीति निर्धारण, आयोजन तथा पर्यवेक्षक का कार्य भार सँभाल रहे है। क्षेत्र में कार्य करने की जिम्मेदारी वेतन पाने वाले प्रशिक्षित कार्यकर्ताओं को दी जा रही है।

3.3 समाज कल्याण प्रशासन एवं स्वयंसेवी संगठन

स्वैच्छिक संस्था समुदाय द्वारा आत्म सहायता के सिद्धान्त पर समुदाय से संग्रहित धनराशि से चलाई जाने वाली संस्था होती है। स्वैच्छिक संस्था समुदाय द्वारा बनाई गई उपविधियों द्वारा संचालित की जाती है और समुदाय में संग्रहित धन से इसका खर्च चलता है। यद्यपि स्वैच्छिक संस्था सरकारी निधि से अनुदान भी प्राप्त करती है, तथापि वह समाज कल्याण सेवा के आयोजन करने के लिए एक ऐसी सामाजिक संस्था है, जिसकी पूर्व निर्धारित नीति और उद्देश्य, आयोजित कार्यक्रम, समुचित कर्मचारी-वर्ग प्रयोजनात्मक विधियां होती हैं और जिसे समुदाय का सहयोग प्राप्त होता है। स्वैच्छिक संस्था उन व्यक्तियों के समूह को कहते हैं, जो अपने आपकों विधिवत् निगमित निकाय के रूप में संगठित करते हैं। इसका गठन स्वतः स्फूर्त होता है बिना किसी बाह्य नियंत्रण और हस्तक्षेप के सदस्यों द्वारा ही इसका संचालन किया जाता है। यह पूर्व निर्धारित उद्देश्यों की पूर्ति के लिए कार्यक्रम बनाती है, जिस पर व्यय समुदाय से संगृहीत निधि और सरकारी अनुदान द्वारा प्राप्त धनराशि में से किया जाता है। समाज कल्याण के इन लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए केन्द्रीय, प्रान्तीय और स्थानीय शासन का यह कर्तव्य है कि वे अपने क्षेत्रों में उचित संगठनात्मक और प्रशासनिक अभिकरण प्रदान करे। साथ ही वे पिछले अनुभवों के प्रकाश में अपनी संरचनाओं, पद्धतियों प्रक्रियाओं में उचित परिवर्तन करे जिससे वे अपने लक्ष्यों की और अधिक सक्षमता और प्रभावशीलता से बढ़ सके।

समाज कल्याण का मूल प्रारम्भ स्वयंसेवी क्रिया में देखा जा सकता है जिसने इसे पिछली अनेक शताब्दियों से वर्तमान तक जीवित रखा है। शब्द ''Voluntarism'' लैटिन भाषा के शब्द Volunts से लिया गया है जिसका अर्थ इच्छा अथवा स्वतंत्रता से है। लास्की ने समुदाय की स्वतंत्रता को रूचिगत उद्देश्यों के वर्द्धन हेतु व्यक्तियों के इकटठा होने के मान्यता प्राप्त कानूनी अधिकार के रूप में परिभाषित किया है। भारतीय संविधान की धारा 19 (1) (c) के अन्तर्गत भारतीय नागरिकों को समुदाय बनाने का अधिकार प्राप्त है। समुदाय की स्वतंत्रता मानव स्वतंत्रताओं में प्रमुख है। यह मनुष्यों के लिए किसी सामान्य उद्देश्य के लिए समुदायित होने की व्यापक स्वतंत्रता है। वे किसी कार्य को स्वयं करने, अथवा अत्याचार का विरोध करने अथवा किसी महत्वपूर्ण अथवा छोटे, सामान्य अथवा लोक उद्देश्य का अनुधावन करने के लिए इकट्ठा होने की इच्छा रख सकते हैं। स्वयंसेवी संगठन को विभिन्न प्रकार से परिभाषति किया गया है:-

लार्ड बीवरीज के अनुसार, ''सही तौर पर स्वयं सेवी संगठन एक ऐसा संगठन है जिसका आरम्भ एवं प्रशासन इसके सदस्यों द्वारा किसी वाह्य नियंत्रण के बिना किया जाता है। चाहे इसके कार्यकर्ता वैतनिक अथवा अवैतनिक हों।''

माइकेल वेंटन ने इसकी परिभाषा एक सामान्य हित अथवा अनेक हितों के अनुधावन हेतु संगठित समूह के रूप की है।

डेविड एल0 सिल्स के शब्दों में, ''स्वयंसेवी संगठन इसके सदस्यों के कुछेक सामान्य हितों की प्राप्ति हेतु राज्य नियंत्रण के बिना स्वैच्छिक सदस्यता के आधार पर संगठित व्यक्तियों का समूह है।''

स्वयंसेवी संगठन की व्यापक परिभाषा का प्रयास करते हुए प्रो0 एम0 आर0 इनामदार का कथन है कि स्वयंसेवी संगठन को समुदाय के लिए स्थायी तौर पर लाभप्रद होने के लिए अपने सदस्यों में सामुदायिक विकास हेतु शक्तिशाली इच्छा एवं भावना का विकास करना होता है, परिश्रमी एवं समर्पित नेतृत्व एवं भारित कार्यों में कुशल व्यक्ति प्राप्त करने हेतु आर्थिक तौर पर क्षय होना होता है।

आदर्शात्मक रूप में, स्वयंसेवी संगठन प्रजातंत्र को सुरक्षित रखते हैं तथा समाज के सामान्य स्वास्थ्य में योगदान प्रदान करते हैं। वे प्रजातंत्र में समाजीकरण के प्रमुख अंग हैं। तथा अपने सदस्यों को सामाजिक मानकों एवं मूल्यों के प्रति शिक्षित कर अकेलेपन को दूर करने में सहायता करते हैं।

3.3.1 स्वयंसेवी संगठन की विशेषतायें

स्वयंसेवी संगठन की उपर्युक्त परिभाषाओं के आधार पर प्रमुख विशेषतायें निम्नलिखित है:-

1. यह कार्यों के क्षेत्र एवं स्वरूप के अनुसार विधिक प्रस्थिति प्राप्ति हेतु समिति पंजीकरण कानून 1960, भारतीय न्यास कानून 1882, सहकारी समिति कानून 1904 अथवा संयुक्त स्टाक कम्पनी 1959 के अन्तर्गत पंजीकृत होती है।

2. इसके निश्चित लक्ष्य एवं उद्देश्य एवं कार्यक्रम होते हैं।

3. इसकी प्रशासकीय संरचना एवं विधिवत् संरचित प्रबन्ध एवं कार्यकारी समितियां होती हैं।

4. यह बिना किसी वाह्य नियंत्रण के अपने सदस्यों द्वारा प्रजातांत्रीय नियमों के अनुसार प्रशासित होता है।

5. यह अपने कार्यों के सम्पादन के लिए सरकारी कोष से अनुदानों के रूप में तथा आंशिक तौर पर स्थानीय समुदाय एवं/अथवा इसके कार्यक्रम से लाभान्वित व्यक्तियों से अंशदान अथवा शुल्क के रूप में अपनी निधियों को एकत्रित करता है।

3.4 समाज कल्याण प्रशासन एवं गैर सरकारी संगठन

गैर सरकारी संगठन तथा स्वयंसेवी संगठन एक दूसरे के पर्यायवाची अथवा समनार्थी माने जाते है परन्तु अधिकतर लोग यह नहीं समझ पाते हैं कि गैर सरकारी संगठन तथा गैर लाभ संगठन के सिद्धान्त एक है अथवा इनमें क्या अन्तर है। संक्षेप में गैर सरकारी संगठन को NGO तथा स्वयंसेवी संगठन को VO के नाम से जाना जाता है। स्वयंसेवी संगठन के विषय में चर्चा ऊपर की गई है।

गैर सरकारी संगठन का निर्माण किसी विधिक व्यक्तियों के द्वारा किया जाता है और वह सरकार का अंग नही होता है। अधिकतर गैर सरकारी संगठनों के कोष का निर्माण सरकार द्वारा किया जाता है| वे अपनी गैर सरकारी स्थिति को बनाए रखते है तथा सरकारी परिषदों की आवश्यकताओं को दूर करने का प्रयास करते हैं।

इस प्रकार के संगठनों को नागर समाज संगठन के नाम से भी जाना जाता है। एक अनुमान के अनुसार लगभग 40 हजार अन्तर्राष्ट्रीय गैर सरकारी संगठन विश्व में है। इनमें से अधिकतर भारत में भी देखने को मिलते हैं। सन् 1945 में संयुक्त राष्ट्र संघ की स्थापना के पश्चात् और गैर सरकारी संगठन अत्यधिक प्रसिद्ध हुए।

एक अन्य रूप में गैर सरकारी संगठन एक स्वैच्छिक संगठन है जिसका मुख्य कार्य समाजिक एवं विकासात्मक क्षेत्रों को विकसित करना है। दूसरे शब्दों में गैर सरकारी संगठन से तात्पर्य ऐसे संगठनों से है जिसे वैधानिक रूप से, व्यक्तिगत रूप से अथवा संगठनों के द्वारा निर्मित किया जाता है और जिसमें किसी भी सरकारी व्यक्ति का न तो सहभागिता होती है और न ही प्रतिनिधित्व। इस प्रकार के संगठनों के कोषों का निर्माण आंशिक अथवा पूर्ण रूप से सरकार द्वारा किया जाता है। ऐसी स्थिति में गैर सरकारी संगठन, गैर सरकारी स्थिति को बनाए रखते हैं।

गैर सरकारी संगठन का प्रमुख उद्देश्य विकास से सम्बन्धित परियोजनाओं की रूपरेखा तैयार करना और उनको लागू करना होता है। सामान्यतः गैर सरकारी संगठनों को सहायता उन्मुख अथवा 'विकास उन्मुख' संगठनों की श्रेणी में विभाजित किया जा सकता है। इसके अतिरिक्त ऐसे संगठनों समुदाय आधारित संगठन अथवा स्वैच्छिक संगठन अथवा गैर लाभ संगठन अथवा स्थानीय राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय संगठनों की श्रेणी में भी विभाजित किया जा सकता है।

3.4.1 गैर सरकारी संगठनों के प्रकार

गैर सरकारी संगठनों को उनकी कार्य की प्रकृति के आधार पर निम्नवत् प्रकारों में विभाजित किया जा सकता है:-

- INGO: International NGO (अन्तर्राष्ट्रीय गैर सरकारी संगठन)
- BINGO: Business Oriented International NGO (व्यवसाय उन्मुख अन्तर्राष्ट्रीय गैर सरकारी संगठन)
- ENGO: Environmental NGO (पर्यावरणीय गैर सरकारी संगठन)
- GONGO's: Government Operated NGO's (सरकार द्वारा संचालित गैर सरकारी संगठन)
- QUANGO's: Quasi-Autonomous NGO's (अर्द्ध स्वायत्त गैर सरकारी संगठन)
- TANGO: Technical Assistance NGO (तकनीकी सहायता गैर सरकारी संगठन
- MANGO: Market Oriented NGO (बाजार उन्मुख गैर सरकारी संगठन)

3.4.2 गैर सरकारी संगठन की भूमिका

गैर संगठनों की प्रकृति एवं उद्देश्यों का यदि विश्लेषण किया जाए तो स्पष्ट होता है कि वह निम्न प्रकार से अपनी भूमिकाओं का प्रतिपादन करती हैः-

- अधःसंरचना का निर्माण, संचालन एवं विकास

- नवप्रर्वतन प्रदर्शन एवं पायलट परियोजनाओं को आधार प्रदान करना।
- सम्प्रेषण को सुविधाजनक बनाना।
- तकनीकी सहायता एवं प्रशिक्षण।
- अनुसंधान, अनुश्रवण एवं मूल्यांकन।
- जरूरतमंद लोगों की वकालत।

3.4.3 गैर सरकारी संगठन के लिए आवश्यक निपुणताए

एक गैर सरकारी संगठन को अपने लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए निम्नलिखित निपुणताओं से युक्त होना चाहिए:-

क. सामुदायिक संगठन

- सामूहिक गत्यात्मकता
- एकीकरण
- समस्या की पहचान
- सामुदायिक खोज
- लाभबन्दी
- सम्प्रेषण
- भूमिका प्रतिपादन।
- वस्तुनिष्ठता, अनुश्रवण एवं मूल्यांकन

ख. सहभागी क्रियात्मक अनुसंधान

- शोध समस्या की पहचान
- विभिन्न शोध उपकरणों की पहचान
- आंकड़ों का एकत्रीकरण
- आंकड़ों का विश्लेषण
- समुदाय के साथ विचार-विमर्श और आंकड़ों का सत्यापन
- निष्कर्षों का निरूपण
- संस्तुतियों का निर्माण

ग. व्यवसायिक निपुणता

- नियोजन
- सहभागी प्रबन्धन
- लेखा एवं रख-रखाव

- बाजार एवं क्रय
- समझौता
- अनुश्रवण एवं अभिलेखन
- वैधानिक पक्षों की समझ

घ. प्रलेखन एवं सूचनाओं का प्रसार

- छोटे समूह का निर्माण
- दृष्टिकोण एवं मूल्यों में स्पष्टता
- विभिन्न प्रकार के मीडिया उत्पादन
- संप्रेषण निपुणता एवं दृश्य उपकरण
- आत्मचेतना/संवेदनशीलता की निपुणत
- वकालत
- संजाल एवं सम्बन्ध

ड प्रशिक्षण विधियां

- सांस्कृतिक आधारों का उपयोग
- मीडिया का प्रयोग
- सहभागी पर्यवेक्षण
- कार्यशाला का संगठन
- कार्यक्रमों का प्रस्तुत करना
- सामूहिक विचार-विमर्श

च. तकनीकी प्रशिक्षण

- कृषि, स्वास्थ्य, आवास, खाद्य, ऊर्ज, हस्तकला इत्यादि से सम्बन्धित उपयुक्त तकनीकी का उपयोग।

3.5 संगठन की स्थापना

भारत में प्रायः स्वैच्छिक संस्था की प्रबंध समिति के सदस्य सामान्य सभा के सदस्यों द्वारा निर्वाचित किये जाते है। सामान्य सभा की सदस्यता कुछ शर्तों के आधार पर दी जाती है। जिनमें बालिग होना तथा संस्था के विधान में निर्धारित सदस्यता शुल्क जमा करना आदि है। इसके विपरीत पश्चिम देशों में सदस्यता शुल्क जमा करने या सदस्यों द्वारा प्रबंध समिति निर्वाचित करने की प्रथा नहीं है। वहाँ सामान्य सभा और प्रबंध समिति में कोई भेद नहीं रखा जाता। पश्चिम देशों की सामाजिक संस्थाओं में उन्ही लोगों को सदस्य बनाया जाता है, जो कि संस्था के कार्यों रूचि रखते हो अथवा कुछ समय इन कार्यों के लिए दे सके। वहाँ की संस्थाओं में बोर्ड सामान्य सभा तथा प्रबंध समिति, दोनों का काम करते है। यद्यपि शुल्क की आदायगी संस्था का सदस्य बनने के लिए आवश्यक तथा

उपयोगी शर्त है तथापि सदस्यों की नियुक्ति या प्रबंध समिति के निर्वाचन के समय इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि प्रत्येक कृषि या व्यवसाय के लोग प्रबंध समिति में लिए जाए, जैसें-व्यापारी, शिक्षक, चिकित्सक, पत्रकार आदि। संस्था में पुरूषों और स्त्रियों, दोनों को सदस्यता दी जानी चाहिए। सामान्य सभा का सदस्य बनने के लिए प्रत्येक संस्था को अपनी एक निर्वाचन समिति बनानी चाहिए। यह समिति लोगों से मिलकर ऐसे व्यक्तियों को संस्था का सदस्य बनाये, जिनका संस्था के कार्य में अंशदान मिल सके।

इस प्रकार आज के युग में भी लाखों नर नारी स्वैच्छा से सामाजिक संस्थाओं की प्रबंध समितियों तथा बोर्डों के सदस्य या अवैतनिक अधिकारी बनकर समाज सेवा में जुटे हुए है। जनता द्वारा निर्वाचित स्वैच्छिक कार्यकर्ताओं का संस्थाओं में कार्य करना सामाजिक चेतना तथा जन सहयोग का सूचक है। स्वैच्छिक कार्यकर्ताओं की प्रंबंध समिति लोकतंत्र का आधार है और ये समितियाँ लोकतंत्र की पद्धतियों के अनौपचारिक प्रषिक्षण केन्द्र है।

3.5.1 संगठन के सदस्य

सदस्य निम्नलिखित प्रकार के होते है:-सामाय सदस्य,अवैतनिक सदस्य,आजीवन सदस्य,सहयोजित सदस्य,पदेन सदस्य आदि

प्रत्येक नये सदस्य को संस्था के उद्देष्य, संगठन तथा कार्य प्रणाली के विषय में पूरी जानकारी देनी चाहिए। उसे संस्था के विषय में प्रतिवेदन तथा दूसरी प्रतिलेख देने चाहिए और संस्था के अनुभागों का दौरा करना चाहिए।

3.5.2 सामान्य सभा

संस्था के सभी सदस्य सामान्य सभा के सदस्य होते है। सामान्य सभा के निम्नलिखित कार्य होते है।

- नीति निर्धारण तथा कायदा कानून बनाना,
- संगृहीत निधि के खर्च पर नियंत्रण करना।
- प्रबंध समिति के सदस्यों का निर्वाचन
- संस्था के वार्षिक बजट की स्वीकृति।
- लेखा परीक्षण की नियुक्ति
- वार्षिक प्रतिवेदन पर विचार विमर्ष करके संस्था के कार्य के विषय में जानकारी प्राप्त करना।
- संस्था के हिसाब-किताब की प्रतिवेदन देखना है और,
- आवश्यकता पड़ने पर विधान में यथोचित संशोधन आदि करना है।

3.5.3 प्रबंध समिति का संगठन

स्वैच्छिक संस्थाओं के प्रबंध तथा कार्यभार को सुचारू रूप से चलाने के लिए निर्वाचित सदस्यों की प्रबंध समिति अथवा बोर्ड की व्यवस्था उसके संविधान में की जाती है। अब तो सरकारी संस्थाओं में भी जन सहयोग को प्रोत्साहित करने के लिए सलाहकार समितियों का गठन किया जा रहा है। इस प्रकार ऐसी समितियों के निम्नलिखित लाभ है-

- बोर्ड के सदस्यों के द्वारा समस्याओं पर संयुक्त रूप से चिंतन का लाभ मिलता है, जो कि एक व्यक्ति के लिए सम्भव नहीं है।
- इससे वैतनिक कार्यकर्ताओं पर होने वाले खर्च में किफायत हो सकती है।
- समुदाय की आवश्यकताओं की जानकारी संस्था तक पहुँचाने तथा संस्था की नीति के निर्धारण में सहायता मिलती है।
- समिति सदस्यों को लोकतंत्र के तरीकों और लोक राज की विधियों में अनौपचारिक प्रषिक्षण मिलता है, और
- समुदाय में सेवार्थियों तथा दूसरी संस्थाओं के साथ तालमेल रखने में बहुत सहायता मिलती है।

3.5.4 प्रबंध समिति के कार्य

सामान्य सभा की बैठक सामान्यतः वर्ष में केवल एक बार होती है। संस्था के प्रबंध के लिए सामान्य सभा पर प्रबंध समिति निर्वाचित करती है। प्रबंध समिति निम्नलिखित कार्य करती है-

- संस्था के कार्य के नियम बनाती है और उन्हें लागू करती है।
- संस्था की नीति निर्धारण करती है, समय-समय पर पुनरीक्षण करती है और कार्यक्रमों का संचालन करती है|
- प्रशिक्षित कार्यकर्ताओं के द्वारा किए गये कार्य का निरीक्षण करती है|
- संस्था के लिए आवश्यक धन संगृहीत करने और इसका हिसाब किताब रखने का प्रबंध करती है।
- संस्था और समुदाय के बीच तालमेल रखती है।
- संविधान में संशोधन करने तथा नए कार्यो के लिए नियम बनाने का मसविदा तैयार करके सामान्य सभा के सामने विचारार्थ रखती है।
- संस्था की प्रबंध समिति उसकी परिसम्पत्ति होती है।
- विशेष समितियों तथा उप समितियों की नियुक्ति करती है और उनके काम का बँटवारा करती है।

3.5.5 संस्था के पदाधिकारी

संस्था के प्रबंध समिति का संयुक्त दायित्व होता है, तथापि समिति द्वारा दैनिक कार्य करने के लिए कुछ अधिकारी निर्वाचित किये जाते है ताकि काम का बटवारा भी हो सके। कई संस्थाओं में पदाधिकारियों का निर्वाचन सामान्य सभा करती हैं किन्तु कई ऐसी भी संस्थाएं है। जहाँ प्रबंध समिति के द्वारा इनका निर्वाचन होता है। कई संस्थाओं में पूर्णकालीन वैतनिक मुख्य कार्यपालक भी नियुक्ति किया जाता है। सामाजिक संस्थाओं के प्रबंध के लिए निम्नलिखित पदाधिकारी होते है-

क) प्रधान

ख) उप-प्रधान

ग) महामंत्री

घ) संयुक्त/सहायक मंत्री

ड.) कोषाध्यक्ष

च) मुख्य कार्यपालक

छ) लेखा निरीक्षण

3.6 सारांश

सारांश के रूप में समाज कल्याण प्रशासन के लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए केन्द्रीय, प्रान्तीय और स्थानीय शासन का यह कर्तव्य होना चाहिए कि वे अपने क्षेत्रों में उचित संगठनात्मक और प्रशासनिक अभिकरण प्रदान करे। जिससे कि समाज कल्याण प्रशासन में स्वयंसेवी तथा गैर सरकारी संगठनों अपनी भूमिका अत्यन्त महत्वपूर्ण योगदान दे सके।

3.7 अभ्यासार्थ प्रश्न

(1) स्वयंसेवी संगठन का अर्थ स्पष्ट कीजिए।

(2) गैर सरकारी संगठनों के प्रकार्यों को समझाइये।

(3) समाज कल्याण प्रशासन में गैर सरकारी संगठनों की भूमिका को स्पष्ट कीजिए।

(4) स्वयंसेवी तथा गैर सरकारी संगठनों में अन्तर कीजिए।

3.8 सन्दर्भ पुस्तकें

Singh, S. and Mishra, P.D. Samaj Karya: Itihas, Darshan Evam Pranaliyan, NRBC, Lucknow, 2004.

Soodan, K.S. Samaj Karya: Siddhant evam Abhyas, N. S. Publication, Lucknow, 2011.

Sharma, P. and Sharma, H. Lok Prashashan: Siddhant evam Vyavhar, College Book Depot, New Delhi, 1996.

Singh, S. and Soodan, K.S. (ed.), Horizon of Social Work, Jyotsna Publication, Lucknow, 1986.

Kulkarni, V. M. Essay on Social Administration, Delhi Research Publication in Social Sciences, 1972.

Singh, D. K. Bharat mein Samaj Kalyan: Avdharna, Prashsshan evam Karyakram, NRBC, Lucknow, 2012.

Singh, S. and Verma, R. B. S. Bharat mein Samaj Karya ke Kshetra, NRBC, Lucknow

Chaudhary, D. P. A Handbook of Social Welfare, Atma Ram and Sons, Delhi, 1966.

Slack, K. M. Social Administration and the Citizen, London, 1974

Narayan, I. Rajniti Shastra ke Mool Siddhant, Ratan Prakashan Mandir, Agra, 1964.

इकाई-4

केंद्रीय एवं राज्य समाज कल्याण परामर्श परिषद

इकाई की रूपरेखा

4.0 उद्देश्य (Objectives)

4.1 प्रस्तावना (Preface)

4.2 भूमिका (Introduction)

4.3 केंद्रीय समाज कल्याण परिषद (Central Social Welfare Board)

4.4 राज्य समाज कल्याण परामर्श परिषद(State Social Welfare Advisory Board)

4.5 सारांश (Summary)

4.6 अभ्यास प्रश्न (Questions for Practice)

4.7 सन्दर्भ पुस्तकें (Reference Books)

4.0 उद्देश्य (Objectives)

प्रस्तुत अध्याय के अध्ययन के पश्चात आप –

1. केन्द्रीय समाज कल्याण परिषद की अवधारणा, उद्देश्यों एवं संरचना से अवगत हो जायेंगे |
2. केन्द्रीय समाज कल्याण परिषद की मूल निपुणताओं तथा प्रकार्यों को जान सकेंगे |
3. राज्य समाज कल्याण परामर्श परिषद के कार्यो एवं संगठन से परिचित हो जायेंगे |

4.1 प्रस्तावना (Preface)

समाज कल्याण प्रशासन एक ऐसी प्रक्रिया है जिसके माध्यम से, सरकारी एवं निजी समाज कार्य सेवाओं का आयोजन एवं संचालन किया जाता है। इनके माध्यम से समाज कल्याण सेवायें प्रायः ऐसे लोगों को प्रदान की जाती है जिन्हें उनकी कमजोर और निम्न स्थिति के कारण समाज में उनके व्यक्तित्व विकास और सामाजिक कार्यात्मकता से वंचित रहे है। इन सेवाओं में, महिला और बच्चों, युवा, वृद्ध, श्रमिक, निर्धन, ग्रामीण क्षेत्रों के शोषित व्यक्ति, नगरीय मलिन बस्ती के शोषित व्यक्ति, सामाजिक रूप में अक्षम, विकलांग, बीमारियों के कारण कार्यन कर पाने वाले व्यक्ति आदि वर्गों हेतु कल्याणकारी कार्यक्रम शामिल किये गये है। ये सेवायें शासकीय एवं निजी संस्थानों के माध्यम से लागू की जाती है।

4.2 भूमिका (Introduction)

भारत एक कल्याणकारी राज्य है। भारतीय संविधान के अन्तर्गत राज्य के नीति निर्देशक तत्वों के द्वारा जनता के कल्याण को प्रोन्नत करना तथा जनता को, सामाजिक आर्थिक एवं राजनैतिक न्याय प्रदान करने का

दायित्व राज्य को दिया गया है। संविधान की सातवीं अनुसूची में समाज कल्याण के अनेक क्षेत्र जैसे, सामाजिक सुरक्षा एवं सामाजिक बीमा, श्रम कल्याण, समवर्ती सूची में सम्मिलित व्यक्तियों के राहत पुर्नवास कार्यक्रमों का विवरण दिया गया है जिसके अन्तर्गत केन्द्र व राज्य सरकारें संविधान के समाज कल्याण उद्देश्यों की पूर्ति कि लिए अनेक कार्यक्रम व गतिविधियाँ चला सकती है। संविधान की प्रस्तावना में संकल्प राज्य के नीति निर्देशक तत्वों तथा अन्य विधिक प्राविधानों व नीतियों व नागरिकों के कल्याण को शासन राज्य का दायित्व स्वीकृत किया गया है ऐसी स्थिति मे भारत में समाज कल्याण प्रशासन का महत्व और बढ़ जाता है।

4.3 केंद्रीय समाज कल्याण परिषद (Central Social Welfare Board)

उक्त कथन को ध्यान में रखते हुए एक प्रस्ताव के द्वारा भारत सरकार ने अगस्त, 1953 में केंद्रीय समाज कल्याण परिषद की स्थापना की। इस परिषद को 4 करोड रूपये प्रथम पंचवर्षीय योजना में ''स्वैच्छिक समाज सेवा संगठनों को अनुदान राशि के रूप में देने के लिए मिले, ताकि समाज कल्याण के क्षेत्र में चल रहे कार्यों को बल देने, सुधारने और विकसित करने की दिशा में प्रयास किया जाए और नवीन कार्यक्रमों और प्रमुख परियोजनाओं को विकास किया जा सके।''

सामान्यतः इस परिषद के कार्यक्रमों का सुधार और विकास करने में सहायता करना था औरविशेष रूप से इसके प्रमुख कार्यक्रम इस प्रकार थे, समाज कल्याण संगठनों की आवश्यकता का सर्वेक्षण करना, अनुदान प्राप्त संस्थाओं कार्यक्रमों और परियोजनाओं का मूल्यांकन, केन्द्रीय और प्राप्तीय सरकारों के अनेक मंत्रालयों द्वारा समाज कल्याण कार्यो के लिए दी गयी सहायता को क्रियान्वित करना; ऐसे स्थान पर, जहाँ कोई संगठन स्थापित नहीं है, वहाँ स्वैच्छिक तौर पर समाज कल्याण संगठनों की स्थापना को वृद्ध करना; परिषद के द्वारा निर्धारित शर्तो के अनुसार योग्य संगठनों या संस्थाओं को, जहाँ जरूरत हो वहाँ, वित्तीय सहायता प्रदान करना। समय-समय पर सर्वेक्षण, शोध और मूल्यांकन के द्वारा, जैसा यथावसर आवश्यक समझा जाए, समाज कल्याण संगठनों की जरूरतों और अपेक्षाओं का अध्ययन करना, सहायक संस्थाओं के कार्यक्रमों और उनकी परियोजनाओं का मूल्यांकन करना, केन्द्रीय समाज कल्याण परिषद को सौंपे गये कार्यक्रमों में केन्द्रीय और प्राप्तीय मंत्रालयों में अनेक मंत्रालयों द्वारा समाज कल्याण कार्यो को प्रदान की गयी सहायता को समन्वित करना, संगठन रहित स्थान पर स्वैच्छिक आधार पर समाज कल्याण संगठनों की स्थापना को बढ़ावा देना और जहाँ जरूरत हो वहाँ अतिरिक्त संगठन बनाना, भारत सरकार के द्वारा मान्यता प्राप्त योजनाओं / सिद्धान्तों के अनुसार पंचायती राज संस्थाओं समेत ऐसी अन्य संस्थाओं और संगठनों को, जब जरूरी हो तो, तकनीकी और वित्तीय सहायता प्रदान करना; सार्वजनिक हित के लिए कार्यरत समाज कल्याण गतिविधियों को बढ़ाना जिनमें परिवार, स्त्रियों, बच्चों और विकलांगों का हित निहित हो तथा बेकार, अर्द्ध बेकार, वृद्धों , बीमारों, अशक्तों आदि का कल्याण सम्भव किया जाए, जब जरूरत पड़े तो समाज कार्य में प्रशिक्षण के कार्यक्रमों को बढ़ावा दिया जाए, और राष्ट्रीय आपदा या प्रकृति के प्रकोप से पैदा आपदा की स्थितियों में, जब भी उचित या आवश्यक समझा जाए, अपनी मशीनरी के माध्यम से आपातकालीन राहत कार्यों का आयोजन किया जाए।

4.3.1 केन्द्रीय समाज कल्याण परिषद का लक्ष्य (Goal of Central Social Welfare Board)

राष्ट्रीय संगठन के स्तर पर अत्यधिक प्रगतिशील इकाई के रूप में अपनी पहचान बनाने के लिए प्रयास करना तथा महिलाओं एवं बच्चों की सुरक्षा, क्षमता-निर्माण और पूर्ण सशक्तीकरण के लिए सुस्पष्ट और सर्वोत्कृष्ट सेवाएं प्रदान करना। महिलाओं एवं बालिकाओं के कानूनी तथा मानवाधिकारों के सम्बन्ध में लोगों में जागरूकता बढ़ाना तथा इन्हें प्रभावित करने वाली सामाजिक बुराइयों के विरुद्ध अभियान चलाना।

4.3.2 केन्द्रीय समाज कल्याण परिषदके उद्देश्य (Objectives of Central Social Welfare Board)

केन्द्रीय समाज कल्याण बोर्ड का मुख्य उद्देश्य है समाज में महिलाओं के कल्याण, विकास और सशक्तीकरण के लिए गैर-सरकारी संगठनों और स्वैच्छिक संगठनों के साथ रचनात्मक भागीदारी सुनिश्चित करना तथा इस कार्य के लिए ऐसे अधिक से अधिक संगठनों को बढ़ावा देना। इसी उद्देश्य की पूर्ति के लिए 1953 में बोर्ड की स्थापना की गई थी। केन्द्रीय समाज कल्याण बोर्ड विभिन्न कार्यक्रमों के अन्तर्गत गैर-सरकारी/स्वैच्छिक संगठनों को सहायता उपलब्ध कराता है ताकि वे महिलाओं को शिक्षा, व्यवसायिक प्रशिक्षण, आश्रय, परामर्श सेवा तथा सहायक सेवाएं उपलब्ध कराकर समाज में उनकी स्थिति को सुदृढ़ बना सके और उन्हें सशक्त कर सकें।

4.3.3 केन्द्रीय परिषदका प्रतीक-चिह्न (Symbol of Central Board)

केन्द्रीय समाज कल्याण बोर्ड का मुख्य उद्देश्य महिलाओं को सशक्त और हुनरमंद बनाना है ताकि वे अपना भविष्य तय करने की क्षमता हासिल कर सकें, साथ ही वे शिक्षण-प्रशिक्षण, आय-अर्जक साधन तथा विकास एवं बदलाव के अन्य उपायों के माध्यम से आगे बढ़ें और परिवार एवं बच्चों का सम्बल बनें। यह तय किया गया कि बोर्ड का नया प्रतीक-चिह्न ऐसा हो, जिसमें सबल महिला तथा स्वस्थ एवं संरक्षित बालिका की छवि परिलक्षित हो। बोर्ड के नये प्रतीक-चिह्न में महिला और बच्चें को खड़े हुये तथा आगे बढ़ने की मुद्रा में चित्रित किया गया है, जो प्रगति और आत्म-विश्वास का प्रतीक है। इसमें महिलाओं और बच्चों के संरक्षण, उनकी देखभाल तथा जीवन में व्यवहारिक एवं प्रगतिशील दृष्टिकोण की कामना की गई है। इसकी वृत्ताकार आकृति में वैश्विक परिप्रेक्ष्य की भावना है, जिसमें महिलाओं और बच्चों के विकास एवं सशक्तीकरण से सम्बन्धित अन्तर्राष्ट्रीय अभिसमयों और संकल्पों के लिए प्रतिबद्धता निहित है।

4.3.4 संगठात्मक एवं प्रशासनिक संरचना (Organisational and Administrative Structure)

केन्द्रीय समाज कल्याण परिषद के सचिवालय को निम्नलिखित पाँच भागो में विभाजित किया गया है। इनमें से प्रत्येक का अध्यक्ष सह निदेशक होता है, जो कार्यकारी निदेशक के प्रति उत्तरदायी होता है। इन पाँच भागो का विवरण इस प्रकार है:-

औद्यौगिक कार्यक्रम प्रशासनिक विभाग

यह विभाग परिषद के सामाजिक आर्थिक कार्यक्रमों को देखता है। ये कार्यक्रम जरूरतमन्द महिलाओं और विकलांगों के लिए ऐसे अवसर प्रदान करते है जिनसे वे उत्पादन कार्यों में लग सकें और आर्थिक रूप से पुनर्वासित हो सकें । इस कार्यक्रम के अन्तर्गत स्वैच्छिक संस्थाओं को अनुदान राशि दी जाती है जिससे वे अनेक तरह की इकाईयाँ स्थापित कर सकें, जैसे लघु उद्योगों के उत्पादन की इकाई, दस्तकारी की इकाई, कातने और बुनने की इकाईयाँ खादी और ग्रामोद्योग की इकाईयाँ, सेवा-उन्मुखी इकाईयाँ, स्व-रोजगार इकाईयाँ एग्रो-मूलक इकाईयाँ जैसे डेरी, सूअर पालन, बकरी पालन, भेड पालन और मुर्गी पालन सम्बन्धी इकाईयाँ। प्राप्तीय कल्याण परामर्षक परिषदके द्वारा आवेदन पत्र माँगे जाते है और फिर अपने अनुमोदन के साथ केन्द्रीय कल्याण परिषद को प्रेषित कर दिये जाते है । विभाग उनकी जाँच करता है और अनुदान मंजूर करवाता, अनुदान राशि प्रदान करता तथा खर्च का लेखा-जोखा करता है ।

कल्याण कार्यक्रम प्रशासन विभाग

यह विभाग तीन प्रभागों में बँटा हैः (1) सामान्य अनुदान प्रभाग, जो स्वैच्छिक संस्थाओं, महिला मण्डलों, कल्याण विस्तार परियोजनाओं (देहाती शहरी और सीमान्त) कार्यशील महिला आवासों के लिए अनुदान राशि का

प्रतिदान करता है, प्रान्तीय परामर्शक मण्डलों द्वारा अनुमोदित आवेदनों की जाँच करता हे, अनुदान राशि जारी करता है और इसके उपभोग को निर्दिष्ट करता है। (2) शिशु कल्याण प्रभाग पोशक कार्यक्रमों, कार्यरत महिलाओं के शिशुगृहों, अवकाश दिवसीय षिविरों, समेकित प्रारम्भिक विद्यालय परियोजनाओं प्रदर्शन परियोजनाओं और परिवार तथा शिशु कल्याण परियोजनओं से सम्बन्ध रखता है। अब परिवार तथा शिशु कल्याण परियोजनाओं को प्रदेश सरकारों को स्थानान्तरित कर दिया गया है। (3) संक्षिप्त पाठ्य प्रभाग शिक्षा के दो वर्ष के संक्षिप्त पाठ्यों में फेल हुए पाठकों के लिए एक वर्ष के पाठ्यों स्त्रियों के लिए व्यावसायिक प्रशिक्षण पाठ्यों से सम्बन्ध रखता है।

प्रशासनिक विभाग

कार्यकारी वर्ग विभिन्न प्रकार के कार्यों का प्रबन्ध करता है, इनका निरीक्षण करता है तथा उनका प्रशासन करता है। कार्यकारी वर्ग के वे कार्य इस तरह है: भर्ती, नियुक्ति, स्थानान्तरण, पदोन्नति, आचार नियम और अनुशासन, अनुकूलन और संप्रेरणा। इसके सेवा कार्य ये है: लेखा जोखा प्रबन्ध, सम्पत्ति प्रबन्ध, परिवहन, प्राप्ति और प्रेक्षण , मुद्रण अंकजाल और मशीन प्रवर्तन। इसके परामर्श कार्य ये है: परिषदके कार्यकारी वर्ग की आवश्यकताओं को पहचानना, वैधानिक परिवर्तन इत्यादि।

विभाग प्रान्तीय कल्याण मण्डलों, उनके बजटों और वार्षिक प्रतिवेदनों की पुनः रचना से भी सम्बन्ध रखता है। दो पत्रिकाओं Social Welfare (अंग्रेजी) और समाज कल्याण (हिन्दी) - के प्रकाशन से सम्बन्धित प्रशासनिक कार्यो के लिए भी यह उत्तरदायी होता है। ये पत्रिकायें लोगों को परिषदऔर उसके कार्यक्रमों की जानकारी देता है ताकि लोगों का सहयोग परिषद की नीतियों और कार्यक्रमों के संचालन हेतु प्राप्त किया जा सके। यह सार्वजनिक सम्बन्धी कार्य भी करता है।

वित्त और लेखा-जोखा विभाग

यह विभाग लेखा जोखा के सामान्य वित्तीय नियमों और वाणिज्य विषयक पद्धति द्वारा अपेक्षित परिषद के लेखा -जोखा को सही ढंग से रखने को निश्चित बनाने के कार्यो का सम्पादन करता है। इसके अन्य कार्य है - बजट तैयार करना, संस्थापित संस्थानों को मुद्रा प्रदान करना, अनेक कार्यक्रमों से सम्बन्धित राज्य परिषदों द्वारा किये गये धनराशि - व्यय के आँकडे प्राप्त करना तथा परिषदके अनेक वित्तीय व्यापारों पर नियन्त्रण करना। इसकी अध्यक्षता एक अन्तरिम वित्तीय परामर्श एवं मुख्य लेखाधिकारी करता है। उसके सहायकों में वेतन और लेखाधिकारी तथा दो लेखाधिकारी तथा सहायक व्यक्ति होते हैं।

नियोजन, प्रबोधन एवं समन्वय विभाग

यह विभाग परिषद के लक्ष्यों और सरकारी नीतियों के साथ तालमेल पैदा करते हुए समाज कल्याण कार्यक्रमों की योजना तैयार करता है; अपेक कार्यक्रमों के क्रियान्वयन में वरीयताओं के निर्धारण के विषय में उपयुक्त जानकारी प्रदान करता है; अनेक कल्याण कार्यक्रमों की कार्यक्षमता और और प्राप्तकर्ताओं पर उनके प्रभाव का मूल्यांकन करता है ; समाज कल्याण के अनेक क्षेत्रों में शोध और सर्वेक्षण करता है; परिषद के द्वारा सहायता प्राप्त स्वैच्छिक संस्थाओं के कार्यक्रमों तथा उनकी कार्यविधि का निरीक्षण करता है और उन्हें परामर्श देता है, देश के विभिन्न खण्डों में समाज के कमजोर वर्ग के लोगों की आवश्यकताओं का निर्धारण करता है और उनकी पूर्ति के लिए किये जाने वाले कार्यक्रमों और परियोजनाओं का सुझाव देता है; विभिन्न एजेन्सियों, विभागों और मंत्रालयों के कल्याण कार्यो को समन्वित करता है। इन कार्यो को सम्पन्न करने के लिए विभाग अनेक खण्डों में विभक्त है, जैसे सूचना तथा प्रबोधन खण्ड, आँकड़ा तथा लेखा जोखा ,खण्ड ; क्षेत्र परामर्श और निरीक्षण खण्ड तथा क्रियान्वयन खण्ड परिषदके पास क्षेत्रीय स्तर की मशीनरी होते है जिसमें कल्याण अधिकारी तथा सहायक परियोजना अधिकारी

होते है जो इस बात का ध्यान रखते है कि धनराशि का उपयोग उचित हुआ है । वे अधिकारी कार्यक्रमों और परियोजनाओं के उपयुक्त संचालन के लिए अनुदान पाने वाली संस्थाओं को निर्देशन प्रदान करते है ।

4.3.5 केन्द्रीय समाज कल्याण परिषद की मूल निपुणताएं

किसी भी संगठनात्मक क्षमता का तात्पर्य है, विषय- विशेष और हुनर से सम्बद्ध उसका मूलभूत ज्ञान, योग्यता अथवा उनमेंविशेष निपुणता कर लेना। इसी परिदृश्य में केन्द्रीय समाज कल्याण बोर्ड ने अपने तथा सभी राज्य समाज कल्याण बोर्डों और समस्त कर्मियों के लिए निम्नलिखित मूल क्षमताओं को अपनाया है:-

स्वैच्छिक संगठनों के प्रति अभिमुखीकरण

स्वैच्छिक संगठनों के साथ प्रभावी सम्बन्ध स्थापित करना और उन्हें बनाए रखना तथा संगठनों की जरूरतों के बारे में व्यवसायिक तरीके से और समयबद्ध आधार पर तथा संवेदनशीलता के साथ उपयुक्त समाधान पेश करने की योग्यता होना।

व्यावसायिकता

संकल्पना, विश्लेषण और मूल्यांकन करने की कला, स्वतंत्र रूप से विश्लेषण करने, बिना किसी भय या पक्षपात के निष्कर्ष निकालने और योग्यता के आधार पर अनुमोदन करने की क्षमता। संगठन के निर्धारित उद्देश्य एवं लक्ष्य हासिल करने के लिए मुख्य नीतिगत मुद्दों, कार्या और जोखिमों को पहचानने की योग्यता। स्त्री-पुरुश समानता के उद्देश्य की पूर्ति के लिए वचनबद्धता, जिसके लिए सह सुनिश्चित करना होगा कि महिलाओं की समान एवं पूर्ण भागीदारी हो तथा मूल कार्यकलापों में महिलाओं के परिप्रेक्ष्य को शामिल किया जाए।

नियोजन एवं आयोजन

स्वीकृत नीतियों के अनुरूप लक्ष्य तय करना, प्राथमिकता वाली गतिविधियों की पहचान करना ताकि जरूरत के अनुसार कामकाज किया जा सके तथा वार्षिक कार्य-योजना में आकस्मिक कार्य पड़ने पर उससे विमुख न होना, अर्थात् टीम के सदस्य के रूप में स्वतन्त्र रूप से तथा सीमित पर्यवेक्षण और दबाव में कार्य करने की योग्यता। नीतिगत सोच और नियोजन की क्षमता आवश्यक है। अन्य कार्यों में समन्वय एवं सामंजस्य की योग्यता तथा कम समय में कार्य करने की क्षमता तथा अनेक/समवर्ती प्रामाणिक अथवा सहकारी परियोजनाएं और उनसे सम्बद्ध गतिविधियां चलाने की क्षमता की अपेक्षा परिलक्षित है।

सम्प्रेषण

व्यक्ति में हिन्दी, अंग्रेजी और प्रादेशिक भाषा में बोलने और लिखने की योग्यता सम्प्रेषण की परिधि में आती है। दूसरों की बात सुनने और प्रभावी तरीके से उत्तर देने की क्षमता का पाया जाना, अच्छी लिखना और विश्लेषण करने की योग्यता संप्रेषण का संबल है।

टीम भावना

इसका तात्पर्य है, उत्कृष्ट अंतर्वैयक्तिक कला तथा बहुसांस्कृतिक, बहुजातीय वातावरण में संवेदनशीलता के साथ प्रभावी कार्य-सम्बन्ध स्थापित करना तथा उन्हें बनाए रखते हुए विविधता को सम्मान देना ।

प्रौद्योगिकी की जानकारी

कम्प्यूटर के कार्य में पूर्ण निपुणता, सूचना-प्रौद्योगिकी के क्षेत्र की नई जानकारी का होना, कार्यालय स्व-चालन, जिसमें नवीनतम वर्ड प्रासेसिंग, स्प्रैडशीट एप्लिकेशन्स और जरूरी साफ्टवेयर पैकेज शामिल हैं। रिर्पोट तैयार करने, सम्बद्ध विषयों को सूत्रबद्ध करने, सूचना भेजने तथा सिफारिश करने एवं उसके समर्थन में तर्क देने की योग्यता।

विविधता का सम्मान

समस्त जातीय पृष्ठभूमि के लोगों के साथ प्रभावी तरीके से कार्य करने की योग्यता, सभी पुरुषों और महिलाओं को समान रूप से सम्मान व आदर देना।

सत्यनिष्ठा एवं आत्म-संकल्प

निस्स्वार्थ भाव से कार्य करने के सिद्धान्त का पालन करना तथा उच्च नैतिक मूल्यों पर दृढ़ रहना। स्वैच्छिक संगठनों से बिना कोई आर्थिक लाभ लिए निष्पक्षता और ईमानदरी के साथ व्यवसायिक (प्रोफेशनल) रूप से कार्य करना। यह सुनिश्चित करना कि निजी और व्यवसायिक (प्रोफेशनल) हितों में कोई टकराव न हो तथा दोनों को अलग-अलग रखा जाए।

4.3.6 केन्द्रीय समाज कल्याण परिषद के प्रकार्य

1. स्वैच्छिक प्रयासों की भावना को और सुदृढ़ करते हुए मानवीय दृष्टिकोण के साथ परिवर्तन के वाहक की भूमिका निभाना।

२. महिलाओं के सशक्तीकरण और बच्चों के विकास के लिए समर्पित सामाजिक कार्यकर्ताओं का नेटवर्क तैयार करने के लिए संचालन-तन्त्र बनाना।

३. समानता, न्याय और सामाजिक परिवर्तन के लिए महिलाओं के प्रति संवेदनशील प्रोफेशनलों का संवर्ग तैयार करना।

४. नए उभरते क्षेत्रों में महिलाओं और बच्चों के समक्ष आने वाली नई चुनौतियों का सामना करने के लिए महिलाओं पर केन्द्रित नीतिगत पहल की सिफारिश करना।

५. अब तक अछूते रहे क्षेत्रों में स्वैच्छिक संगठनों को मजबूत करना और महिलाओं से सम्बन्धित योजनाओं का दायरा बढ़ाना।

६. सामाजिक जाँचकर्ता के रूप में अपनी अनुवीक्षण (मानीटरिंग) की भूमिका को और सुदृढ़ करना तथा स्वैच्छिक क्षेत्र को मार्गदर्शन देना ताकि वह सरकारी सहायता प्राप्त कर सके।

७. परिवर्तनशील समाज की चुनौतियों के बारे में जागरूकता लाना, जहां महिलाओं और बच्चों की खुशहाली पर प्रौद्योगिकी का नकारात्मक प्रभाव पड़ रहा है।

८. केन्द्रीय समाज कल्याण परिषदके Memorandum & Articles of Association में स्पष्ट बताया गया है कि प्रान्तीय समाज कल्याण परामर्शक मण्डलों को वे कार्य करने हैं जो उन्हें केन्द्रीय समाज कल्याण परिषदद्वारा सोंपे जाते हैं और क्योंकि वे मुख्यतया परामर्श मण्डलों के रूप में ही स्थापित है, जैसा कि उनके कार्या और संगठन से स्पष्ट है, वे मुख्यतया परामर्श मण्डलों के रूप में ही स्थापित है, जैसा कि उनके कार्यो और संगठन से

स्पष्ट है, वे इसी रूप में कार्य करते है तथा वे अपने- अपने प्रान्तीय क्षेत्र में कार्यरत स्वैच्छिक तथा अन्य संस्थाओं के कल्याण कार्यक्रमों के विषय में केन्द्रीय कल्याण परिषद को सूचित करते हैं। राज्य परिषदों के कार्य इस प्रकार है: पंजीकृत स्वैच्छिक संगठनों से अनुदानराशि सम्बन्धी आवेदन प्राप्त करना और उनकी योग्यता के निर्धारण के उपरान्त उन्हें केन्द्रीय समाज कल्याण परिषदके लिए अनुमोदित करना; स्वैच्छिक संस्थाओं के कार्यो का निरीक्षण करना और उचित कार्यवाही के लिए केन्द्रीय समाज कल्याण परिषद को प्रतिवेदन करना; नये कार्यक्रमों और कार्यो को अपनाने के लिए केन्द्रीय परिषद को सहायता तथा परामर्श देना; नये तथा न खोजे गये क्षेत्रों और स्थानों में स्वैच्छिक समाज कल्याण संगठनों के विकास को उत्साहित करना और बढ़ावा देना; सहायता प्राप्त स्वैच्छिक संस्थाओं के लिए क्षेत्र परमर्शन सेवायें प्रदान करने में केन्द्रीय परिषद की सहायता करना; स्वैच्छिक संस्थाओं में प्रान्त तथा स्थानीय स्तर पर स्वैच्छिक संस्थाओं और एजेन्सियों में तथा प्रान्तीय सरकार के बहुत से विभागों में समन्वय स्थापित करना; कार्यो की दुहरायी और अन्वय व्याप्ति को समाप्त करना; केन्द्रीय परिषदकी धनराशि के अनुसार उसकी ओर से कार्यक्रमों को क्रियान्वित करना और केन्द्रीय परिषद की आज्ञा से ऐसे कार्यक्रम चलाना जो केन्द्रीय या प्रान्तीय सरकार के किसी विभाग द्वारा सौंपे गये हों।

९. केन्द्रीय मण्डल, प्रान्तीय सरकारों, स्थानीय संगठनों और निजी व्यक्तियों द्वारा प्राप्त करवाई गयी धनराशि की सीमाओं के भीतर रहकर प्रान्त मण्डल अधिकाधिक कल्याण कार्यक्रमों को बढ़ावा देने के लिए तत्पर हैं। वे अनेक अन्तर्राष्ट्रीय और राष्ट्रीय दिवस मनाते है- जैसे बाल दिवस, महिला दिवस, बालिका दिवस, विकलांग दिवस और वृद्ध दिवस। वे समाज के सम्बन्धित खण्डों के कल्याण के लिए कार्यक्रम चलाते है।

१०. प्रतिवर्ष महिलाओं, शिशुओं, और विकलांगों के कल्याण के लिए महिला मण्डलों और स्वैच्छिक संगठनों से आवेदन मँगवाते ताकि उन्हें ऐसे कार्यक्रम करने के लिए सहायक अनुदानराशि प्रदान की जा सके, जैसे सामाजिक आर्थिक कार्यक्रम है - डेरी / एग्रो आधारित औद्योगिक उत्पादन इकाईयाँ, लघु उद्योग इकाईयाँ व्यवसाय प्रषिक्षण पाठ्यक्रम इत्यादि, आई0 टी0 के स्तर पर महिलाओं को अनेक व्यवसाय सिखलाना, स्कूल छोड़कर घर बैठी महिलाओं को प्राथमिक, माध्यमिक और मैट्रिक की परीक्षाओं को पास करने के योग्य बनाना, महिलाओं में सामाजिक चेतना लाने के कार्य करना, हर प्रकार के कल्याण कार्यो के लिए सहायक अनुदानराशि देना, शिशुओं के लिए अवकाशगृह शिविर आयोजित करना, कामकाजी महिलाओं के लिए परिवार परामर्श केन्द्र और छात्रावास बनाना उन संस्थाओं को वरीयता देना जो ग्रामीण, पिछडे या सीमान्त क्षेत्रों इत्यादि में हैं तथा उनकी केन्द्रीय समाज कल्याण परिषद को सिफारिश करना।

११. भूतकाल में, अनुदानराशि सीधे सम्बन्धित संगठनों को केन्द्रीय परिषदके द्वारा प्रदान की जाती थी, पर समय बदलने के साथ अनुदानराशि को देने के कुछ अधिकार प्रान्तीय समाज कल्याण परामर्श मण्डलों को मिल गये है, क्योंकि परिषदके अनेक कार्यक्रमों के अन्तर्गत आने वाली संस्थाओं की संख्या में बहुत वृद्धि हुई है तथा

१२. स्वैच्छिक संस्थाओं की स्थापना को प्रोत्साहित करना है।

4.3.7 केन्द्रीय समाज कल्याण परिषदसे सहायता के लिए पात्रता की शर्तें

केन्द्रीय समाज कल्याण बोर्ड के कार्यक्रमों के अन्तर्गत वित्तीय सहायता का पात्र होने के लिए आवेदक संस्था द्वारा निम्नलिखित शर्तों को पूरा करना जरूरी है:

१. संस्था उपयुक्त अधिनियम के अन्तर्गत पंजीकृत हो अथवा किसी पंजीकृत कल्याण संगठन की नियमित रूप से गठित शाखा हो (इस उद्देश्य के लिए संस्था का पंजीकृत निकाय से सम्बद्ध होना ही पर्याप्त नहीं है।

२. संस्था के पदाधिकारी एक-दूसरे के सम्बन्धी नहीं होने चाहिए।

३. परिवार परामर्श केन्द्र कार्यक्रम के अलावा बोर्ड के किसी भी कार्यक्रम के अन्तर्गत अनुदान प्राप्त करने के लिए संस्था/संगठन पंजीकरण के पश्चात कम से कम दो वर्ष तक कार्य कर चुका हो। परिवार परामर्श केन्द्र कार्यक्रम के मामले में यह अवधि तीन वर्ष की होगी। यद्यपि इस शर्त में उन संस्थाओं को छूट दी जा सकती है:-

(अ) जो पर्वतीय, सुदूर, सीमावर्ती, पिछड़े अथवा जनजातीय क्षेत्रों में कार्य कर रही हों।

(आ) जो ऐसे क्षेत्रों में विशिष्ट सेवाएं प्रदान कर रही हों, जहाँ ये उपलब्ध नहीं है और

(इ) ऐसे क्षेत्रों में जहाँ ऐसी सेवाएं आरम्भ करने की आवश्यकता हो। यह छूट सुदूर एवं जरूरतमंद क्षेत्रों में कार्यरत उन संस्थाओं के सम्बन्ध में लागू नहीं होगी जो किसी सुस्थापित राष्ट्रीय/राज्य स्तरीय संगठन की शाखा हों।

(ई) संस्था की एक विधिवत गठित प्रबन्ध समिति होनी चाहिए जिसके अधिकारों/शक्तियों तथा जिम्मेदारियों का लिखित विधान में स्पष्ट रूप से उल्लेख हो।

(उ) संस्था के पास योजना को, जिसके लिए अनुदान हेतु आवेदन किया गया है, आरम्भ करने के लिए सुविधाएं, संसाधन, कर्मचारी, प्रबन्ध-कौशल तथा अनुभव होना चाहिए।

(ऊ) संस्था की वित्तीय स्थिति सुदृढ़ होनी चाहिए। वह इस स्थिति में हो कि उस कार्यक्रम को पूरा करने हेतु, जिसके लिए बोर्ड द्वारा सहायता दी जा रही हो, आवश्यकता पड़ने पर अतिरिक्त धनराशि जुटा सके। इसके अतिरिक्त, जहाँ आवश्यकता हो, वहाँ अपने संसाधनों द्वारा सेवाओं के स्तर को बनाए रख सके।

(क) संस्था की सेवाएं भारत के सभी नागरिकों को धर्म, जाति, वर्ण अथवा भाषा के भेदभाव के बिना उपलब्ध होनी चाहिए।

उपर्युक्त शर्तों के अलावा कुछ कार्यक्रमों के अन्तर्गत पात्रता की अन्य शर्तें भी हैं जिनका ब्योरा आगे सम्बद्ध योजनाओं के अध्यायों में दिया गया है। इसके अतिरिक्त संस्थाएं केन्द्रीय समाज कल्याण परिषद nwww.cswb.gov.in में आनलाइन आवेदन कर सकती हैं अथवा राज्य समाज कल्याण परिषदसे रु. 100 का भुगतान करके आवेदन-पत्र प्राप्त कर सकती हैं।

4.3.8 संस्थाओं द्वारा प्रस्तुत किये जाने वाली दस्तावेज (Documents Produced by Agencies)

(क) किसी भी योजना के अन्तर्गत अनुदान राशि हेतु आवेदन करते समय निम्नलिखित दस्तावेज प्रस्तुत किए जाएं:

- पंजीकरण प्रमाण-पत्र की प्रतिलिपि।
- संस्था का संगम ज्ञापन (मेमोरेंडम आव ऐसासिएशन)/अंतर्नियमों (आर्टिकल्स आव ऐसोसिएशन)/उपविधि (बायलाज) की प्रतिलिपि।

- संस्था के गत तीन वर्षों के विस्तृत परीक्षित लेखा-विवरण। ये संस्था के पदाधिकारी द्वारा विधिवत हस्ताक्षरित हों तथा चार्टर्ड एकाउन्टैंट द्वारा परीक्षित हों।

टिप्पणी: परीक्षित लेखा-विवरण, संस्था द्वारा चलाए जा रहे किसी एक कार्यक्रम का नहीं, बल्कि पूरी संस्था का होना चाहिए।

- गत तीन वर्षों के वार्षिक प्रतिवेदन।
- प्रबन्ध समिति के सदस्यों की नवीनतम सूची (वे एक-दूसरे के सम्बन्धी नहीं होने चाहिए)।
- निर्धारित प्रपत्र में विधिवत रूप से भरा हुआ और संस्था के सचिव अथवा प्राधिकृत पदाधिकारी द्वारा हस्ताक्षरित आवेदन-पत्र और वित्तीय विवरण।

(उपर्युक्त सभी दस्तावेज राजपत्रित अधिकारी द्वारा अनुप्रमाणित होने चाहिए)

- गैर-सरकारी/स्वैच्छिक संगठन का बैंक खाता, सम्पर्क करने के लिए पता और टेलीफोन नम्बर तथा ई-मेल आई.डी. यदि हो तो।

(ख) अनुदान राशि का उपयोग

केन्द्रीय समाज कल्याण बोर्ड द्वारा मंजूर/बंटित अनुदान राशि के सम्बन्ध में परीक्षित तथा चार्टर्ड एकाउन्टंेट की मोहर सहित परीक्षित लेखा-विवरण तीन फार्मों अर्थात प्राप्ति एवं भुगतान, आय एवं व्यय तथा तुलना-पत्र में उपयोगिता प्रमाण-पत्र सहित भेजे जाएं। यह लेखा-विवरण वित्त वर्ष जिसके लिए अनुदान राशि मंजूर/बंटित की गई हो, की समाप्ति के एक माह की अवधि के भीतर इस कार्यालय में प्राप्त हो जाना चाहिए। पिछले वर्ष के लेखा-विवरण के निपटान और कार्यक्रम के संचालन के सम्बन्ध में केन्द्रीय बोर्ड या राज्य बोर्ड के प्राधिकृत अधिकारी से संतोष जनक रिपोर्ट प्राप्त होने के बाद ही नए अनुदान का बंटन किया जाएगा।

4.3.9 स्वैच्छिक कार्य ब्यूरो (Volunatry Work Bureau)

केन्द्रीय समाज कल्याण परिषदकी स्वैच्छिक कार्य ब्यूरो ने मई, 1982 में कार्य शुरू किया था। इसने पारिवारिक झगड़ों, महिलाओं और शिशुओं के शोषण के मामले उठाये और नागरिकों में समाज चेतना और जागृति उत्पन्न की। यह कार्य परामर्श सेवाओं और दलों के सहायता के मार्ग से न्यायालय के बाहर मैत्री पूर्ण समझौता करवाने के माध्यम से होता रहा है। इस प्रकार से पीड़ितों को अल्पकालीन निवास सुविधा, वैधानिक सहायता और जरूरत पड़ने पर पुलिस की सहायता भी प्रदान की जाती है। बाद में, दिसम्बर, 1984 में परिवार परमर्श केंद्र स्थापित करने के लिए स्वैच्छिक संस्थाओं को वित्तीय सहायता की योजना भी षुरू की गयी स्वैच्छिक कार्य ब्यूरो और परिवार परामर्श केन्द्र, जो पहले प्रयोगात्मक आधार पर शुरू हुए थे, अब मंडल के सर्वाधिक महत्वपूर्ण कार्यक्रम हैं।

4.4 राज्य समाज कल्याण परामर्श (State Social Welfare Advisory Board)

केन्द्रीय समाज कल्याण परिषद की स्थापना 1953 में हुई थी ताकि सारे देश में कार्यशील स्वैच्छिक संगठनों को अनुदान राशि प्रदान करके तकनीकी परामर्श और वित्तीय सहायता दी जाये। परिषद के गठन के तुरन्त बाद परिषद के कार्यक्रमों के क्रियान्वयन के लिए राज्यीय स्तर पर संगठनों के गठन की आवशयकता अनुभव की जाने लगी। सारे देश में फैले हुए स्वैच्छिक समाज कल्याण संगठनों के सही काम का मूल्यांकन करना परिषद के लिए कठिन हो गया। यह परिषद उन संग्ठनों को इस तथ्य को दृष्टिगत न करते हुए भी सहायता करना चाहता था कि उसके

बहुत से सदस्य गैर- सरकारी समाज कार्यकर्ताओं में से लिए गये थे। वे कार्यकर्ता भारत के अनेक प्रदेशों के स्वैच्छिक संगठनों के साथ जुड़े हुए थे। परिषद के पास स्थानीय नेतृत्व के विषय में कोई विशिष्ट जानकारी न थी। स्थानीय नेतृत्व को प्रशासनिक और निर्वाहक कार्य दिये जा सकते थे। परिषदने सभी प्रदेशों में जाकर समाज कल्याण कार्यो के क्षेत्र में लगी स्वैच्छिक संस्थाओं के कार्य का अध्ययन करने की दृष्टि से तदर्थ समितियों की नियुक्ति की। इन पैनलों ने प्रान्तीय स्तर पर समाज कल्याण परामर्श मण्डलों के गठित किये जाने का अनुमोदन किया था ताकि वे परिषद केन्द्रीय समाज कल्याण परिषद के कार्यक्रमों और कार्यो को आगे बढाने में सहायक हो सकें।

4.4.1 राज्य समाज कल्याण परिषदों की संरचना (Structure of State Social Welfare Advisory Board)

केन्द्रीय समाज कल्याण परिषद ने अपनी अनुच्छेद - विज्ञप्ति में प्रान्त मण्डलों की संरचना पद्धति को इस प्रकार दर्शाया है - भाग ग्रहण करने वाले प्रत्येक प्रान्त/केन्द्रशासित प्रदेश में एक प्रान्तीय समाज कल्याण परामर्श परिषद होना आवश्यक है। अध्यक्ष को छोड़ प्रान्तीय समाज कल्याण परिषद के द्वारा सौंपे जाते हैं। अध्यक्ष को छोड़ प्राप्तीय समाज कल्याण परिषद के आधे सदस्य प्राप्त सरकार/केन्द्रषासित प्रदेश द्वारा अनुमोदित होते है और आधे केन्द्रीय समाज कल्याण परिषद के द्वारा। परिषदके अध्यक्ष पद के लिए हो सकें तो, महिला समाज कार्यकत्री को रखा जाए जिसका चयन प्रान्तीय सरकार केन्द्रीय समाज कल्याण परिषद के साथ परामर्श करके करें।

राज्य समाज कल्याण परामर्श मण्डलों की सदस्यता केन्द्रीय समाज कल्याण परिषद की पद्धति पर ही आधारित है। उनमें गैर सरकारी महिला सदस्य होते है जिन्हें स्वैच्छिक संस्थाओं में समाज कार्य का अनुभव होता है। उनमें वे अधिकारी भी होते हैं जो सरकार का प्रतिनिधित्व समाज कल्याण विभागों से करते हैं। महिला कार्यकर्ता विकास कमिश्नर के निदेशालय, शिक्षा निदेशालय और स्वास्थ्य निदेशालय के अधिकारी भी इनमें शामिल होते है। गैर - अधिकारी सदस्यों के चयन में केन्द्रीय समाज कल्याण परिषद और प्रदेश सरकार से आधे - आधे सदस्य लिए जाते है। भारत की संघीय संरचना के यह अनुकूल ही है जहाँ प्रान्तों की ओर समुचित ध्यान दिया जाता है। प्रान्तीय समाज कल्याण परिषद के द्वारा मनोनीत सदस्यों में से दो सदस्य प्रान्तीय विधान सभा के और प्रत्येक जिले का एक स्वैच्छिक समाज कार्यकर्ता प्रतिनिधित्व करें। प्रान्तीय परिषद की अध्यक्ष मुख्य विधायिका अधिकारी होते है। वह सचिवालय के सचिव और सचिवालय के कर्मियों केन्द्रीय परिषद के निरीक्षक कर्मियों ब्लाक स्तर पर कार्यसमिति, जिसे प्रान्तीय सरकार तथा परियोजना कर्मियों द्वारा बनाया गया है, के द्वारा सहायता की जाती है।

4.5 सारांश(Summary)

सारांश के रूप में केन्द्रीय समाज कल्याण बोर्ड समाज में महिलाओं के कल्याण, विकास और सशक्तीकरण के लिए गैर-सरकारी संगठनों और स्वैच्छिक संगठनों के साथ रचनात्मक भागीदारी सुनिश्चित करना तथा इस कार्य के लिए ऐसे अधिक से अधिक संगठनों को बढ़ावा देना

4.6 अभ्यासार्थ प्रश्न (Question for Practice)

(1) केन्द्रीय समाज कल्याण परिषद की अवधारणा का उल्लेख कीजिए।

(2) केन्द्रीय समाज कल्याण परिषद के उद्देश्यों को समझाइये।

(3) केन्द्रीय समाज कल्याण परिषद के प्रकार्यो को स्पष्ट कीजिए।

(4) राज्य समाज कल्याण परामर्श परिषदकी अवधारणा का उल्लेख कीजिए।

(5) निम्नलिखित पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए।

(अ) औद्योगिक कार्यक्रम प्रशासनिक विभाग

(ब) संगठात्मक एवं प्रशासनिक संरचना

(स) केन्द्रीय समाज कल्याण परिषद की मूल निपुणताएं

(द) राज्य समाज कल्याण परिषदों की संरचना

4.7 सन्दर्भ पुस्तकें (reference Books)

Singh, S.k, and Mishra, P.D.k, Samaj Karya: Itihas, Darshan Evam Pranaliyan, NRBC, Lucknow, 2004.

Soodan, K.S.k, Samaj Karya: Siddhant evam Abhyas, N.k. S.k. Publication, Lucknow, 2011.

Sharma, P.k,and Sharma, H.k,Lok Prashashan: Siddhant evam Vyavhar, College Book Depot, New Delhi, 1996.

Singh, S.k,and Soodan, K.S.k, (ed.), Horçon of Social Work, Jyotsna Publication, Lucknow, 1986.

Kulkarni, V.k,M.k,Essay on Social Administration, Delhi Research Publication in Social Sciences, 1972.

Singh, D.k, K.k, Bharat mein Samaj Kalyan: Avdharna, Prashsshan evam Karyakram, NRBC, Lucknow, 2012.

Singh, S.k,and Verma, R.k, B.k,S.k~,Bharat mein Samaj Karya ke Kshetra, NRBC, Lucknow

इकाई-5

समाज कल्याण प्रशासन: केन्द्रीय, राज्य एवं अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर

इकाई की रूपरेखा

5.0 उद्देश्य (Objectives)

5.1 प्रस्तावना (Preface)

5.2 भूमिका (Introduction)

5.3 केन्द्रीय स्तर पर समाज कल्याण प्रशासन (Social Welfare Administration at Central Level)

5.4 राज्य स्तर पर समाज कल्याण प्रशासन (Social Welfare Administrative at State Level)

5.5 अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर समाज कल्याण (Social Welfare Administrative at International Level)

5.6 सारांश (Summary)

5.7 अभ्यास प्रश्न (Question for Practice)

5.8 सन्दर्भ पुस्तकें (Reference Books)

5.0 उद्देश्य (Objectives)

प्रस्तुत अध्याय के अध्ययन के बाद आप -

1. केन्द्रीय स्तर पर समाज कल्याण प्रशासन अर्थ, उद्देश्यों, कार्यो एवं संरचना के विषय में जानकारी प्राप्त कर सकेंगे |
2. राज्य स्तर पर समाज कल्याण परामर्श का प्रशासन उद्देश्यों, कार्यो एवं संरचना को जान जायेंगे |
3. अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर समाज कल्याण प्रशासन कार्यो एवं संरचना से अवगत हो जाएँगे |

5.1 प्रस्तावना

समाज कल्याण ,समाज की विविध समस्याओं को हल करने के लिए निर्धारित किया गया एक लक्ष्य है। सामाजिक जीवन का प्रत्येक पहलू इसके अन्तर्गत सम्मिलित है। समाज कल्याण के अन्तर्गत उन दुर्बल वर्गो के लिए आयोजित सेवाएँ आती हैं, जो किसी सामाजिक, आर्थिक, शारीरिक, या मानसिक बाधा के कारण उपलब्ध सामाजिक सेवाओं का उपयोग करने में असमर्थ हो अथवा परंपरागत धारणाओं और विश्वासों के कारण उनको इन सेवाओं से वंचित रखा जाता है। समाज कल्याण प्रशासन के अंतर्गत दुर्बल वर्गो के लिए विभिन्न स्तरों पर समाज कल्याण सेवाओं का प्रशासन किया जाता है।

5.2 भूमिका

समाज कल्याण प्रशासन का आशय जन सामान्य के लिए बनायी गयी एवं सामुदायिक सेवाओं जैसे स्वास्थ्य, आवास शिक्षा और मंनोरजन के प्रशासन से है। इसे समाज सेवा प्रशासन के पर्यायवाची शब्द के रूप में समझा जाता है। समाज कल्याण प्रशासन द्वारा सामाजिक संस्था अपनी निर्धारित नीति और उद्देश्यों की पूर्ति के हेतु समाज कल्याण कार्यक्रमों के आयोजनों के लिए व्यावसायिक कुशलता और सामथ्र्य का उपयोग करती है। समुदाय को प्रभावशाली और सुदृढ़ सेवाएँ प्रदान करने के लिए सामाजिक संस्था को कुछ प्रशासनिक, वित्तीय और विधि सम्बन्धी नियमों का पालन करना पड़ता है। इन्ही तीनों के सम्मिश्रण को 'समाज कल्याण प्रशासन' का नाम दिया गया है।

5.3 केन्द्रीय स्तर पर समाज कल्याण प्रशासन

कल्याणकारी राज्य की अवधारणा के निर्वहन में केन्द्र सरकार की महत्वपूर्ण भूमिका है। गत वर्षो में समाज कल्याण एक स्वतंत्र विभाग के रूप में या किसी संयुक्त विभाग के भाग के रूप में काम करता रहा है। कल्याण कर्ता के सृजन की दृष्टि से किए गए आरम्भिक प्रयासों में जून, 1964 में समाज प्रतिरक्षा के विभाग की स्थापना हुई ताकि शिक्षा, गृहकार्यो, स्वास्थ्य, श्रम, वाणिज्य और उद्योग मंत्रालयों में समाज कल्याण से सम्बन्धित विषयों की देख रेख की जा सके। जनवरी 1966 में समाज प्रतिरक्षा विभाग को समाज कल्याण विभाग का नाम दिया गया और अगस्त, 1979 में इसे स्वतंत्र मंत्रालय कर दर्जा दिया गया। इसका नाम शिक्षा और समाज कल्याण मंत्रालय रखा गया। सन् 1984 में इस मंत्रालय का नाम समाज और महिला कल्याण रखा गया। 25 सितम्बर, 1985 से कल्याण मंत्रालय बना जिसके साथ अनुसूचित जातियों, अनुसूचित जनजातियों से सम्बन्धित विषय को जोड़ दिया गया। ये विषय गृह मंत्रालय तथा समाज और महिला कल्याण मंत्रालय से लिए गए थे। 6 जनवरी, 1986 से कल्याण मंत्रालय के साथ वक्फ का कार्य भी जोड़ दिया गया। महिला और बाल विकास को मानव संसाधन विकास के 29 मंत्रालय के अन्तर्गत गठित किया गया।

समय-समय पर अनेक समितियों, अध्ययन दलों, और अधिवेशनों के द्वारा केन्द्र में एक अलग विभाग या मंत्रालय की आवश्यकता पर बल दिया गया। उदाहरण के रूप में, भारतीय समाज कार्य अधिवेशन ने 1956 में तत्कालीन प्रधानमंत्री को समाज कल्याण के केन्द्रीय मंत्रालय की स्थापना के लिए ज्ञापन दिया था। उसमें कारण ये थे कि लोगों में समाज कल्याण विषयक आवश्यकताओं का समाधान समेकित ढ़ंग से होना चाहिए। उसमें एक प्रगतिशील सामाजिक दृष्टिकोण तथा दर्शन चाहिए। देश के सीमित संसाधनों का अधिकाधिक उपयोग करके मनुष्यों को प्रशिक्षण दिया जाए, उन्हें वैज्ञानिक सामग्री दी जाए। योजना आयोग ने भी इस तरह के मंत्रालय की आवश्यकता पर जोर दिया था।

मैदानी परियोजना, योजना आयोग पर समिति के द्वारा 1958 में समाज कल्याण और पिछड़ी जातियों के कल्याण पर अध्ययन दल जो रेणुका राय समिति के रूप में था, उसने कहा था कि अनेक समाज कल्याण विषयों पर विविध मंत्रालयों ने विचार किया था। समाज कल्याण की योजनाओं और नीतियों को समेकित दृष्टि और दिशा का लाभ नही था। अतः इसके समाज कल्याण विभाग की स्थापना का अनुमोदन किया। इसने यह भी सुझाव दिया की जो कार्य युवा कल्याण से सम्बन्धित है, जो मनोरंजनात्मक सेवाएँ है, जो विकलांगों की शिक्षा और उनका कल्याण है, शिक्षा मंत्रालय के द्वारा जो समाज कार्य शोध और प्रषिक्षण होता है, वह सब तथा वह जिसका सम्बन्ध भिक्षा और आवारागर्दी, युवा अपराध और सुरक्षा, सामाजिक और नैतिक स्वास्थ्य से है तथा गृह मंत्रालय के साथ सम्बन्धित संस्थाओं के सुधार गृहों से मुक्त किए गए लोगों के पुर्नवास के जो कार्य है-उन सब को समाज

कल्याण के नये विभाग में स्थानान्तरित कर देना चाहिए। अध्ययन दल ने यह भी सुझाव दिया था कि राष्ट्रीय समाज कल्याण नीति, कर प्रशासन, प्रान्तीय सरकारों के द्वारा समाज कल्याण योजनाओं को सुधारना, सामाजिक विषयों पर शोध को बढ़ावा देना, कल्याण प्रशासकों के एक केन्द्रीय बल का गठन और प्रशासन।

भारत सरकार का प्रशासनिक तंत्र और उसके कार्य की प्रविधि का निरीक्षण करने के लिए प्रशासनिक सुधार समिति के द्वारा नियुक्त किये गये अध्ययन दल ने 1967 में अपने प्रतिवेदन में सुझाव दिया था के पुनर्वास के द्वारा कल्याण एक ही विभाग के अन्तर्गत रखा जाए और इस विभाग को पुनः श्रम और रोजगार विभाग के साथ जोड़ा जाए, रोजगार और समाज कल्याण मंत्रालय का गठन किया जा सके। इसने यह भी अनुमोदन किया था कि दानशील तथा धार्मिक संस्थाओं की विधि मंत्रालय से निकाल कर सूचित नये विभाग में स्थानान्तरित किया जाए जिससे इस क्षेत्र में जनभावना को विकसित करने में तथा सरकार के समाज कल्याण कार्यक्रमों पर अधिक प्रभाव डाला जा सकें। इस दल का यह भी विचार था कि समाज कल्याण को स्वास्थ्य तथा परिवार नियोजन से सम्बन्धित होने के कारण समाज कल्याण विभाग से निकलकर स्वास्थ्य परिनियोजन और क्षेत्रीय नियोजन के सुझाए गये मंत्रालय में जोड़ा जाए।

5.3.1 प्रशासनिक संरचना (Administrative Structure)

कल्याण मंत्रालय में एक मंत्री, राज्य मंत्री और उपमंत्री रहता है। विभाग दो हिस्सों में बाँटा जाता है। एक में कल्याण सचिव मुख्य रहता हैं और दूसरे में महिला और शिशु कल्याण सचिव। कल्याण सचिव के साथ एक सहायक सचिव रहता हैं। कल्याण के विभिन्न पक्षों को ध्यान में रखते हुए कल्याण विभाग सात खण्डो में विभक्त है। उनमें पाँच खण्डों के अध्यक्ष महासचिव है और दूसरे दो वित्तीय सलहाकार और एक निदेशक की अध्यक्षता में कार्य करते है। इन खण्डों का व्यापक विभाजन इस तरह से है:-

- वित्तीय खण्ड,
- विकलांग कल्याण खण्ड,
- अल्पसंख्यक खण्ड,
- अनुसूचित जाति विकास खण्ड,
- समाज प्रति रक्षा और शिशुकल्याण खण्ड,
- कबीला विकास खण्ड, और
- वक्फ खण्ड।

महिला और शिशुकल्याण विभाग के सचिव के साथ सहायक सचिव रहते है। प्रत्येक खण्ड में निदेशक, उपसचिव, अधिसचिव, संयुक्त निदेशक तथा अन्य अधिकारी रहते है ताकि मंत्रालय के विशिष्ट खण्डों से सम्बन्धित कार्यो को सँभाल सके।

मंत्रालय के लोक सभा सदस्यों की एक परामर्श समिति भी होती है जो मंत्रालय से सम्बन्धित विषयों का पुनरीक्षण करते है। वे मंत्रालय को सामान्य कल्याण तथा वर्गगत दलों से सम्बन्धित विषयों पर परामर्श देते है।

मंत्रालयों को अपने कार्यो में कई अधीनस्थ संगठनों, राष्ट्रीय समितियों और राष्ट्रीय संस्थाओं में सहायता मिलती है जिन पर इसका प्रशासनिक नियन्त्रण होता है। ये राष्ट्रीय संस्थाएँ है: केन्द्रीय समाज कल्याण मण्डल, अनुसूचित जातियों एवं अनुसूचित जनजातियों के लिए राष्ट्रीय समिति, अल्पसंख्यक आयोग, समाज प्रतिरक्षा की

राष्ट्रीय संस्था, जनसहयोग और शिशुविकास राष्ट्रीय संस्थान, विकलांगों के लिए राष्ट्रीय संस्थान, पुनर्वास, प्रशिक्षण और शोध का राष्ट्रीय संस्थान, बहिरों के लिए अली यावर जंग जैसी राष्ट्रीय संस्थान, मनोरोगियों के लिए राष्ट्रीय संस्थान, अनुसूचित जातियाँ और अनुसूचित जनताजियों के लिए कमिश्नर, भाषाई अल्पसंख्यक कमिश्नर, कृत्रिम अंग निर्माण निगम आफ इण्डिया लिमिटेड, राष्ट्रीय अनुसूचित जातियों एवं जनजातियों का वित्तीय निगम और जनजाति सहयोग, मार्केटिंग विकास संघ आफ इण्डिया लिमिटेड।

5.3.2 मंत्रालय के क्रियाकलाप (Activities of Ministry)

इस मंत्रालय को बहुत से विषय दिये गये है और तदनुसार समाज के विभिन्न वर्गो के कल्याण से जुड़े इसके कार्य भी विविधमुखी है, जो कि निम्नवत् है-

समाज के अनेक वर्गो का कल्याण

मंत्रालय ने अनेक वर्षों से समाज के विभिन्न वर्गो के कल्याण के लिए अपना ध्यान केन्द्रित किया है तथा इसने अनुसूचित जातियों, अनुसूचित जनजातियों, अल्पसंख्यों, विकंलागों, स्त्रियों और बच्चों, युवको, वृद्धों, नशाखोरों के कल्याण कार्यों को हाथ में लिया है तथा और भी विषयों जैसे समाज प्रतिरक्षा, समाज सुरक्षा और समाज कल्याण को अपनाया है।

कार्यक्रमों की नीति, योजना और क्रियान्वयन

विकासात्मक कार्यों की अपेक्षा रखने वाले अनेक वर्गों के विकास कार्यक्रमों की नीति, योजना और उनका क्रियान्वयन करना-ये सब कार्य इस कल्याण मंत्रालय के द्वारा किये जाते हैं।

केन्द्रीय और केन्द्र द्वारा अपनायी योजनाओं का संचालन

मंत्रालय केन्द्रीय तथा केन्द्र द्वारा अपनाये कल्याण कार्यक्रमों का संचालन करता है। केन्द्रीय योजनाओं में ये शमिल है-महिलाओं के लिए क्रियात्मक साक्षरता, प्रौढ़ महिलाओं के शिक्षा शिविर, सामाजिक आर्थिक कार्यक्रम, कामकाजी महिलाओं के आवासगृह, अन्धों-बहरों, मनोरोगियों और शरीर से विकलांगों के लिए राष्ट्रीय संस्थान, अपंगों के लिए स्वैच्छिक संगठनों को छात्रवृत्तियों, शोध, प्रशिक्षण, अनुदान राशि, कृत्रिम अंग निर्माण निगम, समाज प्रतिरक्षा राष्ट्रीय संस्थान, जन-सहयोग और शिशुविकास का राष्ट्रीय संस्थान, समाज शिक्षा कार्य तथा प्रशिक्षण, योजना शोध, पुनरीक्षण, शोध-कार्यक्रम, केन्द्रीय समाज कल्याण मण्डल के द्वारा स्वैच्छिक संस्थाओं को दी गई अनुदान राशि और इनकी क्षेत्रीय इकाईयों को मजबूत करना, अखिल भारतीय स्वैच्छिक संस्थाओं को अनुदान राशि, कामकाजी महिलाओं के बच्चों के लिए शिशुगृह देख रेख केन्द्र और नशाबन्दी के लिए शिक्षा और नशाखोरी की रोकथाम।

केन्द्र द्वारा संचालित योजनाओं में देखरेख और सुरक्षा की अपेक्षा रखने वाले बच्चों के लिए सेवाएँ, समेकित शिशु विकास सेवाएँ, निराश्रित महिलाओं और शिशुओं का कल्याण, शारीरिक विकलांगों की समेकित शिक्षा, विकलांगों कीविशेष रोजगार दफ्तरों के माध्यम से नियुक्तियाँ, रोजगार के सामान्य कार्यालयों मेंविशेष अधिकारियों की नियुक्तियाँ।

छठी योजना में (1980-85) केन्द्रीय तथा केन्द्र द्वारा अनुमोदित योजना के लिए 150 करोड़ की धनराशि रखी गई जबकि प्रदेश/केन्द्रशासित प्रदेशों के लिए यह राशि, 122 करोड़ थी। मंत्रालय का कुल योजना बज्ट छठी योजना के 1396 करोड़ रूपये की अपेक्षा सातवीं (1985-90) में 2029.57 करोड़ रूपये हो गया था।

प्रदेश को मार्गदर्शन तथा निर्देश

समाज कल्याण के राट्रीय लक्ष्यों जैसे निर्धनता को कम करना, असमानता को कम करना, आत्मनिर्भरता को बढ़ावा देना-की पूर्ति के लिए कल्याण मंत्रालय प्रदेशों को नीति निर्देश और मार्गदर्शन देता है।

योजना आयोग के साथ मेल

मंत्रालय योजना आयोग से मिलकर अपनी योजनाओं और राशि के आवंटन के विषय में बातचीत करता है, ताकि योजनाओं के लिए और प्रदेशों के लिए धनराशि पंचवर्षीय और वार्षिक योजनाओं के लिए तय की जाती है। साथ ही अवसर पाकर प्रान्तों में क्रियान्वित किये जा रहे कार्यक्रमों का पुनरीक्षण भी किया जाता है।

प्रदेश मंत्रियों/समाज कल्याण सचिवों के अधिवेशन बुलाना

मंत्रालय प्रदेश समाज कल्याण मंत्रियों तथा समाज कल्याण सचिवों के वार्षिक अधिवेशन बुलाता है ताकि देश के विभिन्न भागों में चल रहे कल्याण कार्यक्रमों की जानकारी मिल सके, उनकी जरूरतों एवं समस्याओं से परिचित हो सके, ताकि उनमें परिवर्तन तथा सुधार लाया जा सके जिससे सारे देश के लोगों का संतुलित विकास और कल्याण हो सके।

आयोगों, समितियों/अध्ययन दलों का गठन

मंत्रालय समय-समय पर समितियों, अध्ययन दलों, कार्यकारी वर्गो इत्यादि, जिनमें शैक्षणिक तथा तकनीकी क्षेत्रों से गैर अधिकारी भी शामिल किये जाते है, गठन करते है, ताकि वे सामयिक नीतियों और कार्यक्रमों का पुनरीक्षण कर सके, उभरती हुई प्रवृत्तियों का अध्ययन कर सके और अनुमोदन कर सके। विगत वर्षो में इनमें से कुछ समितियाँ और कार्यशील वर्ग पंचवर्षीय योजना (1980-85) में समाज कल्याण के कार्यशील वर्ग, शिशुश्रम के रोजगार पर कार्यशील वर्ग, भारत में महिलाओं पर राष्ट्रीय आयोग, स्वरोजगारी महिलाओं पर राष्ट्रीय आयोग, गैर-औपचारिक सैक्टर में महिलाओं पर राष्ट्रीय आयोग, नशा बन्दी और नशाखोरी पर केन्द्रीय समिति, अन्तमंत्रालयीय समिति जिसने बड़े-बूढ़ों के कल्याण के लिए अनेक पग उठाने की सिफारिश की और वृद्धों के लिए एक राष्ट्रीय नीति के मसौदे पर विचार करने का प्रस्ताव रखा।

इस मंत्रालय ने कुछ और समितियों का गठन किया है-जैसे राट्रीय शिशुमण्डल, महिलाओं पर राष्ट्रीय समिति, समाज कल्याण पर परामर्श समिति, पोषक आहार कार्यक्रमों पर केन्द्रीय क्रियान्वयन समिति तथा सहायता-प्राप्त कार्यक्रमों के लिए क्रियान्वयन समिति।

स्वैच्छिक संस्थाओं को सहायता

भारत में कल्याण सेवाओं के विकास में स्वैच्छिक संस्थाओं ने महत्वपूर्ण भूमिका निभायी है। उनके महत्वपूर्ण योगदान के कारण कल्याण मंत्रालय उन स्वैच्छिक संस्थाओं को जो कम लाभ पाने वाले वर्गो को सहायता देने में लगी हैं । 1987-1988 में स्वैच्छिक संस्थाओं को प्रदान की गई कुल आर्थिक सहायता 1186.70 लाख रूपये थी। मंत्रालय स्वैच्छिक संगठनों को संगठनात्मक सहायता देता है जिससे उन संगठनों को अनुदान राशि देकार स्वैच्छिक प्रयास को बढ़ाया जाए जो संगठन मुख्यता कल्याण कार्यो में लगे हुए हैं और जिनके विविध कार्यो में समन्वय लाने के लिए एक केन्द्रीय कार्यालय को खोलने की जरूरत है।

सूचना और सर्वजन शिक्षा कार्य

मंत्रालय ने सूचना और एक सर्वजन शिक्षा प्रकोष्ठ की स्थापना की है ताकि अनेक समाज कल्याण योजनाओं और कार्यक्रमों के प्रति जागृति पैदा की जा सके और सामाजिक कुरीतियों जैसे शराब, नशाखोरी, भीख, इत्यादि के प्रति स्वैच्छिक कार्य को उत्साहित किया जाए, विकलांगों, बूढ़ों और कुष्ट रोगियों के प्रति सकारात्मक सामाजिक दृष्टिकोण को बढ़ाया जाय और समाज में उनकी उचित भूमिका को पहचाना जाय। इस इकाई ने रेडियों कार्यक्रम करवायें है और मंत्रालयों के कार्यो इनर इन्स्टिंक्ट के प्रचार के लिए कई वृत्तचित्र निर्मित किये गये हैं। एक फिल्म जो बाल अपराधी पर बनी थी और मंत्रालय को 34 वे राष्ट्र फिल्मोत्सव पर उस पर ईनाम मिला था। वह पुरस्कार रजत कमल पुस्कार था, क्योंकि समाज चेतना पर सर्वोकृष्ट वृत्तचित्र था।

प्रकाशन

मंत्रालय ने समाज कल्याण आकड़ों पर 1974 से एक हस्त पुस्तिका छपवानी आरम्भ की थी जो समाज कल्याण कार्यक्रमों और नीतियों के आकड़ें प्रदान करती है। प्रकाशन का 1986 का संस्करण इस श्रृंखला में चैथा प्रकाशन है जिसका शीर्षक ''कम्पाइलेशन ऑफ वेलफेयर स्टैस्टिक्स'' है यह एक संक्षिप्त रूप में मंत्रालय के कार्यक्रमों और उपलब्धियों को समेकित चित्र प्रदान करता है, मंत्रालय का एक और शानदार प्रकाशन है ''इन्साइक्लोपीडिया ऑफ सोशल वर्क इन इण्डिया'' जिसका द्वितीय संस्करण 1987 में चार भागों में प्रकाशित हुआ था। यह व्यापक रूप में विविध विषयों का स्पर्श करता है जैसे नीति और विकास, समाज सेवाएँ, सामान्य समाज कल्याण, शिशु एवं महिला कल्याण वृद्धों और विकलांगों का कल्याण, पिछड़ी जातियों का कल्याण स्वैच्छिक प्रयास, शोध और मूल्यांकन, योजनाओं और नीतियों, समाज कार्य शिक्षा और प्रशिक्षण, समाज प्रतिरक्षा, समाज कार्य पद्धतियाँ, समाज कल्याण प्रशासन, अन्तर्राष्ट्रीय समाज कल्याण इत्यादि। यह पुस्तक एक संदर्भ-ग्रन्थ के रूप में समाज कल्याण में रूचि रखने वाले सभी व्यक्तियों के लिए मूल्यावान है।

शोध, मूल्यांकन और प्रमापीकरण

मंत्रालय अपने क्षेत्रों में शोध और मूल्यांकन अध्ययन को हाथ में लेता है। इसमें सामाजिक समस्याओं को जानने में पर्याप्त सहायता मिलती है जिससे प्रभावी योजना, नीति निर्माण और समाज के कमजोर वर्गो के लिए कार्यक्रमों को लागू करने में सुविधा रहती है। इस तरह इकट्ठी की गई सूचना व्यापक प्रयोग के लिए दस्तावेजी हो जाती है।

केन्द्र के द्वारा अनुमोदित शोध एवं प्रशिक्षण की योजना के द्वारा मंत्रालय विश्वविद्यालयों, संगठनों और समाज विज्ञान शोध संस्थाओं को वित्तीय सहायता देता है, ताकि अनुसूचित जातियों के विकास के लिए कार्योंमुखी शोध और मूल्यांकन अध्ययन की जा सके। प्राप्त सुझावों को मंत्रालय के द्वारा गठित शोध परामर्शन समिति के द्वारा जाँचा और पारित किया जाता है। इसी तरह जनजाति शोध संस्थाएँ भरपूर मात्रा में विकास प्रयास में शोध, मूल्यांकन, आँकड़ा संग्रह, प्रशिक्षण आदि के द्वारा सहायता देती है। ये संस्थाएँ जनजातियों के लिए उपयोजना दस्तावेज तैयार करके उनके काम धन्धों में उन्हें सहायता देती है। एक केन्द्रीय जनजाति शोध परामर्श समिति इन संस्थाओं का पथ-प्रदर्शन करती है तथा इनके क्रियाकलापों का समन्वय करती है।

मंत्रालय समाज कल्याण, समाज नीति और समाज विकास के क्षेत्रों में शोध एवं मूल्यांकन अध्ययन को प्रोत्साहित करता है ताकि योजना और नीति निर्माण तथा कार्यक्रमों के प्रभावी क्रियान्वयन में सुविधा हो सके और साथ ही मंत्रालय शीर्ष सार्वजनिक हस्तक्षेप वाली योजना नीतियों और सामाजिक समस्याओं को दृष्टि में रखते हुए व्यवहारिक प्रकृति वाले शोध परियोजनाओं को वरीयता देता है।

द्विपक्षीय समझौते का संचालन

मंत्रालय राहत सहायता के लिए भारत सरकार के साथ जर्मनी, स्वीडन, स्विटजरलैण्ड, इंग्लैण्ड और अमेरिका के सरकारों के साथ उपहार या अनुग्रह सामग्री पर द्विपक्षीय समझौतों का संचालन करता है ताकि निर्धन और जरूरतमंद लोगों को अनुग्रह सामग्री की प्राप्ति हो सके। वे चीजे है अन्न, दूध का पाउडर, मक्खन से बने खाद्य पदार्थ, औश धियाँ, दवाईयाँ, अनेक विटामिन वाली गोलियाँ, अस्पताल की सामग्री जैसे एम्बुलेंस, सचल औषधालय धालय कृषि सामग्री इत्यादि। मंत्रालय इन वस्तुओं के उचित स्थानों पर पहुँचाने के लिए देश के भीतर परिवहन व अन्य सम्बन्धित व्ययों को भी वहन करता है ।

अन्तर्राष्ट्रीय अधिवेशनों, सम्मेलनों और कार्यशलाओं में भाग लेना

मंत्रालय क्षेत्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय अधिवेशनों, सम्मेलनों, कार्यशालाओं और प्रशिक्षण कार्यक्रमों में भाग लेने के लिए अपने प्रतिनिधि भेजता है जैसा कि इसने वियाना में नशाखोरी और नशीली दवाईयों के विषय में हुए अन्तर्राष्ट्रीय अधिवेशनों में, मनीला में नशाखोरी के रोकथाम के लिए सामुदायिक संसाधनों के उपयोग पर यू0 एन0 कार्यशाला में, वाशिंगठन, संयुक्त राज्य अमेरिका में विकलांगता तथा पुनर्वास शोध के राष्ट्रीय संस्थान में, जो संयुक्त राज्य सहायता डी.एम.टी. परियोजना के अन्तर्गत तथा जापान में हुए पाँचवे समाज कल्याण एक्सपर्ट अध्ययन कार्यक्रमों में प्रतिनिधि भेजकर 1987-88 इत्यादि में किया था। कल्याण मंत्रालय की ऊपर बताई गई गतिविधियाँ समाज कल्याण के विभिन्न क्षेत्रों में इसकी व्यस्त सहभागिता का पूर्णतया प्रतिनिधित्व नहीं करती। पिछले वर्षों में ये क्रियाएँ बढ़ी है , क्योंकि मंत्रालय का समाज के विभिन्न मन्त्रालय की गतिविधियों में और अधिक वृद्धि होने की सम्भावना है, क्योंकि जनसंख्या बढ़ रही है, निर्धनता घट नहीं रही है, अपराध बढ़ रहे हैं, समाज की दुर्बल श्रेणियों पर आत्याचार बढ़ रहे है, आतंकवाद बढ़ रहा है जिससे लोगों का एक स्थान में चले जाने की स्थितियाँ देश में बढ़ी है , इत्यादि।

5.3.3 महिला और शिशु विकास विभाग: मानव संसाधन विकास मंत्रालय

शिशु कल्याण और महिला विकास के विषयों पर पहले शिक्षा और समाज कल्याण मंत्रालय का दायित्व था। सितम्बर, 1985 में जब केन्द्रीय मंत्रालयों का पुनर्गठन हुआ और जब मानव संसाधन विकास स्थापित हुआ, तब महिला और शिशु विकास विभाग भी इसी के अन्तर्गत रख दिया गया। युवा कार्यो और खेलों तथा महिलाओं और शिशुओं के विकास के लिए इस विभाग का अध्यक्ष एक राज्य मंत्री होता है। विभाग में दो ब्यूरो होती है-

- पोषक आहार और शिशु विकास, तथा
- महिला कल्याण और विकास ।

विभाग का प्रशासनिक अध्यक्ष एक सचिव होता है जिसके दो सह-सहायक सचिव होते है। प्रत्येक एक ब्यूरो का पदाधिकारी होता है। योजना, शोध, मूल्यांकन तथा मौनिटरिंग इकाई विभाग के कार्यो को तकनीकी सहायता प्रदान करती है। केन्द्रीय समाज कल्याण मण्डल (CSWB) और जनसहयोग तथा शिशु विकास राष्ट्रीय संस्थान (NPCCD) विभाग को अपने कार्यो तथा कुछ कार्यक्रमों के क्रियान्वयन में सहायता देते है। इसके अतिरिक्त, विभाग अपने समस्त क्रियाकलापों में स्वैच्छिक संस्थाओं का सक्रिय सहयोग प्राप्त करता है।

पोषक आहार और शिशु विकास ब्यूरो एक नीति निर्धारण करने और शिशु विकास कार्यक्रमों को लागू करने के लिए उत्तरदायी है जिस तरह समेकित शिशु विकास सेवाएँ, कामकाजी और बीमार महिलाओं के बच्चों

के लिए शिशुगृह देख-रेख और देखभाल की अपेक्षा रखने वाले बच्चों का कल्याण, यूनिसेफ के कार्य का समन्वय, केयर सहायता प्राप्त कार्यक्रम, विशेष पोषक आहार कार्यक्रम इत्यादि। सर्वजन सहयोग एवं शिशु विकास का राष्ट्रीय संस्थान जो शिशु विकास कार्यों के लिए प्रशिक्षण और शोध कार्यों में रत है, यह अपने प्रशासनिक नियन्त्रण में कार्य करता है। महिला कल्याण और विकास ब्यूरो के पास नीति निर्धारण करने और उसको लागू करने का उत्तरदायित्व है। वह महिला कल्याण और विकास के कार्यक्रमों और योजनाओं को चरितार्थ करता है। एतदर्थ वह केन्द्रीय मंत्रालयों/ सम्बन्धित विभागों, महिलाओं की स्वैच्छिक संस्थाओं और केन्द्रीय समाज कल्याण मण्डल से परामर्श करता है।

विभाग को आवंटित किये गये विषयों में ये शामिल है: परिवार कल्याण, महिला और शिशु कल्याण और इस विषय के साथ सम्बन्धित दूसरे मंत्रालयों और संगठनों के क्रियाकलापों का समन्वय, महिलाओं और शिशुओं के व्यापार से सम्बन्धित यू0 एन0 से संदर्भ, स्कूल जाने से पूर्व शिशु देखभाल, राष्ट्रीय पोषक आहार कार्यक्रम, स्कूल से पूर्व शिशुओं के पोषक आहार विश यक शिक्षा में तालमेल पैदा करना, विभाग को सौपें गये विषयों से सम्बन्धित दानयुक्त और धार्मिक वृतिदान विभाग को सौपें गये विषयों पर स्वैच्छिक प्रयासों को बढ़ावा देना, दूसरे सभी सहायक तथा अधीनस्थ कार्यालय या दूसरे संगठन या उपरिर्निदिष्ट विषयों में से किसी के साथ भी सम्बधित हैं, महिलाओं तथा लड़कियों के अनैतिक व्यापार को रोकने सम्बन्धी कानून, 1956 (104 से 1956) का प्रशासन, दहेज विरोधी कानून, 1961 (25 से 1961), अमेरिकी राहत के लिए सहयोग के कार्यो का समन्वय, योजना, शोध, मूल्यांकन, अनुश्रवण परियोजना निर्माण, महिलाओं और बच्चों से सम्बधित आँकडे और प्रशिक्षण , यू0 एन0 शिशुफण्ड (UNICEF) केन्द्रीय समाज कल्याण मण्डल (CSWB) राष्ट्रीय जन सहयोग एवं बाल विकास संस्थान (NIPCCD) ।

विभाग के कार्य

विभाग समेकित शिशु विकास सेवाएँ प्रदान कर रहा है, इसके कुछ विषयों का मूल्यांकन भी कर रहा है, सभी स्तरों पर IDCS के कार्यकर्ताओं के प्रषिक्षण के प्रबन्ध भी कर रहा है, कामकाजी और बीमार महिलाओं के बच्चों के लिए शिशुगृह देख रेख केन्द्र स्थापित कर रहा है, UNICEF के साथ मिलकर अनेक कार्यक्रमों में इसकी सहायता का उपयोग कर रहा है विषेश पोषक आहार कार्यक्रमों को चला रहा है ताकि 6 वर्ष से कम आयु के बच्चों को पूरक पोषक आहार प्रदान किया जा सके तथा गर्भवती और प्रसूता महिलाओं को जो शहरों की गन्दी बस्तियों, जनजाति क्षेत्रों और पिछड़े ग्रामीण क्षेत्रों में रहती है, उन्हें भी भरपूर मात्रा में पूरक पोषक आहार दिया जा सके। आन्ध्र प्रदेश, उड़ीसा, बिहार मध्य प्रदेश के वे क्षेत्र जहाँ पोषक आहार पूरी मात्रा में नहीं मिलता है, उनके लिए ICDS कार्यक्रमों के लिए विश्व बैंक की सहायता लेना, विश्व बैंक की सहायता लेना, विश्व खाद्य कार्यक्रम को संचालित करना तथा केयर सहायता प्राप्त पोषक आहार कार्यक्रमों को चलाना, शिशु कल्याण के लिए राष्ट्रीय पुरस्कार देना, बाल दिवस मनाना और और राष्ट्रीय बाल आहार को संचालित करना। इस तरह यह विभाग प्रारम्भिक बाल सेवाएँ प्रदान करने में एकजुट है।

यह विभाग अनेक सामाजिक आर्थिक कार्यक्रमों के माध्यम से स्त्रियों के राष्ट्रीय विकास की मुख्य धारा में लाने के लिए प्रयास कर रहा है और उनको सामाजिक क्षमता तथा न्याय दिलाने में कटिबद्ध हैं। इस दिशा में एक पग यह उठाया गया है कि महिलाओं के लिए 2000 ईसवी तक एक राष्ट्रीय समृद्धि योजना बनाई गई जो एक लम्बी अवधि की योजना है और जो विकास प्रक्रिया के सिद्धान्तों और निर्देशों से चालित होती है। यह योजना स्वास्थ्य, शिक्षा और रोजगार के साथ मूल रूप से जुड़े हुए राष्ट्रीय लक्ष्यों के साथ जुड़ी है जिसे इस शताब्दी के

अन्त तक चरितार्थ करना है। राष्ट्रीय स्तर या एक राष्ट्रीय शोध केन्द्र की स्थानपा की प्रक्रिया भी आरम्भ हो चुकी है। ताकि इसके माध्यम से शोध, प्रशिक्षण और सूचना सेवाएँ दी जा सके।

महिलाओं के विकास और कल्याण के विभाग के मुख्य कार्यक्रम ये है। कामकाजी महिलाओं के लिए आवास गृह प्रदान करना, रोजगार और आमदनी देने वाली उत्पादक इकाइयाँ स्थापित करना, निम्नलिखित खण्डों में महिलाओं के प्रषिक्षण केन्द्र खोलना, कृषि, डेरी, पशुपालन, मछली पालन, खादी और ग्रामोद्योग, हथकरघा, दस्तकारी और रेशम उद्योग यहाँ महिलाएँ अधिक काम करती है। यह विभाग इस बात पर भी जोर दे रहा है कि राज्यों तथा केन्द्र शासित प्रदेशो में महिला विकास निगम स्थापित किए जाए, ताकि महिलाओं को अच्छा रोजगार मिल सके जिसके जिसके कारण वे आर्थिक दृष्टि से स्वत्रंत तथा आत्म निर्भर बन सके। मार्च से प्रतिवर्ष अन्तर्राष्ट्रीय महिला दिवस तथा 8 मार्च, 1975 से प्रतिवर्ष महिला दिवस भी यह विभाग मना रहा है।

महिलाओं और बच्चों के कल्याण में निरंतर कार्यशील अनेक स्वैच्छिक संस्थाओं को यह विभाग केन्द्रीय समाज कल्याण मण्डल के माध्यम से अनुदान राशि भी दे रहा है। जन सहयोग और बाल विकास के राष्ट्रीय संस्थान में इसने एक महिला विभाग स्थापित किया है ताकि यह विभाग महिलाओं की समस्याओं से अवगत हो सके और उनके सामाधान के लिए विख्यात परामर्शों से सलाह करके वैसे कार्यक्रम तैयार कर सके। यह विभाग राष्ट्रीय सम्मेलन करवाता रहा है, जैसे पंचायती राज और महिलाएँ इस विषय पर ऐसा कार्यक्रम हुआ। यह विभाग अन्तर्राष्ट्रीय कार्यक्रमों में भाग लेता रहा है, जैसे SARC कार्यशाला एवं अध्ययन जो आरम्भिक शिशु शिक्षा पर था। माले, मालदीव इसी तरह इसने SARC महिला दस्तकारी प्रर्दशनी (ढ़ाका) में भाग लिया। इनके अतिरिक्त विकास में महिलाओं पर तकनीकी समिति (नई दिल्ली), बालिका वर्ष, विकास प्रक्रिया में महिलाओं पर अन्तर्राष्ट्रीय काफ्रैन्स (West Berlin, 1989), राजनीतिक भागेदारी और निर्णय लेने पर समानता पर विशेषज्ञ समूह मंत्रणा (वियाना) इत्यादि में भी भाग लिया।

मानव संसाधन विकास मंत्रालय के तत्वाधान में 1985 से यह महिला और शिशु विकास विभाग कार्यरत है। ऐसा महसूस किया गया है कि विभाग को सही अर्थो में कल्याण मंत्रालय के साथ जुड़ना चाहिए था, क्योंकि वह मंत्रालय समाज के उन सभी लाभ न पाने वाले वर्गों के विकास और कल्याण में लगा है जिनमें महिलाएँ और शिशु सर्वाधिक प्रभावित है। इस दोष को सुधार लिया गया है और 1990 से इसे अपना उचित स्थान दिलवाकर महिला और शिशु विकास विभाग को कल्याण मंत्रालय में स्थानान्तरित कर दिया गया था।

5.4 राज्य स्तर पर समाज कल्याण प्रशासन

केन्द्रीय सरकार ने अपने स्तर से बहुत सी समाज कल्याण योजनाओं और अनेक कार्यक्रमों को अपने हाथ में लेकर वित्तीय सहायता भी पूर्णरूपेण या आंशिक तौर पर दी है। प्रान्तीय सरकारों और केन्द्र शासित प्रदेशों ने भी समाज के कमजोर और आर्थिक तौर पर पिछड़े वर्गो की सहायता के लिए अनेक प्रकार के कल्याण कार्यक्रमों को क्रियान्वित करने का बीड़ा उठाया है तथा इन वर्गो बालक, महिलाएँ, अनुसूचित जातियाँ, अनुसूचित जनजातियाँ, पिछड़े वर्ग, विकलांग, वृद्ध, बेरोजगार, जरूरतमंद, परित्यक्त तथा निराश्रित इत्यादि को सहायता दी है। प्रान्तीय सरकारों ने संस्थात्मक तथा गैर-संस्थात्मक दोनों माध्यमों से इन वर्गो के लोगों को पूर्ण सहायता दी है। संस्थात्मक सेवाएँ इस रूप में दी जाती हैं: शिक्षा, स्वास्थ्य, व्यावसायिक प्रशिक्षण, आवास क्षेत्र, देख-रेख गृह इत्यादि, जबकि गैर संस्थात्मक सेवाओं में उन लाभ प्राप्तकर्ताओं की आवश्यकताओं को पूर्ण करने के लिए वित्तीय सहायता देना है जिनमें वृद्धों को बुढ़ापा पेंशन देना, बेरोजगारों को बेरोजगारी भत्ता देना, शिशुभत्ता इत्यादि शामिल है।

प्रान्तीय सरकारें/केन्द्र शासित प्रान्तीय शासन अपने कल्याण कार्यक्रमों को समाज कल्याण विभाग और स्वैच्छिक संस्थानों के माध्यम से चलाते है। स्वतंत्रता से पहले बहुत कम प्रदेशो ने समाज कल्याण के विभाग खोले हुए थे। स्वतंत्रता के बाद सभी प्रान्तों/केन्द्र शासित प्रदेशों ने किसी न किसी नाम से एक स्वतंत्र विभाग के रूप में या दूसरे विभाग के साथ जुड़कर समाज कल्याण के कार्य को जारी रखा। आन्ध्र प्रदेश, अरूणाचल प्रदेश, आसाम, हरियाणा, जम्मू और कश्मीर, कर्णाटक, मध्य प्रदेश, मणिपुर, मेघालय, नागालैण्ड, पंजाब, राजस्थान, सिक्किम, तमिलनाडु, उत्तर प्रदेश, पश्चिमी बंगाल और केन्द्र शासित प्रदेशों जैसे अण्डमान और निकोबार द्वीपसमूह, चण्डीगढ़, दादरा और नगर हवेली, दिल्ली, दमन और द्विव, लक्ष्य द्वीप ने अपने अपने समाज कल्याण विभाग खोले हुए है। बिहार और हिमाचल ने उनके नाम कल्याण विभाग रखा है। गुजरात ने उसका नाम समाज कल्याण और जनजाति कल्याण विभाग रखा है। केरल ने उसका नाम स्थानीय प्रशासन और समाज कल्याण विभाग रखा है। महाराष्ट्र ने समाज कल्याण, सांस्कृतिक कार्य, क्रिड़ा और पर्यटन विभाग नाम रखा है। उड़ीसा सामुदायिक विकास विभाग के अन्तर्गत अनेक कल्याण कार्यक्रम करता है। त्रिपुरा शिक्षा विभाग के माध्यम से और पाण्डीचेरी में स्वास्थ्य, विद्युत और कार्य विभाग 1964 में समाज कल्याण विभाग के स्थापित होने तक कार्यशील रहा है। विभागों के नामों में अन्तर स्थानीय संस्कृतिक, आवश्यकताओं और परिस्थितियों की विविधिताओं के कारण है और किसी किसी प्रदेश में किसी विविधताओं के कारण है और किसी किसी प्रदेश में विशेष समय पर मूलभूत साधानों की कमी के कारण है। सभी प्रदेशिक/केन्द्रशासित प्रदेशों की सरकारें समाज कलयाण के लक्ष्य को लेकर समाज के कमजोर वर्ग के लोगो की आवश्कताओं की पूर्ति के लिए उन्हें कल्याण सेवाएँ प्रदान करने के उद्देश्य से अनेक प्रकार के समाज कल्याण के विभागों के माध्यम से कार्य करती है।

इसके अतिरिक्त केवल समाज कल्याण विभाग ही कल्याण सेवाएँ प्रदान नही करता, प्रत्युत और भी कई विभाग है जो समाज कल्याण कार्यक्रमों को क्रियान्वित करने में प्रयासशील है। वे है - महिला और शिशु कल्याण विभाग (युवा अपराध और शिक्षा), पुलिस विभाग (अनैतिकता को दबाने के लिए), शिक्षा विभाग (विकलागों की शिक्षा के लिए), श्रम विभाग (श्रम कल्याण के लिए) सेहत विभाग (शिशुओं और माताओं की सेहत सुधारने के लिए, अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति विभाग (इन जातियों के कल्याण के लिए) ग्रामीण विकास विभाग और पंचायती राज संस्थाएँ (ग्रामीण लोगों के कल्याण के लिए) इत्यादि।

5.4.1 प्रशासनिक संरचना

प्रान्तीय स्तर पर समाज कल्याण विभाग का काम कल्याण मंत्री के पास होता हैं और सरकार का विभागीय सचिव विभाग का प्रशासनिक अध्यक्ष होता है। सचिव विभाग की नीतियों के मंत्रियों की सहायता करता है, उसे परामर्श आदि देता है और तदर्थ विधान सभा में विधायक पास करवाता है तथा निदेशालय की नीतियों, योजनाओं, परियोजनाओं और कार्यक्रमों के क्रियान्वयन का निरीक्षण करता है। निदेशालय का अध्यक्ष एक निदेशक होता है जिसे अतिरिक्त निदेशक, सह निदेशक, उपनिदेशक, प्रशासनिक अधिकारी तथा अन्य स्टाफ सदस्य सहायता देते है। उनका यह उत्तरदायित्व होता है कि वे इस विभाग की नीतियों को क्रियान्वित करें और उसके अन्तर्गत तैयार किए गए कार्यक्रम को लागू करे। ये अधिकारी मुख्य कार्यालय में कार्य करते है।

क्षेत्र में, मण्डल तथा जिला स्तर पर समाज कल्याण अधिकारी अपने-अपने क्षेत्रों में अनेक कल्याण कार्यक्रमों को संचालित करते हैं तहसील/तालुका/ब्लाक समाज कल्याण अधिकारी तालुक, तहसील, ब्लाक तथा गाँव स्तरों पर सेवाएँ प्रदान करने में नियुक्त किए जाते है। सचिवलायों, निदेशालयों और क्षेत्रों को उनकी आवश्यकता के अनुसार स्टाफ प्रदान किए जाते है।

सभी प्रदेशों में प्रशासनिक तथा स्टाफ की पद्धति प्रायः एक जैसी होती हैं। इसी तरह कुछ परिवर्तनों के अलावा प्रत्येक देश में एक जैसी कल्याण सेवाएँ प्रदान की जाती है प्रशासनिक गठन तथा प्रदेशों के द्वारा प्रदान की गई कल्याण सेवाएँ पंजाब राज्य में दी गई सेवाओं और प्रशासनिक ढाँचे को बताकर स्पष्ट की जा सकती है।

पंजाब में समाज कल्याण विभाग 1955 में स्थापित हुआ था जो कि समाज के सामाजिक और आर्थिक रूप में कमजोर वर्गो के कल्याण के लिए रचा गया था। समाज कल्याण विभाग का पंजाब सचिवालय चण्डीगढ़ में स्थापित है। निदेशक के साथ विभाग के प्रशासनिक तथा दूसरे मामलों के लिए एक सहायक निदेशक रखा गया है। जून, 1980 से प्रशासनिक कार्य संयुक्त निदेशक (प्रशासन) को स्थानान्तरित किया गया है। एक उपनिदेशक परिवार और शिशुकल्याण परियोजनाओं, प्रशिक्षण तथा उत्पादन केन्द्रों और राहत सेवाओं का काम देखता है। मुख्य इन्स्पैक्टर तथा प्रशासनिक अधिकारी 1949 मे स्थापित कुछ संस्थाओं और कुछ योजनाओं, जो मुख्य कार्यालय द्वारा संचालित है, उनका कार्य देखता है। पोषक आहार तथा समेकित शिशु विकास सेवा योजनाओं को एकविशेष अधिकारी देखता है। सहायक निदेशक (पेंशन) मुख्यालय में होता है। वह बुढ़ापा पेंशन, विधवाओं और निराश्रित महिलाओं को वित्तीय सहायता तथा आश्रित शिशुयोजना को देखता है। निदेशक को लेखा परीक्षण और लेखा विभाग एक लेखा जोखा अधिकारी के अधीन होता है। इस अधिकारी के सहायकों में लेखा जोखा जोखा जाँच के प्रवर अधिकारी होते है।

आरम्भ में मण्डल स्तर पर समाज कल्याण अधिकारियों के कार्यालय जालन्धर और पटियाला में थे तथा जिला समाज कल्याण अधिकारियों के कार्यालय केवल फिरोजपुर और अमृतसर मे थे। परन्तु विकेन्द्रीकरण की नीति के परिणामस्वरूप नवम्बर, 1980 से मण्डल समाज कल्याण कार्यालय की जिला समाज कल्याण कार्यालय में बदल दिया गया तथा जिला कल्याण समाज कार्यालय प्रत्येक जिले में खोल दिय थे।

प्रदेश के अनेक स्थानों पर स्थापित विभाग की संस्थाओं का मुखिया की निगरानी में होता है, जबकि परिवार और शिशुकल्याण परियोजनाओं की देख रेख एक मुख्य सेविका के अधीन रहती है। समेंकित शिशुविकास सेवा योजना का मुखिया शिशु परियोजना अधिकारी होता है। क्षेत्र में पोषक आहार केन्द्रों का निरीक्षण करते है जो प्रदेश मुख्यालय द्वारा नियुक्त किये जाते है।

सभी राज्यों/संघों प्रदेशों के श्रम कल्याण के प्रशासन हेतु मंत्री के अधीन जो विधान मंडल के प्रति उत्तरदायी है, श्रम विभागों की स्थापना की गई है। विभाग का अध्यक्ष श्रम आयुक्त (आई0 ए0 एस0 अधिकारी) होता है। उसकी सहायतार्थ अतिरिक्त संयुक्त, उप एवं सहायक श्रम आयुक्त, उप मुख्.य निरीक्षक फैक्ट्री, फैक्ट्री निरीक्षक, चिकित्सा निरीक्षक फैक्ट्री, श्रम एवं समझौता अधिकारी एवं अन्य समर्थक अधिकारी होते है। अनेक राज्यों में श्रमिक प्रति पूर्ति कानून 1923 एवं मजदूर संघ पंजीकरण कानून, 1926 के अंतर्गत श्रमिक प्रति पूर्ति आयुक्त नियुक्त किये गये है।

5.5 अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर समाज कल्याण (Social Welfare Administrative at International Level)

अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर समाज कल्याण प्रशासन से सम्बन्धित विभिन्न संगठनो का विवरण निम्नवत् हैः-

5.5.1 आर्थिक एवं सामाजिक परिषद

संयुक्त राष्ट्र के एवं इसकी विशेष कृत एजेन्सियों एवं संस्थाओं, जिन्हे संगठनों का 'संयुक्त राष्ट्र परिवार' कहा जाता है, के आर्थिक एवं सामाजिक कार्य को समन्वित करती है। यह निकास की समस्याओं, विश्व व्यापार,

औद्योगीकरण, प्राकृतिक संसाधनों, मानव अधिकार, महिलाओं की स्थिति, जनसंख्या, समाज कल्याण, विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी, अपराध की रोकथाम, तथा अन्य अनेक आर्थिक एवं सामाजिक प्रश्नों से गतिविधियों को आरम्भ करती है तथा इनके बारे में संस्तुतियाँ प्रस्तुत करती है।

इसके 54 सदस्य है, 18 सदस्य प्रत्येक वर्ष महासभा द्वारा तीन वर्ष की अवधि के लिये निर्वाचित किये जाते है, मतदान साधारण बहुमत द्वारा होता है, प्रत्येक सदस्य को एक मत प्राप्त होता है।

आर्थिक एवं सामाजिक परिषद वर्ष में दो बार एक महीने की अवधि वाले अधिवेशन करती है- न्यूर्याक एवं जिनेवा में, परन्तु वर्ष भर परिषदकी स्थायी समितियों, आयोगों एवं अन्य सहायक निकायों की बैठक मुख्यालय अथवा अन्य स्थानों पर चलती रहती है। प्रमुख स्थायी समितियाँ संगठनों, अन्तःशासकीय एजेन्सियों के साथ वार्ता आवास भवन एवं योजना, कार्यक्रम एवं समन्वय, प्राकृतिक संसाधन, विकास हेतु विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी, समीक्षा एवं मूल्यांकन, विकास प्रशिक्षण एवं अपराध नियंत्रण विषयों से सम्बन्धित है। प्रकार्यात्मक आयोगों में सम्मिलित हैः सांख्यिकी आयोग, जनसंख्या आयोग, सामाजिक विकास आयोग, मानव अधिकार आयोग, महिला स्थिति आयोग, मादक द्रव आयोग, अन्तर्राष्ट्रीय निगम आयोग। मानव अधिकार आयोग ने अल्पसंख्यकों के संरक्षण एवं उनके विरूद्ध भेदभाव की रोकथाम पर एक उप आयोग की स्थापना की है। मादक द्रव आयोग ने निकट तथा मध्य पूर्ण में गैर कानूनी मादक द्रव्य व्यापार एवं सम्बद्ध विषयों पर एक उप आयोग की स्थापना की है।

परिषद के प्राधिकार के अधीन प्रादेशिक आर्थिक आयोग भी है जिनका लक्ष्य अपने अपने क्षेत्रों के आर्थिक एवं सामाजिक विकास में सहायता देना तथा प्रत्येक क्षेत्र के देशों के मध्य तथा संसार के अन्य देशों के साथ इनके आर्थिक संबन्धों को सश क्त बनाना है। इनमें सम्मिलित है: अफ्रीका आर्थिक आयोग (अदासी अबाबा में आधारित) एशिया एवं प्रषान्त आर्थिक और सामाजिक आयोग (बेगकोक), यूरोप आर्थिक आयोग (जिनेवा), लैटिन अमरीका आर्थिक आयोग (सैनटियगों), पष्चिम एशिया आर्थिक आयोग (वीयना)। प्रादेषिक आर्थिक आयोग अपने-अपने क्षेत्र की समस्याओं का अध्ययन करते है तथा सदस्य राज्यों एवं विशेषीकृत एजेन्सियों को सुझाव देते है। अर्वाचीन वर्षो में आयोग के कार्य को विस्तारित कर दिया गया है। यह अब विकास परियोजनाओं को क्रियान्वित करने में अधिक संलग्न हो गये है।

आर्थिक एवं सामाजिक परिषद सामाजिक और आर्थिक विकास में कार्यरत अशासकीय अन्तर्राष्ट्रीय संगठनों के महत्व को भी मान्यता देती है। यह ऐसे संगठनों जो परिषदके कार्यो में महत्वपूर्ण योगदान दे सकते है, को परामर्शीय स्थिति प्रदान करती है।

5.5.2 संयुक्त राष्ट्र

संयुक्त राष्ट्र ने विशेष वर्गों कीविशेष सहायता हेतु विभिन्न संगठनों की स्थापना की है। अन्तर्राष्ट्रीय कल्याण में उनके योगदान का वर्णन निम्नलिखित है-

5.5.3 संयुक्त राष्ट्र बाल कोष

यूनीसेफ की स्थापना महासभा के द्वारा 11 दिसम्बर 1946 को की गई थी। इसका उद्देश्यविकासशील देशों की अपने बच्चों एवं युवाओं की दशा को बेहतर बनाने में सहायता देना है। यूनिसेफ ऐसी परियोजनाओं के लिए सहायता देता है जो विकास के राष्ट्रीय कार्यक्रमों का भाग है। यह सरकारों को उनकी प्रार्थना पर ही सहायता देता

है। इस समय, यूनिसेफ अफ्रीका, एशिया, दोनों अमेरिका एवं पूर्वी भूमध्य क्षेत्र के 114 से अधिक देशों में बाल विकास कार्यक्रमों को सहायता दे रहा है।

यूनिसेफ स्वास्थ्य, पोषण , समाज कल्याण, शिक्षा एवं व्यवसायिक प्रशिक्षण जैसे क्षेत्रों में सहायता प्रदान करता है। यह सरकारों को अपने बच्चों की प्रमुख आवष्यकताओं का मूल्यांकन करने एवं उनको पूरा करने हेतु व्यापक कार्यक्रमों की योजना तैयार करने में भी सहायता देता है। यूनिसेफ के द्वारा सहायता का अधिकांश भाग उपकरण एवं सामग्री की अवस्था के रूप में होता है, उदाहरणतया, स्वास्थ्य केन्द्र उपकरण, औश धियाँ, कूप खोदनें के लिए खूटियाँ रस्सियाँ आदि। स्कूल बगीचों के लिए सामग्री, दिवस देखभाल केन्द्रों के लिए आवश्यक उपकरण तथा पाठ्य पुस्तकों के उत्पादन सामग्री/ अन्य प्रकार की सहायता, तथा प्रशिक्षण छात्रवृत्तियाँ एवं राट्रीय प्रशिक्षण स्कीमों में अध्यापन स्टाफ के लिए वित्तीय सहायता भी महत्वपूर्ण बन गई है।

5.5.4 संयुक्त राष्ट्र शरणार्थी उच्चायुक्त कार्यालय

इस कार्यक्रम की स्थापना 1 जनवरी 1951 को हुई थी। यह शरणार्थियों को कानूनी संरक्षण तथा सरकार के द्वारा प्रार्थना पर नैतिक सहायता प्रदान करता है। कार्यालय विधान के अनुसार शरणार्थी अपनी राष्ट्रीयता के देश से बाहर ऐसे व्यक्ति है जिन्हे राष्ट्रीयता अथवा राजनीतिक मत के कारण अत्याचार का सुआधारित भय है एवं जो ऐसे भय के कारण अपनी राष्ट्रीयता के देश का संरक्षण प्राप्त करने के अनिच्छुक अथवा असमर्थ है। संयुक्त राष्ट्र शरणार्थी उच्चायुक्त कार्यालय विशुद्ध मानवी एवं राजनीतिक आधार पर स्वैच्छिक प्रत्यावर्तन, शरणागत देशों में स्थानीय पुनर्वास अथवा किसी अन्य देश में प्रवास द्वारा स्थायी संसाधन का प्रयास करता है।

5.5.5 अन्तर्राष्ट्रीय स्वयं सेवी संगठन

संयुक्त राष्ट्र के द्वारा परिचालित समाज कल्याण कार्यक्रमों के अतिरिक्त अन्य अनेक अशासकीय अन्तर्राष्ट्रीय असंगठन यथा रेडक्रास, अन्तर्राष्ट्रीय समाज कल्याण परिषद, अन्तर्राष्ट्रीय बाल कल्याण संघ, अन्तर्राष्ट्रीय परिवार संगठन संघ, अन्तर्राष्ट्रीय सामाजिक सुरक्षा समिति, मुक्ति सेना आदि संयुक्त राष्ट्र के प्रयासों के पूरक रूप में कार्य कर रहे है। संसार के विकासशील देशों, भारत सहित, ने इन अशासकीय संगठनों एवं स्वयंसेवी अन्तर्राष्ट्रीय कल्याण अभिकरणों से समाज कल्याण के कार्यक्रमों में सहायता एवं अनुदान प्राप्त किया है। इन सभी संगठनों में से केवल रोटरी अन्तर्राष्ट्रीय काविशेष उल्लेख करना उचित होगा क्योंकि इसकी शाखाएँ संसार के सभी देशों में अवस्थित है।

5.6 सारांश (Summary)

सारांश के रूप में केन्द्रीय स्तर पर समाज कल्याण प्रशासन, राज्य स्तर पर समाज कल्याण परामर्श का प्रशासन एवं अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर समाज कल्याण प्रशासन के अन्र्तगत दुर्बल वर्गो के लिए विभिन्न स्तरों पर समाज कल्याण सेवाओं का प्रशासन किया जाता है।

5.7 अभ्यासार्थ प्रश्न (Questions for Practice)

(1) केन्द्रीय स्तर पर समाज कल्याण प्रशासन की अवधारणा का उल्लेख कीजिए।

(2) राज्य स्तर पर समाज कल्याण परामर्श के प्रशासन के उद्देश्यों को समझाइये।

(3) अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर समाज कल्याण प्रशासन के प्रकार्यो को स्पष्ट कीजिए।

(4) महिला एवं बाल विकास विभाग की अवधारणा का उल्लेख कीजिए।

(5) निम्नलिखित पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए।

(अ) संयुक्त राष्ट्र बाल कोश

(ब) आर्थिक एवं सामाजिक परिषद

(स) पोषक आहार और शिशु विकास

(द) राज्य स्तर पर समाज कल्याण की प्रशासनिक संरचना

5.8 सन्दर्भ पुस्तकें (Reference Books)

1-Singh, S.k,and Mishra, P.D.k,Samaj Karya: Itihas, Darshan Evam Pranaliyan, NRBC, Lucknow, 2004.

2-Soodan, K.S.k, Samaj Karya: Siddhant evam Abhyas, N.k, S.k,Publication, Lucknow, 2011.

3-Sharma, P.k, and Sharma, H.k, Lok Prashashan: Siddhant evam Vyavhar, College Book Depot, New Delhi, 1996.

4-Singh, S.k, and Soodan, K.S.k,(ed.), Horçon of Social Work, Jyotsna Publication, Lucknow, 1986.

5-Kulkarni, V.k, M.k, Essay on Social Administration, Delhi Research Publication in Social Sciences, 1972.

6-Singh, D.k,K.k, Bharat mein Samaj Kalyan: Avdharna, Prashsshan evam Karyakram, NRBC, Lucknow, 2012.

7-Singh, S.k,and Verma, R.k, B.k, S.k, Bharat mein Samaj Karya ke Kshetra, NRBC, Lucknow

इकाई-6

सामाजिक नीति

इकाई की रूपरेखा

6.0 उद्देश्य (Objectives)

6.1 प्रस्तावना (Preface)

6.2 भूमिका (Introduction)

6.3 सामाजिक नीति की अवधारणा (Concept of Social Policy)

6.4 सामाजिक नीति के प्रकार्य (Function of Social Policy)

6.5 सामाजिक नीति का क्षेत्र (Scope of Social Policy)

6.6 सामाजिक नीति निर्धारण से सम्बन्धित प्रमुख कारक (Main Factors Related to Social Policy)

6.7 सामाजिक नीति के अभिगम (Approaches of Social Policy)

6.8 सामाजिक नीति के प्रारूप (Models of Social Policy)

6.9 सामाजिक नीति के सिद्धान्त (Theories of Social Policy)

6.10 सामाजिक नीति के निर्धारक एवं स्रोत(Determinants andSources of Social Policy)

6.11 सारांश (Summary)

6.12 अभ्यास प्रश्न (Questions for Practice)

6.13 सन्दर्भ पुस्तकें (Reference Books)

6.0 उद्देश्य (Objectives)

प्रस्तुत अध्याय के अध्ययन के बाद आप –

1. सामाजिक नीति के अर्थ, विशेषताओं एवं उद्देश्य का विश्लेषण करना है।

2. सामाजिक नीति के कारकों तथा प्राथमिकताओं को जान सकेंगे।

3. सामाजिक नीति को प्रभावपूर्ण बनाने के लिए उपाय सम्बन्धी उपायों को समझ सकेंगे |

4.सामाजिक नीति के अभिगम, प्रारूप, सिद्धान्त, निर्धारकों एवं स्रोतो के विषय में जानकारी हो जाएगी।

6.1 प्रस्तावना (Preface)

सामाजिक नीति स्थायी विकास का मुख्य आधार है, जिसके माध्यम से समावेशी विकास के लक्ष्य को प्राप्त करने तथा सामाजिक पूंजी को सुदृढ़ करने का प्रयास किया जाता है जिससे कि राज्य व राज्य के नागरिक एक स्वस्थ्य एवं सशक्त समाज का निर्माण कर सके।

6.2 भूमिका (Introduction)

भारत की सामाजिक व्यवस्था को सुदृढ़ बनाने के लिए स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् नियोजित विकास का सहारा लेना आवश्यक समझा गया क्योंकि यह अनुभव किया गया कि गरीबी, बेकारी जैसी अनेक गंभीर सामाजिक समस्याएं उचित विकास न होने के कारण ही हमारे समाज में व्यापक रू से विद्यमान है। सामाजिक समस्याओं को सुलझाने के लिए मानव संसाधनों का विकास करते हुए आर्थिक प्रगति की गति को और अधिक तेज करना तथा इससे होने वाले लाभों को आम जनता में न्यायपूण ढंग से बांटना आवश्यक समझा गया, और इसलिए सरकार के लिए यह आवश्यक हो गया कि वह अपनी सामाजिक नीति को उचित रूप से निर्धारित कर लागू करे।

6.3 सामाजिक नीति की अवधारणा (Concept of Social Policy)

सामाजिक नीति व्यक्तियों तथा समुदायों को सशक्त करती है तथा परिवर्तन के लिए प्रेरित करती है। सामाजिक नीति व्यक्तियों तथा समुदायों को सहभागिता के लिए सम्मिलित करती है प्रोत्साहित करती है जिससे सामाजिक लक्ष्यों को प्राप्त किया जा सके। सामाजिक नीति न्याय पर आधारित होती है जिसका उद्देश्य अनुकम्पा तथा संतुष्टि के द्वारा स्थानीय समुदायों तथा वाह्य संसार को सुदृढ़ बनाना होता है।

सामाजिक नीति अवसरों में समानता के सिद्धान्त पर आधारित है जिसमें बिना किसी असमानता और भेदभाव के तथा 'जाति' प्रजाति धर्म, वर्ग, लिंग इत्यादि को ध्यान में न रखकर के सभी को समान अवसर प्रदान किए जाते हैं।

सामाजिक नीतियां का लोक नीतियों के रूप में मुख्य उद्देश्य सूक्ष्म स्तर पर लोगों को प्राप्त होने वाले समानतास के अवसर के लाभ को प्रोत्साहित करना, संस्था तथा संस्थागत लाभों को समूह तक पहुंचाना, तथा समष्टि स्तर पर क्षैतिज तथा लम्बवत् रूप में सामाजिक एकीकरण के लाभ को समाज तक पहुंचाता है। सामाजिक नीति को परिवर्तन के लिए किए जाने वाली सम्पूर्ण क्रियाओं के रूप में वर्णित किया जाता है।

सामाजिक नीति को वर्तमान में उपलब्ध साहित्य में त्रूटिपूर्ण अथवा गलत तरीके से प्रस्तुत अथवा समझा गया है तथा इसे आर्थिक नीति के पश्चात् महत्वपूर्ण माना गया हैं। परम्परागत दृष्टिकोण से सामाजिक नीति को सेवाओं का साम्यपूर्ण आंकलन करने तथा समाज के दुर्बल एवं कमजोर वर्ग के लोगों को आलम्बन व सामाजिक सुरक्षा प्रदान करना समझा गया है। सामाजिक नीति मानव कल्याण को प्रोत्साहित करने तथा जीवन स्तर को बनाए रखने के लिए निर्देशित होती है। ऐतिहासिक दृष्टिकोण के आधार पर सामाजिक नीति, सामाजिक रूप में पुनर्वितरण (धनी से निर्धन, युवा से वृद्ध की ओर) सामाजिक नियमन रूप से (बाजार अर्थव्यवस्था से सम्बन्धित आधारभूत नियमों को बनाने से), तथा सामाजिक अधिकार रूप से (नागरिकों के अधिकारों व कर्तव्यों को करने के साथ आय तथा सेवाओं का आंकलन करना) हस्तक्षेप करती है।

सामाजिक नीति लोगों की कल्याणकारी आवश्यकताओं और सामाजिक समस्याओं का समाधान प्रस्तुत करने में लोचशीलता तथा कल्पना को प्रोत्साहित करती है। सामाजिक नीति, सरकारी तथा अन्य संगठनों के द्वारा मानवीय आवश्यकताओं को पूरा करने से सम्बन्धित है। सामाजिक नीति, मानवीय अस्तित्व के लिए आवश्यक सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक पक्षों से सम्बन्धित है तथा इन पक्षों के लिए साधनों को किस प्रकार उपलब्ध कराया जाए, से भी सम्बन्धित है।

सामाजिक नीति एक अन्तर-विश यक तथा व्यवहारिक विषय है जो कि सामाजिक आवश्यकताओं से सम्बन्धित संसाधनों के वितरण तथा पहुंच के विश्लेषण से सम्बन्धित है। इस विषय में समाज के सदस्यों की सामाजिक आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए मार्गो का वितरण, पुनर्वितरण, नियमन, प्रावधानों और सशक्तीकरण की संरचना एवं व्यवस्था का अध्ययन करती है।

सामाजिक नीति को न केवल शैक्षिक अध्ययन मे प्रयोग में लाया जाता है बल्कि इसका उपयोग वास्तविक जीवन में नीति निर्माताओं द्वारा सामाजिक क्रिया में भी किया जाता है। अतः यह कहा जा सकता है कि सामाजिक नीति दोनों जीवन गुणवत्ता को प्रोत्साहित करने से सम्बन्धित नीति निर्माण एवं शैक्षित अध्ययन से सम्बन्धित अपनायी जाने वाली क्रियाओं से सम्बन्धित है। सामाजिक नीति विषय होने के साथ अभ्यास करने का एक क्षेत्र भी है। यहां पर यह अन्तर करना आवश्यक है,विशेषकर भ्रम होता है कि सामाजिक नीति अध्ययन करने का क्षेत्र है और सामाजिक नीति अध्ययन करने का क्षेत्र है और सामाजिक उद्देश्यों की पूर्ति के लिए सरकार, स्थानीय निकायों तथा अन्य संगठनों द्वारा नीतियों को गुच्छ रूप में अपनाये जाने से है।

इस प्रकार, सामाजिक नीति सामाजिक लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए आर्थिक विकास और सामाजिक विकास के सूचकों व सामाजिक मूल्यों को बनाए रखने और प्रोत्साहित करने से सम्बन्धित है। सामाजिक नीति के द्वारा अधिक से अधिक साम्यपूर्ण और सामाजिक स्थायी विकास के लक्ष्य को प्राप्त करना है। समग्र रूप से एक सामाजिक नीति नीतियों, संस्थाओं और कार्यक्रमों को प्रोत्साहित करना है जिससे कि आर्थिक वृद्धि के लिए समता एवं सामाजिक न्याय के संतुलन को स्थापित किया जा सके।

6.3.1 सामाजिक नीति का अर्थ एवं परिभाषा (Meaning and definition of Social Policy)

सामाजिक नीति का अर्थ एवं परिभाषा का विस्तृत विवेचन नीचे किया गया है:-

सामाजिक नीति का अर्थ

सामाजिक नीति दो शब्दों से मिलकर बना है: सामाजिक तथा नीति सामाजिक शब्द समाज से बना है। समाज का अर्थ सामाजिक सम्बन्धों के जाल से है जो इसके सदस्यों के बीच पाये जाते हैं। जहां कहीं भी हम 'सामाजिक' शब्द का प्रयोग करते हैं वहां हमारा अभिप्राय सदस्यों के हित से और सदस्यों के सम्मिलिन से होता है। नीति कार्य करने के लिए स्पष्ट रूप से व्यक्त किया गया मार्ग है।

सामाजिक नीति सामाजिक संरचना की कमियों को दूर करती है, असंतुलन को रोकती है, तथा असंतुलन वाले क्षेत्र से इसे दूर करने का प्रयास करती है। गोखले के मत में सामाजिक नीति एक साधन है, जिसके माध्यम से आकांक्षाओं तथा प्रेरकों को इस प्रकार विकसित किया जाता है कि सभी के कल्याण की वृद्धि हो सके। सामाजिक नीति द्वारा मानव एवं भौतिक दोनों प्रकार के संसाधनों में वृद्धि की जाती है जिससे पूर्ण सेवायोजन की स्थिति उत्पन्न होती है तथा निर्धनता दूर होती है।

सामाजिक नीति की परिभाषाएं

सामाजिक नीति को 'लोक नीतियों' की एक श्रृखंला के रूप में परिभाषित किया जा सकता है जो सामाजिक विकास को प्रोत्साहित करती है। सामाजिक नीति में दोनों तात्विक तथा उपकरणात्मक मूल्य समाहित होता है। तात्विक अथवा मूलभूत रूप में समानता के अवसर का निर्माण करती है तथा उपकरणात्म मूल्य के रूप में सामाजिक एकीकरण तथा लोक संस्थाओं की वैधता को सुदृढ़ करती है। विकासशील विश्व के परिप्रेक्ष्य में सामाजिक नीति एक ऐसे सुरक्षात्मक जाल का निर्माण करती है जिससे कि आर्थिक उदारीकरण शिक्षा व स्वास्थ्य के क्षेत्र में किए जाने वाले निवेश के द्वारा पड़ने वाले नकारात्मक प्रभावों को कम किया जा सके।

सामाजिक नीति को स्पष्ट करने तथा उसकी परिभाषा करने का लगातार प्रयास किया जाता रहा है किन्तु अभी तक कोई भी ऐसी परिभाषा विकसित नहीं हो पायी है कि जिसमें इसकी सभी विशेषताएं पायी जाती हों। ऐसाविशेष रूप से इसलिए हुआ क्योंकि सामाजिक नीति का सम्बन्ध प्रमुख रूप से सामाजिक समाधानों से था और इसके लिए आवश्यक विशेष प्रकार के ढंग उपलब्ध नहीं थे।

कुलकर्णी के अनुसार, ''नीति कथन उस ओढ़ने के वस्त्र के ताने बाने के धागे हैं जिनकों पिरो का चोंगा तैयार होता है। यह सूक्ष्म ढांचा होता है जिसमें सूक्ष्म क्रियाओं को अर्थपूर्ण ढंग से समाहित किया जाता है।

पान्सियान के अनुसार, ''इस प्रकार सामाजिक नीति को एक ऐसी नीति के रूप में परिभाषित किया जा सकता है जो उस समाज के व्यक्तियों तथा समूहों की कमियों को दूर करने के लिए समाज का सतत् सुधार करती है। अपनी उत्तरोत्तर प्राप्ति में यह निर्बल लोगों की सहायता करती है, कमजोरियां को रोकती है तथा अच्छी परिस्थितियों की रचना करती है या सुधारती है।

बोल्डिंग के अनुसार, ''सामाजिक नीति'' सामाजिक जीवन के उन पहलुओं के रूप में मानी जाती है जिनकी उतनी अधिक विशेष ऐसा विनिमय नहीं होता है जिसमें एक पाउण्ड की प्राप्ति उसके बदले में किसी चीज को देते हुए की जाती है जितना कि एक पक्षीय हस्तांतरण जिन्हें प्रस्थिति, वैधता, अस्मिता या समुदाय के नाम पर उचित ठहराया जाता है।

टिटमस के अनुसार, ''सामाजिक नीति का सम्बन्ध सामाजिक आवश्यकताओं की एक विविधता एवं मानव संगठन की कमी वाली परिस्थितियों में कार्य करने के अध्ययन से है जिसे परम्परागत रूप से इन आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए समाज सेवायें अथवा समाज कल्याण व्यवस्था कहा जाता है।

आइडेन के अनुसार, ''तब सामाजिक नीति का सम्बन्ध सामाजिक उद्देश्यों से है। यह उन उद्देश्यों जहां पहले से ही काफी हद तक एकमत होता है, को पूरा करने के वैकल्पिक साधनों की लागतों तथा लाभों को स्पष्ट करने से बहुत कम सम्बन्धित होती है।''

लेविन ने ''सामाजिक नीति को अभ्यास के रूप में स्पष्ट करते हुए कहा है कि सामाजिक हस्तक्षेप के द्वारा नागरिकों के कल्याण व जीवन गुणवत्ता को प्रोत्साहित करते हुए सामाजिक परिवर्तन के लिए तैयार करना है।'' बहुत से संगठन तथा संस्थाएं और लोग कार्य को करने अथवा लोगों के लिए करने में, सामाजिक नीतियों के निरूपण व लागू होने की प्रक्रिया में सम्मिलित होते है।

इस प्रकार सामाजिक नीति की परिभाषा ऐसे मार्गदर्शनों के रूप में की जा सकती है जो समाज के सदस्यों द्वारा मानव संसाधनों का समुचित विकास, उत्पादकता की अधिक से अधिक वृद्धि और होने वाले लाभों का न्यायपूर्ण वितरण करते हुए अधिक से अधिक व्यक्तियों के अधिक से अधिक कल्याण को प्रोत्साहित करने के लिए निर्धारित किये जाते हैं।

6.3.2 सामाजिक नीति की विशेषताएं (effective Measures of Social Policy)

सामाजिक नीति कीविशेषताओं को विभिन्न परिभाषाओं के विश्लेषण के पश्चात् निम्नलिखित भागों में विभाजित किया जा सकता है:-

1) सामाजिक नीति, एक विषय के साथ अभ्यास का एक क्षेत्र है।
2) सामाजिक नीति, एक उपकरण है।
3) सामाजिक नीति, वितरणात्मक एवं पुनर्वितरणात्मक भूमिकाओं का प्रतिपादन करती है।
4) सामाजिक नीति, संसाधनों का हस्तांतरण समाज के एकविशेष वर्ग से अन्य दूसरे वर्ग को करती है।
5) सामाजिक नीति समाज के कमजोर एवं दुर्बल वर्ग से सम्बन्धित है।
6) सामाजिक नीति, एक दूसरे से सम्बन्धित है।

सामाजिक नीति, एक विषय के साथ अभ्यास का एक क्षेत्र है

सामाजिक नीति एक विषय है न कि एक विशेष शाखा। अध्ययन के क्षेत्र को विकसित करने के लिए विभिन्न समाज विज्ञान शाखाओं से ज्ञान को अर्जित किया है। वाल्स स्टीफेन और मूल (2000) ने सामाजिक नीति एक विषय माना है जिसके मूल समाज विज्ञानों में निहित है। इन समाज विज्ञानों की शाखाओं यथा समाजशास्त्र, समाजकार्य, मनोविज्ञान, अर्थशास्त्र, राजनीति,विज्ञान, प्रबन्धन इतिहास दर्शन और विधि ने अपना योगदान दिया है। सामाजिक नीति सापेक्ष रूप से शैक्षित अध्ययन का एक नया क्षेत्र है। यह एक अन्तर-विश यक समाज विज्ञान विषय है जिसनेविशेषकर समाजशास्त्र, राजनीति और अर्थशास्त्र से विचारों तथा अवधारणा को प्रस्तुत किया है। एक विषय के रूप में सामाजिक नीति उन मार्गों को केन्द्रित करती है जिससे सरकारें लोगों के जीवन को समृद्ध बनाने के लिए परिवर्तन के लिए प्रयास करती है। सामाजिक नीति को अध्ययन के क्षेत्र के रूप में विशेषकर:-

1) लोगों, समाज तथा समाज कल्याण से सम्बन्धित विचारों, मूल्यों व विश्वासों
2) वास्तविक जीवन व समकालीन सामाजिक समस्याओं,
3) समाज कल्याण मुद्दों और सरकार के कार्य विधियों एवं अभिगमों,
4) सामाजिक, आर्थिक राजनीतिक परिप्रेक्ष्य में सामाजिक नीति का निर्माण एवं कार्यान्वयन से सम्बन्धित है।

सामाजिक नीति, लोगों की सामाजिक स्थिति को प्रभावित करने वाली नीतियों, कार्यान्वयन और विकास के व्यावहारिक अध्ययन से सम्बन्धित है। सामाजिक नीति प्रत्यक्ष रूप से विचारों से सम्बन्धित है जो कि औपचारिक रूप सेविशेषकर विचारधारा पर आधारित है। अभ्यास के रूप में सामाजिक नीति का लक्ष्य सामूहिक रूप से कल्याणकारी सेवाओं के द्वारा मानवीय जीवन की गुणवत्ता में वृद्धि लाना और प्रोत्साहित करना है।

सामाजिक नीति एक उपकरण के रूप में

सामाजिक नीति को एक उपकरण के रूप में सरकारों द्वारा प्रयोग में लाया जाता है जिससे कि सामाजिक संरचनाओं और बाजार संस्थाओं का नियमन किया जा सके। सामाजिक नीति एक उपकरण के रूप में सिद्धान्त पर अस्वीकार है क्योंकि यह सामाजिक लक्ष्यों के महत्व पर आधारित है। सामाजिक नीति संसाधनों को लाभबन्द

करने के परिप्रेक्ष्य में सक्रिय भूमिका निभाती है। सामाजिक नीति एक उपकरण के रूप में विस्तृत कार्य क्षेत्र यथा वित्तीय नीति, भूमि सुधार, सामाजिक विधान, कल्याण उपयों तथा अन्य द्वारा विभिन्न सामाजिक लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए उपयोग में लायी जाती है। यह किसी भी राष्ट्र को राजनैतिक और विचारात्मक संरचना पर आधारित होती है। सामाजिक नीति को एक परिवर्तन के एक सकारात्मक उपकरण के रूप में देखा जा सकता है।

सामाजिक नीति वितरणात्मक और पुनर्वितरणात्मक भूमिका का प्रतिपादन करती है

सामाजिक नीति से सम्बन्धित विभिन्न विचारकों के दृष्टिकोण के अनुसार जिसमें टिटमस, डानिसन और बोल्डिंग ने इस बात पर बल दिया है कि सामाजिक नीति की प्रकृति वितरणात्मक अथवा पुनर्वितरणात्मक। इस आधार पर, सरकार द्वारा बनायी गयी सभी नीतियां एक अथवा दूसरे अर्थ में पुनर्वितरणात्मक प्रकृति की होती है। जिसका मुख्य उद्देश्य और प्राथमिक कार्य लोगों के मध्य सामाजिक संसाधनों का पुनर्वितरण करना है। जिसके लिए सरकार निश्चित मापदंड तय करती है। डानिसन के दृष्टिकोण में (1975) किस प्रकार समाज नीति से अलग है, वास्तव में यह विभिन्न वर्गों व समूहों के मध्य अवसरों तथा संसाधनों के वितरण से तालमेल स्थापित करने से है, जो कि सामाजिक पक्ष से सम्बन्धित है। जबकि दूसरे अर्थ में सामाजिक नीति हमेशा अन्य पक्षों जोकि अधिक लोगो के लिए अत्यधिक महत्वूर्ण होती है।

सामाजिक नीति संसाधनों का हस्तांतरण एक वर्गविशेष से अन्य वर्गविशेष की ओर करती है

सामाजिक नीति की एक महत्वपूर्णविशेषता यह है कि संसाधनों का हस्तांतरण एक वर्गविशेष से अन्य वर्गविशेष की ओर किया जाता है। यह विचार बोल्डिंग के मस्तिष्क में तब आया जब वह सामाजिक व आर्थिक नीति के मध्य अन्तर स्थापित करने का प्रयास कर रहे थे। आपने बताया है कि ''सामाजिक नीति को एकीकृत व्यवस्था के धागे की एकविशेषता के रूप में समझा जा सकता है। प्रजातांत्रिक व्यवस्था में, सरकार का मुख्य उद्देश्य सामाजिक न्याय व अवसरों में समानता को स्थापित करना होता है। सरकार के लिए आवश्यक है कि समाज के सभी वर्गों तक संसाधन पहुचें विशेषकर समाज के दुर्बल एवं कमजोर वर्ग के लोगों के बीच। इसके लिए यह आवश्यक है कि निर्धन व धनी के बीच व्याप्त खाई को कम किया जाए। इस प्रकार यह सरकार पर निर्भर करता है कि संसाधनों का हस्तांतरण एक वर्गविशेष से अन्य वर्गविशेष पर करे।

सामाजिक नीति समाज के दुर्बल व कमजोर वर्ग से सम्बन्धित होती है

सामाजिक नीति समाज के कमजोर व दुर्बल वर्ग के लोगों यथा, निर्धन, महिलाएं, बच्चे अयोग्य पिछड़े वर्गों और अन्य जो कि सामाजिक जीवन धारा से दूर है, से सम्बन्धित है। इस प्रकार सामाजिक नीतियों का उद्देश्य समतावादी समाज की स्थापना होना चाहिए जहां पर असमानता को न्यूनतम स्तर तक लाया जा सके।

सामाजिक एक दूसरे से सम्बन्धित है

सामाजिक नीति की एक अन्य महत्वपूर्णविशेषता एक दूसरे पर अन्योन्यश्रियता है, अर्थात् सामाजिक नीतियों में एक दूसरे से अलग नहीं किया जा सकता है। एक सामाजिक नीति तभी ज्यादा प्रभावी हो सकती है जब वह अन्य किसी दूसरी नीति से सम्बन्ध रखे। यह निर्धारण किसी भी राष्ट्र की सामाजिक राजनैतिक, आर्थिक परिदृश्य पर निर्भर करता है। यहां तक कि उस राष्ट्र की सामाजिक-सांस्कृतिक परिस्थितियों एवं वैश्वीकरण के इस काल में अधिकतर नीतियों की प्रकृति वैश्विक होती है और इसके फलस्वरूप पड़ने वाले प्रभाव अन्य दूसरे स्थानों पर भी पड़ते हैं।

केनेथ के द्वारा प्रस्तुत सामाजिक नीति की विशेषताएं

केनेथ (2004) ने सामाजिक नीति कीविशेषताओं की चर्चा की है। जो कि निम्नवत् हैः-

1) सामाजिक नीति एक नीति है जिसका निर्माण जानबूझ करके जीवन के पक्षों के निश्चित लक्ष्यों की प्राप्ति हेतु किया जाता है जिससे कि जीवन को सुरक्षित बनाया जा सके।

2) सामाजिक नीति समाज कल्याण वस्तुओं के प्रति उन्मुख होती है जिसका सकारात्मक लक्ष्य मानव जीवन को सुखमय बनाना है। जिसे मानवीय आवश्यकताओं, योग्यताओं सक्रिय सहभागिता, समता न्याय तथा इत्यादि के रूप में परिभाषित किया जा सकता है।

3) सामाजिक नीति विभिन्न क्षेत्रों से सम्बन्धित विभिन्न प्रकार के नीति उपकरणों का संचालन करती है। जिसमें मुख्य रूप से भूमि सुधार, कृषि, कार्यक्रमों शिक्षा व सामाजिक संरक्षण कार्यक्रमों को शामिल किया जा सकता है।

4) सामाजिक नीतिको जीवन के विभिन्न क्षेत्रों से सम्बन्धित कर्ताओं द्वारा निरूपित व कार्यान्वित किया जाता है। इसका तात्पर्य यह है कि सामाजिक नीति का क्षेत्र राज्य या राष्ट्र तक सीमित नहीं ह बल्कि क्षेत्र से स्थानीय स्तर की ओर और संगठनों को लगता है कि जहां इसकी पहचान की जा सकती है इसे ऊपर की ओर और वैश्विक स्तर पर पहुंचाया जा सकता है।

6.3.3 सामाजिक नीति के उद्देश्य (Objectives of Social Policy)

एक सामाजिक नीति विशिष्ट सामाजिक उद्देश्यों के ध्यान में रखकर बनायी जाती है। ये सामाजिक उद्देश्य औपचारिक राष्ट्रीय सर्वसम्मति को प्रदर्शित करती है जो राष्ट्र के संविधान के अनुरूप होती है। एक समाज कल्याण नीति समाज के दुर्बल एवं कमजोर वर्ग के लोगों के लिए होती है जोकि सामान्य कार्यक्रमों का लाभ प्राप्त करने से वंचित रह जाते हैं। तारलोक सिहं ने सामाजिक नीति के उद्देश्य को स्पष्ट करते हुए कहा है कि उसके दृष्टिकोण के तीन आधार बताये है।

प्रथम यह कि कार्यक्रमों एवं उपयों के द्वारा प्रत्यक्ष रूप से सामाजिक सेवाओं का विस्तार तथा गुणात्मक वृद्धि करने, दुर्बल एवं कमजोर वर्ग के लोगों का कल्याण एवं विकास, सामाजिक सुधार एवं सामाजिक परिवर्तन के रूप में देखा जा सकता है। द्वितीय यह कि जनसंख्या के विभिन्न वर्गों के रूप में देख सकते है, तृतीय यह कि समाज काविशेष वर्ग जो विकास के लिएविशेष आवश्यकता रखता है और जो सामाजिक दृष्टिकोण से सम्पूर्ण समुदाय के लिए महत्वपूर्ण हो। एक प्रजातांत्रिक समाज में यथा हमारा देश जो समाजवादी दृष्टिकोण पर आधारित है में शिक्षा, स्वास्थ्य, सामाजिक सुरक्षा के उपयों यथा बेरोजगारी की समस्या, अयोग्यता, वृद्ध और आर्थिक असमानता के लिए एकीकृत एवं विस्तृत सामाजिक नीति की आवश्यकता होती है, प्रक्रिया को स्थापित किया जाता है।

सामान्य रूप से सामाजिक नीति का उद्देश्य ग्रामीण तथा नगरीय, धनी तथा निर्धन, समाज के सभी वर्गों को अपना जीवन स्तर ऊँचा उठाने के अवसर प्रदान करना तथा विभिन्न गम्भीर सामाजिक समस्याओं का समुचित निदान करते हुए उनका निराकरण करना है ताकि किसी भी वर्ग के साथ अन्याय न हो। तारलोक सिंह का मत है ‘‘ सामाजिक नीति का मूल उद्देश्य ऐसी परिस्थतियों का निर्माण करना होना चाहिए जिनमें प्रत्येक क्षेत्र, नगरीय अथवा ग्रामीण तथा अपनी विशिष्ट एवं पहचाने जाने योग्य समस्याओं सहित प्रत्येक समूह अपने को ऊपर उठाने, अपनी सीमाओं को नियंत्रित करने तथा अपनी आवासीय स्थितियों एवं आर्थिक अवसरों को उन्नत बनाने, और इस प्रकार समाज सेवाओं के मौलिक अंग बनने में समर्थ हो सके।

सामाजिक नीति केन्द्रिय लक्ष्य ग्रामीण अथवा नगरीय, प्रत्येक समूह की पहचानने योग्य समस्याएं लोगों की जीवन दशाओं में वृद्धि तथा आर्थिक अवसरों की दशाओं की उत्पन्न करना है। इसका उद्देश्य प्रत्येक मानव की आर्थिक जरूरतों, स्वास्थ्य का उच्च स्तर तथा अनुकूल जीवन निर्वाह दशाएं, विचारों की स्वतंत्रता, अवसरों में समानता, पूर्ण विकास तथा आत्मसम्मान की रक्षा करना है।

सामाजिक नीति का उद्देश्य मानव कल्याण में वृद्धि तथा मानवीय आवश्यकताओं यथा शिक्षा, स्वास्थ्य, आवास व सामाजिक सुरक्षा को पूरा करने से है। अध्ययन के दृष्टिकोण से सामाजिक नीति का उद्देश्य कल्याणकारी राज्य तथा सामाजिक आवश्यकता के अनुरूप नीतियों की श्रंखला से है।

उपरोक्त विश्लेषण के आधार पर सामाजिक नीति के उद्देश्य निम्नलिखित है:-

1) सामाजिक परिवर्तन
2) सामाजिक एकीकरण
3) जीवन की गुणवत्ता में वृद्धि
4) अवसरों में समानता लाना
5) संसाधनों का साम्यपूर्ण वितरण करना
6) सामाजिक न्याय को प्रोत्साहित करना

भारत सरकार द्वारा प्रस्तुत सामाजिक नीति के उद्देश्य

भारत सरकार ने सामाजिक नीति तथा नियोजित विकास के निम्नलिखित उद्देश्यों का उल्लेख किया हैः-

- उन दशाओं का निर्माण करना जिनसे सभी नागरिकों का जीवन स्तर ऊँचा उठ सके।
- महिलाओं तथा पुरूषों दोनों को समान रूप से विकास और सेवा के पूर्ण एवं समान अवसर उपलब्ध कराना।
- आधुनिक उत्पादन संरचना का विस्तार करने के साथ-साथ स्वास्थ्य, सफाई, आवास, शिक्षा तथा सामाजिक दशाओं में सुधार लाना।

6.4 सामाजिक नीति के प्रकार्य (Goal and Function of Social Policy)

सामाजिक नीति के निम्नलिखित लक्ष्य एवं कार्य हैं:-

1) वर्तमान कानूनों को अधिक प्रभावी बनाकर सामाजिक निर्योग्यताओं को दूर करना।
2) जन सहयोग एवं संस्थागत सेवाओं के माध्यम से आर्थिक निर्योग्यताओं को कम करना।
3) बाधितों को पुनस्थापित करना।
4) पीड़ित मानवता के दुःखों एवं कष्टों को कम करना।
5) सुधारात्मक तथा सुरक्षात्मक प्रयासों में वृद्धि करना।
6) शिक्षा-दीक्षा की समुचित व्यवस्था करना।

7) जीवन स्तर में असमानताओं को कम करना।

8) व्यक्तित्व के विकास के अवसरों को उपलब्ध कराना।

9) स्वास्थ्य तथा पोषण स्तर को ऊँचा उठाना।

10) सभी क्षेत्रों में संगठित रोजगार का विस्तार करना।

11) परिवार कल्याण सेवाओं में वृद्धि करना।

12) निर्बल वर्ग के व्यक्तियों कोविशेष संरक्षण प्रदान करना।

13) उचित कार्य की शर्तों एवं परिस्थितियों का आश्वासन दिलाना।

14) कार्य से होने वाले लाभों का साम्यपूर्ण वितरण सुनिश्चित करना।

6.5 सामाजिक नीति का क्षेत्र(Scope of Social Policy)

सामाजिक नीति के तीन प्रमुख क्षेत्र हैं, जिनके कार्यों को समुचित निर्देशन देना तथा उन्हें पूरा करना आवश्यक समझा जाता हैः

सामाजिक कार्यक्रम तथा उनसे सम्बन्धित कार्य

1) समाज सेवाओं जैसे शिक्षा, स्वास्थ्य, परिवार नियोजन, पोश ण, आवास, इत्यादि की लगातार वृद्धि एवं सुधार करना।

2) निर्बल वर्ग तथा अनुसूचित जाति एवं जनजाति के कल्याण तथा उनके सामाजिक-आर्थिक विकास को प्रोत्साहित करना।

3) स्थानीय स्तर पर पूरक कल्याण सेवाओं के विकास के लिए नीति निर्धारित करना।

4) समाज सुधर के लिए नीति प्रतिपादित करना।

5) सामाजिक सुरक्षा के लिए नीति बनाना।

6) सामाजिक-आर्थिक परिवर्तन लाना-आय तथा धन के असमान वितरण में कमी लाना, आर्थिक शक्ति के केन्द्रीकरण पर रोक लगाना तथा समान अवसर उपलब्ध कराने के लिए प्रयास करना।

समुदाय के विभिन्न वर्गों से सम्बन्धित सामाजिक नीति

प्रत्येक ऐसे समुदाय में जहां औद्योगीकरण तथा आधुनिकीकरण तीव्रगति से होता है, दो वर्गों का अभ्युदय स्वाभावित है। एक वर्ग ऐसा होता है जो उत्पन्न हुए नये अवसरों से पूरा लाभ उठाता है। उदाहरण के लिए, उद्योगपति बड़े-बड़े व्यवसायी, प्रबन्धक तथा बड़े कृषक। दूसरा वर्ग वह होता है जो जीवन की मुख्य धारा से अलग होता है और जिसे वर्तमान योजनाओं के लाभ नहीं मिल पाते। उदाहरण के लिए, भूमिहीन खेतीहर मजदूर, जन-जातियों के सदस्य, मलिन बस्तियों के निवासी, असंगठित उद्योगों में लगे हुए मजदूर इत्यादि।

6.8.3 सामाजिक दृष्टि से महत्वपूर्ण समाज के विभिन्न वर्गों से सम्बन्धित सामाजिक नीति

प्रत्येक समाज के कुछ ऐसे महत्वपूर्ण वर्ग होते हैं जिनका कल्याण आवश्यक माना जाता है। उदाहरण के लिए, कम आयु के बच्चे, विद्यालय का लाभ न उठा पाले वाले बच्चे, अध्ययन के दौरान ही कुछ अपरिहार्य कारणों से विद्यालय को छोड़कर चले जाने वाले बच्चे तथा नौजवान।

6.6 सामाजिक नीति निर्धारण से सम्बन्धित प्रमुख कारक (Main Factors Related to Social Policy)

सामाजिक नीति का निर्धारण करते समय निम्नलिखित बातों पर ध्यान दिया जाना आवश्यक हैः

- विकास स्वयं में एक प्रक्रिया है। यह सतत् चलने वाली सामाजिक परिवर्तन की प्रक्रिया के एक इच्छित दिशा में निर्देशित किये जाने पर प्रारम्भ होती है। यह आवश्यक अभिवृद्धि एवं सामाजिक प्रगति दोनों के लिए आवश्यक है। सामाजिक परिवर्तन की मूलभूत प्रक्रिया पर आधारित होने के कारण विकास की प्रक्रिया का सही दिशा निर्देशन आवश्यक है।
- विकास के सिद्धान्तों को समाज की स्थिति को ध्यान में रखते हुए अपनाया जाना चाहिए। किसी भी विकासशील अथवा विकसित देश को किसी अन्य देश की परिस्थितियों में सफल सिद्ध हुई विकास की पद्धतियों एवं उपकरण का अंधा अनुकरण नहीं करना चाहिए।
- सामाजिक नीति के निर्धारण तथा कार्यान्वय में जन सहभागिता,विशेष रूप से युवा सहभागिता, आवश्यक होती है क्योंकि ऐसी स्थिति में जो भी योजनाएं एवं कार्यक्रम बनाये जाते हैं उनके प्रति लोगों का लगाव होता है और वे इनकी सफलता के लिए तन, मन और धन प्रत्येक प्रकार से अपना अधिक से अधिक योगदान देते हैं।

6.6.1 सामाजिक नीति की प्राथमिकताएं (Priorities of Social Policy)

विकास की गति तथा उपयोगिकता इस बात पर निर्भर करती है कि सामाजिक नीति के अन्तर्गत क्या प्राथमिकतायें निर्धारित की गयी है। भारत जैसे विकासशील देश जिसमें विकास के अनेक आयाम तथा समस्यायें हैं, प्राथमिकताओं का उचित निर्धारण परम आवश्यक है। कोई भी नीति चाहे कितने अच्छे ढंग से क्यों न निर्धारित की जाय किन्तु यदि प्राथमिकताओं का उचित निर्धारण न किया जाय तो नीति असफल हो जाती है। प्राथमिकता निर्धारण के लिए निम्नलिखित 4 सिद्धान्तों का निरूपण किया जा सकता है।

- केवल समायोजन पर बल न देते हुए बाल-कल्याण तथा सम्पूर्ण विकास को प्राथमिकता प्रदान की जानी चाहिए।
- उपचारात्मक सेवाओं के स्थान पर निरोधात्मक सेवाओं के प्रसार को प्राथमिकता प्रदान की जानी चाहिए।
- केवल विशिष्ट समूहों को सेवायें न प्रदान कर सम्पूर्ण समुदाय को सेवायें उपलब्ध करायी जानी चाहिए।
- दीर्घकालीन अथवा अल्पकालीन सहायता पहुंचाने के स्थान पर समाज सेवाओं को निरोधात्मक तथा पुनस्थापन सम्बन्धी कार्यों में लगाया जाना चाहिए।

6.6.2 सामाजिक नीति को प्रभावपूर्ण बनाने के लिए उपाय (effective Measures of Social Policy)

क्योंकि सामाजिक नीति का प्रमुख उद्देश्य लोगों को सामाजिक न्याय दिलाते हुए चैमुखी सामाजिक-आर्थिक विकास करना है, इसीलिए इसे प्रभावपूर्ण बनाने की दृष्टि से निम्नलिखित सुझाव दिये जा रहे हैं:-

1) कल्याणकारी राज्य की नींव मजबूत करने तथा उसके पुष्पित एवं पल्लवित होने के लिए उपयुक्त मार्ग प्रशस्त करने के लिए राज्य को समाज सेवाओं,विशेष रूप से समाज कल्याण, सेवाओं, के क्षेत्र में प्रमुख भूमिका निभानी होगी ताकि आवश्यक सुविधाएं समाज क सभी वर्गों, को प्राप्त हो सके और इनका दुरूपयोग न हो सके।
2) किसी भी प्रजातांत्रिक व्यवस्था में राज्य को अपना कल्याणकारी रूप परावर्तित करने के लिए इसके माध्यम से सामाजिक नीति का निर्माण करना होगा।
3) सामाजिक नीति के समुचित प्रतिपादन हेतु आवश्यक तथ्यों का संग्रह करने के लिए सामाजिक सर्वेक्षण तथा मूल्यांकन को समुचित महत्व प्रदान करना होगा।
4) शिक्षा, स्वास्थ्य, आवास, मनोरंजन जैसी समाज सेवाओं तथा निर्बल एवं शोश ण का सरलतापूर्वक शिकार बनने वाले वर्गों के लिए अपेक्षित सेवाओं के बीच आवश्यक संतुलन स्थापित करना होगा ताकि समाज का समुचित कवास सम्भव हो सके।
5) राज्य को समाज सेवियों एवं समाज कार्यकर्ताओं के प्रति अपने वर्तमान सौतेले, व्यवहार को बदलते हुए उन्हें इच्छित सामाजिक स्वीकृति प्रदान करनी होगी।
6) सामाजिक नीति का निर्धारण इस बात को ध्यान रखकर करना होगा कि आर्थिक दशाओं में सुधार तभी हो सकता है जबकि सामाजिक दशाओं में वांछित परिवर्तन लाया जाय।
7) सुधारने के लिए सुझाव आदि भी देने चाहिए।

6.7 सामाजिक नीति के अभिगम (Approaches of Social Policy)

सामाजिक नीति के आदर्शात्मक अभिगम क्या है इसके विषय में कह पाना अत्यन्त कठिन है। सामाजिक नीति से सम्बन्धित अभिगमों की संख्या कई है। प्रत्येक अभिगम सामाजिक नीति की कार्यविधियों को एकविशेष आधार प्रदान करते हैं। सामाजिक नीति के मुख्य अभिगमों की चर्चा निम्नवत् हैः-

1. नवाधिकार अभिगम
2. सामाजिक प्रजातांत्रिक अभिगम
3. आमूल परिवर्तनकारी अभिगम
4. नारीवाद अभिगम
5. अप्रजाति अभिगम

6.7.1 नवाधिकार अभिगम (New Right Approach)

सामाजिक नीति का यह अभिगम बाजा.. अथवा आर्थिक उदारवाद, एक नव संरक्षणवादी अथवा असामूहिक अभिगम की ओर संदर्भित करता है। यह शब्द अमेरिका में सन् 1970 के दशक में सामने आया। नवाधिकार अभिगम इसमें विश्वास करता है कि सरकार व्यक्तियों के जीवन को नियमित करने में आने वाली आवश्यकताको नकार सकती है। नवाधिकार अभिगम व्यक्तिगत आजादी तथा स्वतंत्रता पर अत्यधिक बल देती है। नवाधिकार नीति निर्माता इसमें विश्वास करते हैं कि सरकार उन सामाजिक समस्याओं पर हस्तक्षेप करती है जो बदतर समस्याएं होती है। जिसे सामान्यतः बाजार प्राथमिकता प्रदान करता है। नवाधिकार विचारक और नीति निर्माताओं का ध्यान अधिकतर एक ओर वे व्यक्तिगत जो कल्याणकारी सेवाओं तथा सहायता की योग्यता रखते है और दूसरी ओर ऐसे लोगों को जानने का प्रयास किया जाता है जिन लोगों ने सरकार द्वारा कल्याण और सहायता न प्राप्त की हो के मध्य वितरण होता है।

यथा यदि कोई निर्धन है तो उसमें उसका कोई दोष नहीं है कि वह कल्याणकारी सेवाओं और सहायता को न प्राप्त करे जबकि कोई व्यक्ति इसलिए निर्धन हैं क्योंकि वे जानबूझकर नौकरी से वंचित है अथवा ऐसे लोग जो जानबूझकर धन अथवा योग्यता को अलास्य के कारण अयोग्य बना रहे हो। नवाधिकार अभिगम व्यक्तियों के उत्तरदायित्व और चयन पर अत्यधिक बल देता है तथा समाज कल्याण सेवाओं को प्रदान करने वाले तथा प्राप्त करने वालों पर प्रेरणादायक प्रभाव पड़ता है। नवाधिकार विचारधारा को मानने वाले विचारक राज्य द्वारा प्रयोजित सेवाओं और कल्याण व्यवस्थाओं के विचारों का विरोध करते हैं तथा इस बात का तर्क प्रस्तुत करते हैं कि वर्तमान की जब लोक व्यवस्था को कम किया जाना अधिकार अभिगम को स्वीकार किया गया जिसमें नीतियों को इस प्रकार से विकसित किया जाता है कि वे प्रोत्साहित होकर निजी सेवा प्रदान करने वालों अथवा स्वैच्छिक पोषित दातव्य सेवाओं को उपयोग करने वालों से खरीद सके।

6.7.2 सामाजिक प्रजातांत्रिक अभिगम (Social Democratic Approach)

सामाजिक प्रजातांत्रिक अभिगम सामाजिक उदारवाद और सामूहिक अभिगम की अवधारणा पर आधारित है। सामाजिक नीति का यह अभिगम राज्य द्वारा प्रदान की जाने वाली वृहत् स्तर सामाजिक कल्याणकारी सेवाओं के परिणाम पर निर्भर करती है और उन लोगों के जीवन का नियमन करती है जिन्होंने नवाधिकार विचारकों को अस्वीकार करती है। सामाजिक नीति निर्माता समाज का प्रबन्धन करने महत्वपूर्ण भूमिका निभाने के लिए सामाजिक प्रजातांत्रिक अभिगम से प्रेरित होते है और यह विश्वास करते हैं कि राज्य नागरिकों की निर्धनता से रक्षा करेगा और विकास के अवसर देगा तथा समाज में व्याप्त सामाजिक और आर्थिक असमानता को कम करेगा।

सामाजिक प्रजातांत्रिक नीतियों का मुख्य उद्देश्य सिद्धान्तों तथा निर्देशों में समानता लाना है। नवाधिकार विचारकों का मानना है कि वित्तीय रूप से सफल व्यक्ति अपने लिए सम्पन्नता का चयन स्वतंत्र होकर कर सकते हैं। जबकि सामाजिक प्रजातांत्रिक विचारकों का मानना है कि आवश्यकताग्रस्त व्यक्ति को सहायता प्रदान करना राज्य का कर्तव्य है। इसका तात्पर्य यह है कि सामाजिक प्रजातांत्रिक नीति निर्माता यह वकालत करते हैं कि अत्यधिक आय प्राप्त करने वाले व्यक्तियों पर अत्यधिक कर लगाया जाना चाहिए और इसके एकत्रित कोश का उपयोग समाज कल्याण सेवाओं के लिए किया जाना चाहिए।

6.7.3 आमूल परिवर्तनकारी समाजवादी अभिगम (Radical Socialist Approach)

आमूल परिवर्तनकारी समाजवादी अभिगम माक्र्सवाद, नवमाक्र्सवाद अथवा संघर्ष अभिगम पर आधारित है जिसमें आमूल परिवर्तनकारी समाजवादी दृष्टिकोण को मानने वाले पूंजीवादी अर्थव्यवस्था का विरोध

करते है और यह आरोप लगाते है कि कुछ धनी लोगों के द्वारा प्राप्त लाभों से ही असमानता व सामाजिक समस्याएं उत्पन्न होती हैं।

नार्मन जिन्सबर्ग (1998) ने स्पष्ट किया है कि जो सामाजिक नीति की सामाजिक विचारधारा को स्वीकार करते हैं वे पूंजीवाद से सम्बन्धित दो मान्यताओं को निर्मित करते हैं। प्रथम यह कि पूंजीवादी समाजों से सभी लोगों की समाज कल्याण आवश्यकताएं पूरी नहीं हो सकती हैं क्योंकि यह माना जाता है कि पूंजीवादी आधार प्रतियोगात्मक व्यक्तिवाद पर होता है। दूसरा यह कि पूंजीवाद में असमानता तथा विभाजिता का तत्व होता है जो कि सैद्धान्तिक रूप से अस्वीकार करता है। सामाजिक अभिगम सामूहिकता के सिद्धान्त को स्वीकार करता है। समाजवादी सामाजिक व्यवहारों का भी अध्ययन करते हैं। इसका प्रभाव यह होता है कि समाजवादी योजनाओं के द्वारा एक ऐसा वातावरण तैयार होता है जिससे कि लोग अपने को विकसित कर सकते हैं। आमूल परिवर्तनकारी समाजवादी अभिगम का लक्ष्य पूंजीवाद का हस्तांतरण करना है जिससे राज्य द्वारा वृहत् स्तर पर पूंजीवाद व्यवस्था में हस्तक्षेप किया जाता है। इसके अन्तर्गत नये अधिक रूप से सामूहिक सहायता युक्त, और समतावादी समाज की स्थापना की जाती है। सामाजिक नीति का एक मुख्य लक्ष्य समाज में सम्पन्नता और संसाधनों का पुनर्वितरण करना जिससे कि समानता और कल्याण के उपाय सार्वभौमिक हो सके।

6.7.4 नारीवाद अभिगम (Feminist Approach)

सामाजिक नीति का विश्लेषण करने के लिए सापेक्ष रूप से नारीवाद को नये अभिगम के रूप में प्रस्तुत किया गया है। लेविस (1998) का कहना है कि सामाजिक नीति के एक अभिगम के रूप में पहचान को स्थापित करना अथवा सोचना गलत है। महिलाओं के परिप्रेक्ष्य में विभिन्न मार्गों के आधार पर चुनौतीपूर्ण मान्यताओं तथा सामाजिक नीति के अभ्यासों के द्वारा कल्याणकारी महिलाओं के परिप्रेक्ष्य से सम्बन्धित सामाजिक मुद्दों कीविशेषताओं को स्पष्ट करता है। लेविस (1998) ने स्पष्ट किया है कि सामाजिक नीतियों में नारीवादी विश्लेषण का आरम्भ 1970 के दशक में आरम्भ हुआ। नारीवादी विचारधारा के लोगों का मानना है कि कल्याणकारी राज्य अपने उत्तरदायित्व में असफल रहा है और पारम्परिक समाजविशेषकर पुरुष मानसिकता के द्वारा किए जाने वाले प्रयास सफल नहीं हो सके हैं। नारीवादी विचारकों के विश्लेषण के आधार पर पुरुष मान्यताओं ने हमेशा प्रश्नचिन्ह लगाया है और जिसे पितृसत्तात्मक में लागू किया गया है। नारीवादी विश्लेश क सामाजिक नीति के महिला केन्द्रित अभिगम का पक्ष लेते हैं। सामाजिक नीति में जिसका उद्देश्य महिला असमानता को दूर करना और महिलाओं से सम्बन्धित विशिष्ट उद्देश्यों के आधार उनकी समस्याओं का समाधान प्रस्तुत करना है।

6.7.5 अ-प्रजाति अभिगम (Anti- Racist Approach)

अप्रजाति सामाजिक नीति का केन्द्रीय लक्ष्य है। यह अभिगम इस बात पर बल देता है कि प्रभावी सामाजिक नीति उपायों के उपयोग से सकारात्मक मार्गों से व्यक्तिगत संगठनात्मक और सामाजिक प्रजाति के आधार को अवक्रमित करती है।

अप्रजाति सामाजिक नीतिविशेषकर काले लोगों तथा अन्य अल्पसंख्यक समुदायों के लोगों की स्थितियों पर केन्द्रित होती है। अप्रजाति सामाजिक नीति के द्वारा लोग चाहते है कि सरकार इस तथ्य को स्वीकार करे कि प्रजाति एक मुख्य सामाजिक समस्या हैं।

सामाजिक नीति के अप्रजाति अभिगम को जब पूर्व में तथा वर्तमान में सामाजिक नीति उपायों के साथ लागू किया जाता है और कल्याणकारी व्यवस्था को सम्पूर्ण रूप से देखा जाता है तो प्रजाति की समस्या का समाधान करने के लिए कल्याणकारी उपायों तथा विचारों को इसमें शामिल किया जाता है। अप्रजाति एक

अभिगम के रूप में असमानता को पूरा करने का प्रयास करता है। यह इस अवधारणा पर आधारित है कि प्रजाति संस्थागत है और प्रत्येक लोगों के जीवन से सम्बन्धित है। यह अभिगम इस बात पर बल देता है कि प्रजाति की चुनौती को सामाजिक नीतियों द्वारा दूर करने और परिर्वन के मार्गो को तैयार करना जिससे कि उपायों के द्वारा समाज में तालमेल स्थापित किया जा सके।

टालट तथा मिदग्ले (2004) ने सामाजिक नीति के विभिन्न अभिगमों की चर्चा की है जो निम्नवत् है:-

- जनाधिकार अभिगम
- उद्यम अभिगम
- सांख्यविद् अभिगम
- सम्पूर्ण अभिगम

6.8 सामाजिक नीति के प्रारूप (Models of Social Policy)

सामाजिक नीति के प्रारूप सभी सामाजिक नीतियों पर आधारित है। सामाजिक नीति प्रारूप अधिकारिक रूप से पहचान तथा प्रक्रियाओं और इनके मध्य पाये जाने वाले सम्बन्धों को व्यक्त करता है। साधारण रूप में सामाजिक नीति को सामाजिक क्षेत्रों से सम्बन्धित नीतियों के रूप में जाना जा सकता है और प्रारूप को सामाजिक नीति के रूप में समानता, वितरण, सामाजिक न्याय तथा सामाजिक और जीवन निर्वाह सुरक्षा को मूर्त रूप प्रदान करने से है।

रिचर्ड टिटमस ने सामाजिक नीति के तीन प्रारूपों का उल्लेख किया है जो कि निम्नवत् है:-

6.8.1 आवासीय कल्याण प्रारूप (Residential Welfare Model)

आवासीय कल्याण प्रारूप में कल्याण की आवासीय अवधारणा से तात्पर्य राज्य सहायता के आंशिक रूप से न्यूनतम आवश्यकता के लिए तथ्यों तथा सभी प्रकार की सहायता के अवसर समाप्त होने के पश्चात् उपलब्ध होती है। आवश्यकता के कारण ही वास्तव में एक व्यक्ति को परिभाषित करना कि वह आवश्यकताग्रस्त है। समाज कल्याण संस्थानों की विचार धारा ने ही परिवार तथा निजी बाजार की सहायता करने के लिए आवासीय कल्याण प्रारूप की रूपरेखा तैयार की थी। अपना कल्याण करने में व्यक्ति को बहुत महत्वपूर्ण इकाई और उपकरण माना जाता है। इस प्रारूप में यह माना जाता है कि प्रत्येक व्यक्ति के पास पर्याप्त अवसर उपलब्ध है और इन अवसरों को प्राप्त करने में वह अपने सामथ्र्य का प्रयोग करता है। यदि अवसरों को प्राप्त करने में किसी प्रकार की विफलता होती है तो वह व्यक्ति स्वयं उत्तरदायी होता है तथा समाज की आर्थिक एवं सामाजिक प्रक्रियाओं का मूल्यांकन संस्थाओं अथवा अवसर संरचनात्मक के साथ नहीं होता है। वास्तव में क्या आवश्यक है, इस प्रारूप के अनुसार यह एक आंशिक सहायता होती है जो कि तनाव से ग्रसित व्यक्ति को दी जाती है जिससे कि वह योग्य हो सके तथा उपलब्ध अवसरों का उपयोग कर सके और आत्म निर्भर बन सके।

6.8.2 उपलब्धि निष्पादन प्रारूप (Achievement Performance Model)

उपलब्धि निष्पादन प्रारूप इस मान्यता को स्वीकार करता है कि सामाजिक आवश्यकताओं की प्राप्ति मेरिट अर्थात् गुणों के आधार पर अर्जित स्थिति कार्य निष्पादन तथा उत्पादकता के आधार पर होनी चाहिए। इसके साथ ही समुदाय के पास वृहत् स्तर पर वित्तीय तथा तकनीकी संसाधनों की उपलब्धता होनी चाहिए जिससे कि

सामाजिक एवं कल्याणकारी सेवाओं को प्रोत्साहित और विकसित करने का उत्तरदायित्व केा निभाया जा सके। जबकि बाजार में उपलब्ध किसी भी प्रकार की सेवाओं का भुगतान लाभ प्राप्तिकर्ता द्वारा किया जाना चाहिए। इस प्रकार इन सेवाओं की प्राप्ति व्यक्ति की भुगतान क्षमता पर निर्भर करती है। साथ ही इन सेवाओं से सम्बन्धित संसाधनों का उपयोग वह किसी भी समय पर कर सकता है। बहुत से ऐसी व्यवस्थाएं है जिसके द्वारा भुगतान करने की योग्यता क्षमता में वृद्धि हो सकती है। इस संदर्भ में टिटमस का कहना है कि वित्तीय एवं व्यावसायिक कल्याण योजनाएं उन लोगो के लिए उपलब्ध है स्थानीय कार्य संरचना में स्थित है और अन्य संसाधनों पर अपना अधिपत्य रखते हैं। आवासीय किराये के लिए आर्थिक सहायता, स्वास्थ्य के लिए निशुल्क अथवा आंशिक योगदान का प्रावधान, अवकाश, कार्यालय मनोरंजन लेखा इत्यादि प्रकार की सेवाएं उपलब्ध रहती है। वित्तीय कल्याणकारी योजना में करों में छूट, आवासीय ऋण, व्यवसायिक व्यय, जीवन बीमा प्रीमियम अलग से आयकरों में छूट इत्यादि को शामिल किया जा सकता है। लोगों में संसाधनों का उपभोग करने व वितरण के इन सेवाओं का प्रभाव असमानता की खाई को बनाये रखना और निर्मित करने से होता है।

6.8.3 संस्थागत पुनर्वितरण प्रारूप (Institutional Redistributive Model)

स्थागत पुनर्वितरण प्रारूपमें सामाजिक न्याय की अवधारणा के सिद्धान्त पर आधारित है तथा लोगों केा इस बात का अधिकार प्रदान करता है कि उनकी सामाजिक और कल्याकारी सेवाएं प्राप्त हो सके इसके कि उनके भुगतान करने की क्षमता है या नहीं। एक प्रकार इस प्रारूप का एक महत्वपूर्ण पक्ष यह है कि इसके अन्तर्गत सार्वभौमिक रूप से लोगों को सेवाएं प्रदान की जाती है। बजाय आय, शिक्षा और जाति की स्थिति के आधार पर। नागरिकों को प्रदान की जाने वाली सेवाएं मुख्य रूप से राज्य का एक आवश्यक कार्य है। संस्था द्वारा पुनर्वितरण प्रारूप में, सेवाएं चयन के आधार पर प्रदान की जाती है,विशेषकर ऐसे समूह जो किविशेष देखभाल चाहते हो। इस प्रकार ये सेवाएं बिना किसी सामाजिक अथवा आर्थिक मापदण्ड की योग्यता के आधार पर प्रदान की जाती है। इसके अन्तर्गत इस बात को ध्यानपूर्वक किसी भी प्रकार आक्षेप है। ये सेवायें समाज के दुर्बल एवं कमजोर वर्ग के लोगों के लिए भी उपलब्घ होती है। जिसके द्वारा सामाजिक व्यवस्था में संतुलन स्थापित करने का प्रयास किया जाता है।

- कल्याण की संस्थागत अवधारणा को समाज के कार्यक्रमों के रूप में देखा जा सकता है जो सामाजिक व्यक्तियों के रूप में देखाजा सकता है जो सामाजिक व्यतियों को संरक्षण प्रदान करती है। इस प्रारूप मं आवश्यकता को आवश्यक तथ्यों पर स्थापित किया जाता है बिना आवश्यकता के कारणों को ध्यान में रखते हुए।
- इस प्रकार सामाजिक नीति के लक्ष्यों को सार्वभौमिक बिना मानवीय सीमाओं अथवा मानव द्वारा निर्मित नियमों कानूनों और प्रजाति के प्रदान करने का प्रयास किया जाता है। इसमें सामाजिक वृद्धि के अवसर सबको प्राप्त होते हैं यह प्रारूप मुख्य रूप से सिद्धान्तों तथा सामाजिक न्याय की अवधारणापर आधारित है जो कि यह मानकर चलता है कि एक अकेला व्यक्ति नहीं है बल्कि वह समूह और संगठन का सदस्य है।

6.9 सामाजिक नीति के सिद्धान्त (Theories of Social Policy)

सन् 1969 में डा. श्रीमती इंगा थार्सन ने अन्तर्राष्ट्रीय समाज कल्याण परिषद के समक्ष अपने विचार व्यक्त करते हुए सामाजिक नीति के 5 प्रमुख सिद्धान्तों का निरूपण किया हैः-

1. एकीकृत सामाजिक नीति का उद्देश्य आर्थिक वृद्धि का प्रोत्साहित करना होना चाहिए।

2. आर्थिक वृद्धि के लिए सामाजिक कारकों, सामाजिक स्थितियों तथा आवश्यकताओं का क्रमबद्ध एवं विस्तृत विश्लेषण प्राथमिकता के आधार पर किया जाना चाहिए।
3. ऐसे अवांछनीय सामाजिक कारकों जो सामाजिक आर्थिक विकास, औद्योगीकरण तथा नगरीकरण के कारण उत्पन्न होते हैं, के आधार पर सामाजिक नीति के लक्ष्यों का निर्धारण किया जाना चाहिए।
4. सामाजिक नीति के उद्देश्यों को इनकी उपयुक्तता, वास्तविक स्थिति, समानता, स्थानीय परिस्थितियों एवं अन्तर्राष्ट्रीय मापदण्डों के आधार पर निश्चित किया जाना चाहिए।
5. सामाजिक नीति का यह कार्य होना चाहिए कि वह सामाजिक संरचनाओं, संस्थाओं, समितियों,सम्प्रेरकों तथा मनोवृत्तियों में पायी जाने वाली कमियों का विकास के लिए निवारण एवं निराकरण करें।

उपरोक्त के अतिरिक्त सामाजिक नीति के अन्य सिद्धान्त निम्नवत् हैः-

1. एकात्मकता का सिद्धान्त,
2. अधिकार का सिद्धान्त,
3. न्याय का सिद्धान्त,
4. स्वतंत्रता का सिद्धान्त,
5. प्रजातंत्र का सिद्धान्त एवं
6. राज्य का सिद्धान्त

6.10 सामाजिक नीति के निर्धारक एवं स्रोत(Determinants andSources of Social Policy)

सामाजिक नीति राजनैतिज्ञों के धार्मिक विचारों और धर्म द्वारा प्रभावित हो सकती है। सामाजिक नीति में व्यक्तियों द्वारा किए जाने वाले प्रयासों तथा निजी उद्यमों के पक्ष में राजनैतिक संकुचित सोच वाले लोग अधिकतर पारम्परिक अभिगम का पक्ष लेते हैं। जबकि दूसरी राजनैतिक उदारवादी समान अधिकार का आश्वसान तथा राज्य नियमन के पक्ष में अपने सोच को रखते है। सामाजिक नीति के निर्धारक निम्नवत् हैं:--

1. आर्थिक कारण
2. राजनैतिक एवं संस्कृतिक कारक
3. परिवार
4. उत्सव
5. परम्परा एवं परिवर्तन
6. अन्तर्राष्ट्रीय अनुदान
7. अहंभाव

8. लालफीताशाही
9. कठोर एवं व्यवस्थित अनुशासन तथा नियंत्रण
10. वेतन एवं पेंशन अधिकार
11. अवैयक्तिक सम्बन्ध
12. अधिकारिक रिकार्ड
13. विशेषज्ञता

सामाजिक नीति के स्रोत (Sources of Social policy)

सामाजिक नीति एक अध्ययन की प्रक्रिया के रूप में यथा शिक्षा, स्वास्थ्य, देखभाल, आवास, आय इत्यादि के अनुभव से लोग अपने जीवन में वृद्धि करने और जीवन बनाए रखने में वृद्धि करने और जीवन बनाए रखने में लाभ का आंकलन करते है। सामाजिक नीति, मानव कल्याण को प्रेरित करने से सम्बन्धित जीवन की आवश्यक दशाओं का निर्माण करने बनाए रखने व परिवर्तन लाने की दिशा-निर्देश की ओर इंगित करता है। मानव कल्याण से सम्बन्धित जीवन की आवश्यक दशाओं का निर्माण करने के लिए सामाजिक नीति को निम्नवत् स्रोतो का सहारा लेना पड़ता हैः-

- संविधान,
- विधान,
- प्रशासनए एवं
- राष्ट्रीय योजनाएं

6.11 सारांश (Summary)

सारांश के रूप में सामाजिक नीति एक अध्ययन की प्रक्रिया के रूप में यथा शिक्षा, स्वास्थ्य, देखभाल, आवास, आय इत्यादि के अनुभव से लोग अपने जीवन में वृद्धि करने और जीवन बनाए रखने में वृद्धि करने और जीवन बनाए रखने में लाभ का आंकलन करते है। सामाजिक नीति, मानव कल्याण को प्रेरित करने से सम्बन्धित जीवन की आवश्यक दशाओं का निर्माण करने बनाए रखने व परिवर्तन लाने की दिशा-निर्देश की ओर इंगित करता है।

6.12 अभ्यासार्थ प्रश्न (Questions for Practice)

(1) सामाजिक नीति से आप क्या समझते हैं?

(2) सामाजिक नीति के महत्व पर प्रकाश डालिए।

(3) सामाजिक नीति को प्रभावपूर्ण बनाने के लिए उपायों का वर्णन कीजिए।

(4) सामाजिक नीति कीविशेषताओं पर प्रकाश डालिए।

(5) सामाजिक नीति के अभिगमों से आप क्या समझते हैं?

(6) सामाजिक नीति के प्रारूपों महत्व पर प्रकाश डालिए।

(7) सामाजिक नीति का सिद्धान्तों का वर्णन कीजिए।

(8) सामाजिक नीति के निर्धारकों पर प्रकाश डालिए।

6.13 सन्दर्भ पुस्तकें(Reference Books)

1. Martin, R.k, Social Policy, Random House, New York, 1970.
2. Singh, Tarlok, Social Policy, Encyclopaedia of Social Work in India, Vol Ii Planning commission, GOI, New Delhi, 1968.
3. Singh, S., Mishra, P.k, D.k, and Singh, A.k, N.k, Bharat mein Samajik Niti, Niyojan Evam Vikas, Deva Publications, Lucknow, 2006.
4. Bhartiya, A.k,K .k. Introduction to Social Policy, NRBC, Lucknow, 2009.
5. Alock, P.k, Social Policy in Bretain, Mcmillan, New York, 2003.
6. Adams, R.k, Social Policy for Social Work, Palgrave, New York.
7. äake, R.k, F.k, The Principles of Social Policy, Palgrave, New York
8. साइमन, एच.ए. (1946), द प्रोवर्ब ऑफ एडमिनिस्ट्रेसन, पब्लिक एडमिनिस्ट्रेसन रिव्यू: विन्टर।
9. ड्रकर, पी.एफ (1975), मैनेजमेन्ट: टास्क, रिसपान्सबिलिटिज, प्रैक्टिस, बाम्बेः एलाइड पब्लिर्स।
10. टेलर, एफ.डब्ल्यू, (1911) द प्रिसिंपल ऑफ साइंसटिफिक मैनेजमेन्ट, न्यू यार्क: हार्पर ब्रदर्स।
11. योडर, डी. (1959) पर्सनेल प्रिंसिपलस् एण्ड पालिसिस, एन्गलीवुड क्लिफस् एन.जे.: प्रेन्टिस हॉल ।
12. ब्रीच, इ.एफ.एल. (1967), मैनेजमेन्ट - इटस् नेचर एण्ड सिग्निफिकेन्स्, लन्दन: पिटमैन पेपरबैक्स।
13. अवस्थी, अमरेश्वर एवं श्रीराम महेश्वरी, लोक प्रशासन, लक्ष्मीनरायण अग्रवाल पब्लिकेशन, आगरा।
14. सिंह, निर्मल, प्रिन्सिपल ऑफ मैनेजमेन्ट, दीप एण्ड दीप पबिल्केशन, नई दिल्ली।
15. शर्मा एम. एल., केजरीवाल, बी. के. एवं अग्रवाल, अनुपम, प्रबन्धकीय अर्थशास्त्र, साहित्य भवन पब्लिकेशन, आगरा, 2004.
16. अग्निहोत्री इन्द्रा एवं अवस्थी, अरविन्द, आर्थिक सिद्धान्त, आलोक प्रकाशन, लखनऊ, इलाहाबाद 1999।

इकाई-7

सामाजिक नीति: भारतीय संविधान एवं पंचवर्षीय योजनाएं

इकाई की रूपरेखा

7.0 उद्देश्य (Objectives)

7.1 प्रस्तावना (Preface)

7.2 भूमिका (Introduction)

7.3 सामाजिक नीति एवं भारतीय संविधान (Social Policy & Indian Constitution)

7.4 सामाजिक नीति एवं पंचवर्षीय योजनाएं (Social policy & five year plans)

7.5 सारांश (Summary)

7.6 अभ्यास प्रश्न (Questions for Practice)

7.7 सन्दर्भ पुस्तकें (reference books)

7.0 उद्देश्य (Objectives)

प्रस्तुत अध्याय के अध्ययन के पश्चात आप -

1. भारतीय संविधान में वर्णित सामाजिक नीतियों को जान सकेंगे |
2. विभिन्न पंचवर्षीय योजनाओं के अंतर्गत लागू की गयी सामाजिक नीतियों को समझ सकेंगे |

7.1 प्रस्तावना (Introduction)

सामाजिक नीति को सामाजिक विकास का मुख्य आधार माना जाता है। समावेशी विकास के लक्ष्य को प्राप्त करने, सुदृढ़ करने एवं उसे स्थायी बनाये रखने का प्रयास किया जाता है जिससे कि राज्य व राज्य के नागरिक एक स्वस्थ्य एवं सशक्त समाज का निर्माण कर सके और नागरिकों के जीवन की गुणवत्ता में वृद्धि हो सके। सामाजिक नीति मानव कल्याण को प्रोत्साहित करने तथा जीवन स्तर को बनाए रखने के लिए निर्देशित होती है। ऐतिहासिक दृष्टिकोण के आधार पर सामाजिक नीति, सामाजिक रूप में पुनर्वितरण (धनी से निर्धन, युवा से वृद्ध की ओर) सामाजिक नियमन रूप से (बाजार अर्थव्यवस्था से सम्बन्धित आधारभूत नियमों को बनाने से), तथा सामाजिक अधिकार रूप से (नागरिकों के अधिकारों व कर्तव्यों को करने के साथ आय तथा सेवाओं का आंकलन करना) हस्तक्षेप करती है।

7.2 भूमिका (preface)

सामाजिक नीति सामान्यतः संविधान से प्रेरित होती है। सामाजिक समस्याओं को सुलझाने के लिए मानव संसाधनों का विकास करते हुए आर्थिक प्रगति की गति को और अधिक तेज करना तथा इससे होने वाले लाभों को आम जनता में न्यायपूर्ण ढंग से बांटना आवश्यक समझा गया, और इसलिए सरकार के लिए यह आवश्यक हो गया कि वह अपनी सामाजिक नीति को उचित रूप से निर्धारित कर लागू करे। भारत की सामाजिक व्यवस्था को सुदृढ़ बनाने के लिए स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् नियोजित विकास का सहारा लेना आवश्यक समझा गया क्योंकि यह अनुभव किया गया कि अनेक गंभीर सामाजिक समस्याएं उचित विकास न होने के कारण ही हमारे समाज में व्यापक रूप से विद्यमान है। इन समस्याओं को दूर करने के लिए संविधान एक आधार प्रस्तुत करता है। सामाजिक समस्याओं को सुलझाने के लिए मानव संसाधनों का विकास करते हुए आर्थिक प्रगति की गति को और अधिक तेज करना तथा इससे होने वाले लाभों को आम जनता में न्यायपूण ढंग से बांटना आवश्यक समझा गया, और इसलिए सरकार के लिए यह आवश्यक हो गया कि वह अपनी सामाजिक नीति को उचित रूप से निर्धारित कर लागू करे।

7.3 सामाजिक नीति एवं भारतीय संविधान (Social policy & Indian Constitution)

सामाजिक नीति सिद्धान्तों अथवा निर्देशों पर आधारित होती है । जिसके द्वारा लोगो को पर्याप्त प्राप्त होते है जिससे कि वे अपना सम्पूर्ण विकास के अवसर प्राप्त कर सके। भारतीय संविधान, भारत को एक कल्याणकारी राज्य की संज्ञा प्रदान करता है। सामाजिक नीति का सम्बन्ध सामाजिक आवश्यकताओं की एक विविधता एवं मानव संगठन की कमी वाली परिस्थितियों में कार्य करने के अध्ययन से है जिसे परम्परागत रूप से इन आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए समाज सेवायें अथवा समाज कल्याण व्यवस्था कहा जाता है। सामाजिक नीति का सम्बन्ध उन परिस्थितियों की प्राप्ति से है जिनमें यह समझा जाता है कि नागरिक 'अच्छा जीवन' प्राप्त कर सकते हैं।

भारत की सामाजिक नीति से अभिप्राय क्रिया के ऐसे व्यक्त मार्ग से है जो भारत में समाज सेवाओं अर्थात् ऐसी सेवाओं जो जनसंख्या के सभी वर्गों के व्यक्तियों के लिए उनके व्यक्तित्व के समुचित विकास के लिए उपयुक्त अवसर उपलब्ध कराने हेतु प्रत्यक्ष रूप से प्रदान की जानी है, के आयोजन का मार्गदर्शन करता है। सामाजिक नीति के चार महत्वपूर्ण स्रोत हैं जिनका विवरण निम्नवत् किया गया हैः-

- संविधान
- विधान
- प्रशासन तथा
- राष्ट्रीय योजनाएं

यहाँ पर भारतीय संविधान में सामाजिक नीति की चर्चा की जा रही है तथा पंचवर्षीय योजनाओं में भारतीय संविधान में व्यक्त सामाजिक नीति की चर्चा अगली इकाई में की गई है।

7.3.1 भारतीय संविधान में व्यक्त सामाजिक नीति

भारतीय संविधान के राज्य के नीति निदेशक सिद्धान्त ;चतुर्थ खण्ड में सामाजिक नीति का वर्णन विस्तृत एवं स्पष्ट रूप से किया गया है:-

अनुच्छेद 38

अनुच्छेद 38 के अन्तर्गत यह कहा गया है कि -

1. राज्य उतने अधिक प्रभावपूर्ण ढंग से जितना यह कर सकता है, एक ऐसी सामाजिक व्यवस्था की स्थापना एवं संरक्षण द्वारा लोगों के कल्याण के प्रोत्साहन हेतु प्रयास करेगा जिसमें राष्ट्रीय धारा की संस्थाओं में सामाजिक, आर्थिक एवं राजनैतिक न्याय लाया जायेगा।
2. राज्य विशिष्ट रूप से न केवल विभिन्न क्षेत्रों में रहने वाले अथवा विभिन्न व्यवसायों में लगे हुये व्यक्तियों बल्कि लोगों के समूहों में भी आय की असमानताओं को कम करने हेतु प्रयत्न तथा स्थिति, सुविधाओं एवं अवसरों में असमानताओं के निवारण हेतु प्रयास करेगा।"

अनुच्छेद 39

अनुच्छेद 39 में यह प्रावधान किया गया है कि "राज्य विशिष्ट रूप से अपनी नीति को प्राप्त करेन हेतु निदेशित करेगा –

1. यह कि नागरिकों, पुरुषों एवं महिलाओं, को समान रूप से समुचित आजीविका के कमाने के साधन का अधिकार प्राप्त हो;

2. यह कि समुदाय के भौतिक संसाधनों का स्वामित्व एवं नियंत्रण इस प्रकार वितरित हो कि सामान्य निहित की सर्वोत्तम पूर्ति हो सके;

3. यह कि अर्थव्यवस्था का संचालन सामान्य अहित हेतु सम्पत्ति एवं उत्पादन के साधनों का संकेन्द्रण उत्पन्न न करे;

4. यह कि पुरुषों एवं महिलाओं दोनों के लिए समान कार्य के लिए समान वेतन हो;

5. यह कि श्रमिकों, पुरुषों एवं महिलाओं के स्वास्थ्य एवं शक्ति तथा बच्चों की कोमल आयु का दुरुपयोग न हो और यह कि नागरिक आर्थिक आवश्यकता द्वारा अपनी आयु एवं शक्ति के लिए अनुपयुक्त कार्यों को करने के लिए बाध्य न किये जायें;

6. यह कि बच्चों को स्वस्थ रूप से तथा स्वतंत्रता एवं सम्मान की स्थिति में विकसित होने के अवसर एवं सुविधायें प्रदान की जाँय और यह कि बाल्यावस्था एवं युवावस्था का शोश ण एवं नैतिक तथा भौतिक परित्याग के विरुद्ध संरक्षण किया जाय।"

अनुच्छेद 39 ए

अनुच्छेद 39 ए के अन्तर्गत यह व्यवस्था की गयी है: "राज्य इस बात की व्यवस्था करेगा कि वैधानिक व्यवस्था का संचालन समान अवसर के आधार पर न्याय को प्रोत्साहित करता हो औरविशेष रूप से उपयुक्त विधान अथवा

योजना अथवा अन्य किसी प्रकार से निःशुल्क कानूनी सहायता यह सुनिश्चित करने के लिए करेगा कि न्याय प्राप्त करने के अवसरों से कोई नागरिक आर्थिक अथवा अन्य निर्योग्यताओं के कारण वंचित न रह सके।"

अनुच्छेद 41

अनुच्छेद 41 में कहा गया है: "अपनी आर्थिक क्षमता एवं विकास की सीमाओं के अधीन राज्य कार्य, शिक्षा एवं बेकारी, वृद्धावस्था, बीमारी एवं असमर्थता की स्थितियों में तथा अवांछनीय आवश्यकता की अन्य स्थितियों में जन सहायता अधिकार को प्राप्त कराने हेतु प्रभावपूर्ण प्रावधान करेगा।"

अनुच्छेद 42

अनुच्छेद 42 में यह व्यवस्था की गयी है: "राज्य कार्य के लिए न्यायपूर्ण एवं मानवीय परिस्थितियों को प्राप्त करने तथा मातृत्व सहायता के लिए प्रावधान करेगा।"

अनुच्छेद 43

अनुच्छेद 43 में यह कहा गया है: "उपयुक्त विधान अथवा आर्थिक संगठन अथवा अन्य किसी प्रकार से राज्य सभी श्रमिकों, कृषि से सम्बन्धित, औद्योगिक अथवा अन्य के लिए कार्य, जीवन निर्वाह मजदूरी, अच्छे जीवन का आश्वासन प्रदान करने वाली कार्य की शर्तों तथा रिक्त समय एवं सामाजिक तथा सांस्कृतिक अवसरों को पूर्ण आनन्द दिलाने हेतु प्रयास करेगा, औरविशेष रूप से, राज्य ग्रामीण अंचलों में व्यक्तिगत अथवा सरकारी आधार पर कुटीर उद्योगों को प्रोत्साहित करने हेतु प्रयास करेगा।"

अनुच्छेद 43 ए

अनुच्छेद 43 ए में यह प्रावधान किया है: "उपयुक्त विधान द्वारा अथवा अन्य किसी प्रकार से राज्य उद्योग के प्रतिष्ठानों, संस्थानों अथवा अन्य संगठनों के प्रबन्ध में श्रमिकों की साझेदारी प्राप्त करने हेतु कदम उठायेगा।"

अनुच्छेद 45

अनुच्छेद 45 में कहा गया है: "इस संविधान के लागू होने के 10 साल की अवधि के अन्तर्गत राज्य सभी बच्चों के लिए निःशुल्क एवं अनिवार्य शिक्षा जब तक कि ये 14 वर्ष की आयु को पूरा न कर लें, के प्रावधान हेतु प्रयास करेगा।"

अनुच्छेद 46

अनुच्छेद 46 में व्यवस्था की गयी है: "राज्य कमजोर वर्ग के लोगों औरविशेष रूप से अनुसूचित जातियों एवं जनजातियों के शैक्षिक एवं आर्थिक हितों काविशेष सावधानी के साथ संवर्द्धन करेगा और सामाजिक अन्याय तथा शोश ण के सभी प्रकारों के विरुद्ध संरक्षण प्रदान करेगा।"

अनुच्छेद 47

अनुच्छेद 47 में कहा गया है: "राज्य अपने लोगों के पोषण के स्तर और जीवन के स्तर को ऊँचा उठाने ओर जन स्वास्थ्य में सुधार लाने को अपना प्राथमिक कर्तव्य समझेगा औरविशेष रूप से राज्य दवा के लिए मादक पेयों एवं ऐसी औश धियों एवं दवाओं के प्रयोग पर निषेध लागू करने का प्रयास करेगा जो स्वास्थ्य के लिए हानिकारक हैं।"

7.4 सामाजिक नीति एवं पंचवर्षीय योजनाएं (Social Policy & Five year plans)

सामाजिक नीति लोगों की कल्याणकारी आवश्यकताओं और सामाजिक समस्याओं का समाधान प्रस्तुत करने में लोचशीलता तथा कल्पना को प्रोत्साहित करती है। सामाजिक नीति, सरकारी तथा अन्य संगठनों के द्वारा मानवीय आवश्यकताओं को पूरा करने से सम्बन्धित है। सामाजिक नीति, मानवीय अस्तित्व के लिए आवश्यक सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक पक्षों से सम्बन्धित है तथा इन पक्षों के लिए साधनों को किस प्रकार उपलब्ध कराया जाए, से भी सम्बन्धित है।

सामाजिक नीतियां का लोक नीतियों के रूप में मुख्य उद्देश्य सूक्ष्म स्तर पर लोगों को प्राप्त होने वाले समानतास के अवसर के लाभ को प्रोत्साहित करना, संस्था तथा संस्थागत लाभों को समूह तक पहुंचाना, तथा समष्टि स्तर पर क्षैतिज तथा लम्बवत् रूप में सामाजिक एकीकरण के लाभ को समाज तक पहुंचाता है। सामाजिक नीति को परिवर्तन के लिए किए जाने वाली सम्पूर्ण क्रियाओं के रूप में वर्णित किया जाता है।

7.4.1 पंचवर्षीय योजनाओं में सामाजिक नीति (Social Policy in five year plans)

सामाजिक नीति सामाजिक लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए आर्थिक विकास और सामाजिक विकास के सूचकों व सामाजिक मूल्यों को बनाए रखने और प्रोत्साहित करने से सम्बन्धित है। सामाजिक नीति के द्वारा अधिक से अधिक साम्यपूर्ण और सामाजिक स्थायी विकास के लक्ष्य को प्राप्त करना है। समग्र रूप से एक सामाजिक नीति नीतियों, संस्थाओं और कार्यक्रमों को प्रोत्साहित करना है जिससे कि आर्थिक वृद्धि के लिए समता एवं सामाजिक न्याय के संतुलन को स्थापित किया जा सके।

स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् भारत में नियोजित व्यवस्था को अपनाया गया जिसके माध्यम से नियोजित कार्यक्रमों का निर्माण करते हुए संविधानिक आधारों पर सामाजिक नीति को लागू करने का प्रयास किया गया। भारत में सामाजिक नीति का मुख्य उद्देश्य वृद्धि के साथ सामाजिक न्याय के लक्ष्य को प्राप्त करना है। भारतीय संविधान के अन्तर्गत व्यक्त की गयी सामाजिक नीति को लागू करने तथा विकास की प्रक्रिया को प्रोत्साहित करने के लिए पंचवर्षीय योजनायें बनायी गयी है। इनमें सामाजिक नीति के विविध पहलुओं यथा-स्वास्थ्य, आवास, शिक्षा,मनोरंजन इत्यादि से सम्बन्धित नीतियों का उल्लेख किया गया है। सामान्यतया इन सभी योजनाओं में आवश्यक आवश्यकताओं की पूर्ति निर्धनता के उन्मूलन, रोजगार के अवसरों में वृद्धि सम्पत्ति, धन तथा अवसरों की असमानता में कमी, पूँजी के एकाधिकार की समाप्ति, मानव संसाधनों के विकास, व्यक्तियों की मनोवृत्तियों तथा संस्थाओं की संरचनाओं में समाजवादी व्यवस्था के अनुरूप आवश्यक परिवर्तन, विकास सम्बन्धी नीति के निर्धारण एवं कार्यान्वयन में जन-सहभागिता, निर्बल वर्गो के कल्याण में वृद्धि, विकास के समान अवसर एवं विकास की प्रक्रिय से प्राप्त होने वाले लाभों के साम्यपूर्ण वितरण की व्यवस्था की गयी है।

प्रथम पंचवर्षीय योजना (1951-56)

पहली पंचवर्षीय योजना में यह स्पष्ट रूप से कहा गया था कि विकास की दर एवं स्वरूप में क्षेत्रीय संतुलन तथा अनवरत वृद्धि पर उचित ध्यान दिया जायेगा। प्रथम पंचवर्षीय योजना में योजना आयोग के द्वारा निम्नलिखित लक्ष्यों का निर्धारण किया गया। जिससे कि सामाजिक नीति के लक्ष्य को प्राप्त किया जा सके। जो कि निम्नवत् है:-

- सामाजिक सौहार्द्र के साथ सांस्कृतिक विकास पर्याप्त जीवन स्तर तथा सामाजिक न्याय के लक्ष्य को प्राप्त करना।

- आय का साम्यपूर्ण वितरण मूलभूत आवश्यकताओं के लिए प्रावधान करना तथा लोगों को विकास के लिए समान अवसर उपलब्ध कराना।
- मानवीय संसाधन को विकसित करना।

द्वितीय पंचवर्षीय योजना (1956-61)

दूसरी पंचवर्षीय योजना में संतुलित विकास की आवश्यकता पर बल दिया गया और इसके लिए पिछड़े क्षेत्रों में शक्ति, जलपूर्ति, परिवहन तथा सिचाई सम्बन्धी सुविधाओं को उपलब्ध कराने, ग्रामीण तथा लघु उद्योगों का प्रसार करने तथा नये उद्यमों के स्थान का निर्धारण करने के कार्यक्रम सम्मिलित किये गये।

तृतीय पंचवर्षीय योजना (1961-66)

तीसरी पंचवर्षीय योजना में असमानताओं को दूर करने के लक्ष्य की प्राप्ति हेतु शक्ति, परिवहन, सिंचाई, शिक्षा एवं प्रशिक्षण तथा ग्रामीण एवं लघु उद्योगों का विकास करने से सम्बन्धित कार्यक्रम सम्मिलित कियें गये।

1964 में आय वितरण एवं जीवन स्तर समिति ने अपने प्रतिवेदन में यह स्पष्ट किया कि आय की असमानता में कमी होने के स्थान पर वृद्धि हुई है और यह वृद्धि ग्रामीण अंचलों की तुलना में नगरों में कही अधिक हुई है।

चतुर्थ पंचवर्षीय योजना (19569-74)

चोथीपंचवर्षीय योजना में न्याय के साथ वृद्धि (Growth with justice) वाक्याश का प्रयोग किया गया। इस योजना का प्रमुख उछेश्य समाजवादी समाज की स्थापना करना, प्रति व्यक्ति आय में वृद्धि करना तथा आर्थिक क्षेत्र में आत्मनिर्भरता प्राप्त करने के लिए आय तथा सम्पत्ति में अधिक समानता लाने, आर्थिक क्षेत्र में एकाधिकार को कम करने समाज में सापेक्षतया कम सुविधा प्राप्त वर्गो विशिष्ट रूप से, अनुसूचित जातियों एवं जन-जातियों को आर्थिक विकास के और अधिक लाभ प्राप्त कराने पर बल दिया गया।

पांचवी पंचवर्षीय योजना (1974-78)

पांचवी पंचवर्षीय योजना में निर्धनता उन्मूलन और आत्मनिर्भरता की प्राप्ति के दो प्रमुख उछेश्य रखे गये और निर्धनों के लिए एक न्यूनतम आवश्यकता कार्यक्रम प्रारम्भ किया गया जिसके अन्तर्गत निम्नलिखित की व्यवस्था की गयीः-

1. 14 वर्ष तक की आयु के बच्चों को उनके घरों के पास पाये जाने वाले स्थानों में प्राथमिक शिक्षा की सुविधायें प्रदान करना,
2. सभी क्षेत्रों में न्यूनतम सामुदायिक स्वास्थ्य की सुविधायें प्रदान करना जिनके अधीन निवारक,उपचारात्मक, परिवार नियोजन सम्बन्धी तथा पोषाहार सम्बन्धी तथा पोषाहार सम्बन्धी आवश्यकताओं की पूर्ति तथा रोग की व्यापकता का आररम्भिक स्थिति में ही पता लगाया जाना और खतरनाक रोगियों को बड़े चिकित्सालयों में भेजा जाना सम्मिलित है।
3. बहुत अधिक कमी वाले गांवों में पीने के पानी की पूर्ति करना।
4. 1500 या इससे अधिक आबादी वाले गांवों में सड़कों का निर्माण करना,
5. ग्रामीण क्षेत्रों में भूमिहीन मजदूरों को आवास हेतु विकसित भूखण्ड प्रदान करना,

6. मलिन बस्तियों के वातावरण में सुधार करना, तथा
7. ग्रामीण विद्युतीकरण का प्रसार करना ताकि इसके अन्तर्गत ग्रामीण जनसंख्या के 30-40 प्रतिशत को सम्मिलित को सम्मिलित किया जा सके।

पांचवी पंचवर्षीय योजन में निर्धनता उन्मूलन एवं आत्मनिर्भरता की प्राप्ति का उछेश्य रखा गया। इस योजना में कृषि एवं सिंचाई, शक्ति, उद्योग, तथा खनिज पदार्थो, ग्रामीण एवं लघु उद्योगों परिवहन एवं संचार, शिक्षा, स्वास्थ्य, परिवार कल्याण नियोजन एवं पोषाहार, नगरीय विकास, आवास एवं जलपूर्ति, शिल्पकार एवं पुनर्वासन तथा विज्ञान एवं प्रोद्योगिकी के विभिन्न, क्षेत्रों में अनेक कार्यक्रम आयोजित किये जाने की व्यवस्था की गय

छठी पंचवर्षीय योजना (1980-85)

छठी पंचवर्षीय योजना में निर्धनता उन्मूलन के उछेश्य को सर्वोच्च प्राथमिकता प्रदान की गयी। विशिष्ट रूप से, अर्थव्यवस्था की अभिवृद्धि की दर को बढाने, संसाधनों के उपयोग में कुशलता के प्रोत्साहन तथा उत्पादकता में वृद्धि आधुनिकीकरण गरीबी रूप से आर्थिक एवं सामाजिक रूप से बाधित जनसंख्या के जीवन की गुणवत्ता में सुधार, जनीतियों एवं सेवाओं में पुनर्वितरण पर अधिक बल राष्ट्रीय असानताओं में अनवरत कमी, जनसंख्या नियंत्रण, परिस्थितिकीय एवं पर्यावरणात्मक बहुमूल्य संसाधनों के संरक्षण एवं विकास की पक्रिया में सक्रिया सहभागिता के उछेश्य निर्धारित किये गये। निर्धनता को दूर करने के लिए इसका पता लगाने तथा इन लक्ष्यों के अनुरूप विशिष्ट कार्यक्रमों का निर्माण करने के अभिगम का उल्लेख किया गया। रोजगार प्रदान करने हेतु लाभपूर्ण ढंग से सेवायोजित व्यक्तियों की अभिवृद्धि की दर को बढाते हुए अर्द्ध बेकारी को कम करने तथा सामान्य स्थिति के आधार पर बेकारी को कम करने जिसे सामान्य रूप से खुली बेकारी (Open Unemployment) के नाम से जाना जाता है, की बात कही गयी। भूमिहीन परिवारों के लिए राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार कार्यक्रम, एकीकृत ग्रामीण विकास कार्यक्रम रोजगार दिलाने की दिशा में इस योजन के उल्लेखनीय कार्यक्रम है। इस योजन में शिक्षा, स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण ,आवास तथा नगरीय विकास जलपूर्ति तथा सफाई,अनुसूचित जातियों,तथा अन्य पिछड़े वर्गो के कल्याण, समाज कल्याण पोषण तथा श्रम कल्याण सम्बन्धी कार्यक्रम चलाये गये। न्यूनतम आवश्यकता कार्यक्रम के माध्यम से लोगों की न्यूनतम आवश्यकताओं की पूर्ति का आश्वासन प्रदान किया गया

सातवीं पंचवर्षीय योजना (1985-90)

सातवीं पंचवर्षीय योजना में खाद्यान्नों के उत्पादन में वृद्धि, रोजगार के अवसरों में वृद्धि और उत्पादकता में वृद्धि को और अधिक बढ़ाने का उछेश्य रखा गया। ''सातवी योजना की विकास सम्बन्धी रणनीति का प्रमुख तत्व उत्पादनकारी रोजगार(Produvtive Employment)उत्पन्न करना है। इसे सिंचाई की सुविधाओं की उपलब्धता को बढ़ात हुए कम उत्पादकता वाले क्षेत्रों में तथा छोटे किसानों में नवीन कृषि सम्बन्धी प्रौद्योगिकी के प्रसार द्वारा सम्भव बनायी गयी सघन खेती में वृद्धि, उत्पादनकारी सम्पत्ति (Productive Assets) के निर्माण में ग्रामीण में विकास कार्यक्रमों को अधिक प्रभावपूर्ण बनाने के उपायों, आवास, नगरीय सुख-सुविधाओं, सड़कों और ग्रामीण अवस्थापना (Infrastruture) का प्रावधान करने हेतु श्रम सघन निर्माण क्रियाओं के प्रसार तथा औद्योगिक अभिवृद्धि के प्रतिमान में परिवर्तनों के माध्यम से इसे प्राप्त किया जायेगा।''

सातवीं योजना में कृषि सम्बन्धी शोध, एवं शिक्षा, सहकारिता, पशुपालन एवं दुग्ध पालन, मत्स्य पालन, वन एवं वन्य जीव, ग्रमीण ऊर्जा, बृहत एवं मध्यम सिंचाई कार्यक्रम, लघु सिंचाई कमाण्ड क्षेत्र विकास, बाढ़-नियन्त्रण, ग्रामीण एवं लघु उद्योगों, सेवायोजन, जनशक्ति नियोजन, ऊर्जा, उद्योग एवं खनिज पदार्थो, परिवहन, संचार, सूचना एवं प्रसारण, शिक्षा संस्कृति एवं खेल, स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण, आवास नगरीय विकास,

जलपूर्ति एवं सफाई, समाज कल्याण एवं पोषाहार, महिलाओं के लिए सामाजिक-आर्थिक कार्यक्रमों, अनुसूचित जातियों एवं अनुसूचित जन-जातियों एवं अनुसूचित जातियों के लिए सामाजिक-आर्थिक कार्यक्रमों, विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी, पर्यावरण एवं परिस्थितिकी, न्यूनतम आवश्यकता कार्यक्रम तथा अन्य विकास सम्बन्धी कार्यक्रमों का प्रावधान किया गया।

आठवीं पंचवर्षीय योजना (1992-97)

आठवीं पंचवर्षीय योजना में सामाजिक नीति का मुख्य उछेश्य मानव संसाधन विकास पर प्रमुख बल दिया जाना निर्धारित किया गया। इसके लिए योजन में निम्नलिखित क्षेत्रों को प्राथमिकता दी गयी।

सन् 2000 तक पूर्ण रोजगार के स्तर को प्राप्त करने की दृष्टि से रोजगा के पर्याप्त अवसर उपलब्ध कराना।

1. जनता की भागीदारी से जनसंख्या वृद्धि दर को नियंत्रित करना।
2. प्राथमिक शिक्षा को सर्वसुलभ बनाना और 15 से 35 वर्ष के आयु वर्ग के लोगों में निरक्षरता को पूर्णतः समाप्त करना।
3. सभी के लिए स्वच्छ पेयजल की व्यवस्था करना।
4. स्थाई विकास के लिए आधारभूत ढांचे (ऊर्जा, परिवहन, संचार व सिंचाई) को विकसित करना।

आठवीं योजना के अन्तर्गत मानव विकास, रोजगार, जनसंख्या और परिवार कल्याण, साक्षरता और शिक्षा, स्वास्थ्य, पेयजल, कमजोर और पिछडे वर्ग का विकास, भूमि सुधार, कृषि, आधारभूत ढांचा , विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी, पर्यावरण एवं जंगल, आवास, नगरीय विकास, सार्वजनिक उपक्रम, व्यक्तियों की सहभागिता तथा अन्य विकास सम्बन्धी कार्यक्रमों का प्रावधान किया गया।

नौवी पंचवर्षीय योजना (1997-2002)

नौवी योजना का लक्ष्य वृद्धि के साथ सामाजिक न्याय और समानता (Growth with Social justice and Equality) था। नवीं पंचवर्षीय योजना का मुख्य उद्देश्य लोगों के जीवन की गुणवत्ता में वृद्धि तथा तीव्र आर्थिक वृद्धि था। इस योजना में निर्धन में निर्धन लोगों की स्थितियों में सुधार लाने के लिए तथा असमानता को दूर करने के लिए ऐतिहासिक कदम उठाये गये। इस प्रकार सामाजिक न्याय एवं समता के साथ वृद्धि का सिद्धान्त का पालन करते हुए निम्नलिखित नीतियों का निर्धारण किया गया:-

1. विशेष कर समाज के दुर्बल एवं कमजोर वर्ग के लोगों को खाद्य एवं पोषण की सुरक्षा प्रदान करना।
2. लोगों को उनकी मूलभूत आवश्यकताओं के अनुरूप पेयजल, प्राथमिक स्वास्थ्य सुविधाएं, सार्वभौमिक प्राथमिक शिक्षा, आवास तथा अन्य सुविधाओं को समय के अनुसार उपलब्ध कराना।
3. सामाजिक गतिशीलता तथा सहभागिता के द्वारा पर्यावरणीय स्थायित्व को बनाये रखने के लिए विकास के प्रत्येक चरण पर आश्वासन प्रदान करना।
4. महिला सशक्तीकरण के अतिरिक्त समाज के अन्य वर्गों यथा अनुसूचित जातियां एवं जन-जातियां, अन्य पिछड़े वर्गों तथा अल्पसंख्यकों को सामाजिक, आर्थिक परिवर्तन एवं विकास के लिए सशक्त करना।

5. स्वयं सहायता समूह, सहकारी समितियों, पंचायतीराज व्यवस्था इत्यादि संस्थाओं मे जनसहभागिता को प्रोत्साहित एवं विकसित करना तथा लोगों को आत्म-निर्भर बनने के लिए किये गये प्रयासों को सुदृढ़ करना।
6. कृषि और ग्रामीण विकास को प्राथमिकता देना ताकि पर्याप्त उत्पादक रोजगार कायम हो सके और गरीबी को दूर किया जा सकें।
7. कीमतों में स्थिरता के साथ अर्थव्यवस्था की वृद्धि दर को त्वरित करना।
8. सभी के लिए खा़द्य और पौष्टिक सुरक्षा उपलब्ध कराना और ऐसा करते हुए समाज के कमजोर वर्गो का विशेष रूप से ध्यान रखना।
9. सभी को समय-बद्ध रूप से बुनियादी न्यूनतम सेवाएं उपलब्ध कराना इनमें पीने का सुरक्षित पानी, प्राथमिक स्वास्थ्य रक्षा सुविधाएं, उपलब्ध कराना इनमें पीने का सुरक्षित पानी, प्राथमिक स्वास्थ्य रक्षा सुविधाए, सर्वव्यापक प्राथमिक शिक्षा, आवास और यातायात एवं परिवहन द्वारा सभी से सम्बन्ध स्थापित करना।
10. जनसंख्या की वृद्धि दर पर नियन्त्रण प्राप्त करना।
11. जन सहभागिता को प्रोन्नत एवं विकसित करना और इसके लिए सहभागी संस्थानों अर्थात् पंचायती राज संस्थानों, सहकारिताओं और अन्य स्वतः सहायता समूहो को बढ़ावा देना।

दसवीं पंचवर्षीय योजना (2002-2007)

दसवीं पंचवर्षीय योजना के अन्तिम प्रारूप में कहा गया है, ''दसवीं योजना नई सहस्त्राब्दि के प्रारम्भ में, विगत में प्राप्त उपलब्धियों को ऊपर उठाने तथा उभरकर सामने आई कमजोरियों को दूर करने का अवसर प्रदान करती है। इस योजन ने स्वीकार किया है कि ''देश में इस तथ्य को लेकर धैर्य कम होता जा रहा है कि नियोजन के पांच दशक बीत जाने के बावजूद हमारी जनसंख्या का एक बड़ा भाग निर्धनता के गर्त में डूबा हुआ है तथा सामाजिक उपलब्धियों में खतरे की घण्टी देने वाले अन्तराल मौजूद है।''

दसवीं योजना में समता एवं सामाजिक न्याय सुनिश्चित करने के लिए त्रिसूत्रीय रणनीति अपनाई जायेगी।

१. कृषि विकास को योजना का प्रमुख तत्व के रूप में देखा जाना चाहिए, क्योंकि इस क्षेत्र के विकास का विस्तार अधिक व्यापक,विशेषरूप से ग्रामीण निर्धनों को लाभ पहुँचाना होता है।

२. दसवीं योजना की विकास रणनीति उन क्षेत्रों के तीव्र विकास पर केन्द्रित है, जो भारत में सामाजिक नीति।

३. लाभकारी राजगार अवसर सृजित करते है, ये क्षेत्र हैः निर्माण, पर्यटन, परिवहन, लघु उद्योग, खुदरा व्यापार, सूचना प्रौद्योगिकी तथा संचार सम्बन्द्ध सेवाये।

४. सामान्य विकास प्रक्रिया से पर्याप्त रूप से लाभान्वित न हो पाने वाले विशेष कार्यक्रमों को योजनाकाल में प्रारम्भ करना।

2. दसवीं योजना के प्रमुख बिन्दु निम्नवार हैः

१. दसवीं योजना का कुल सार्वजनिक व्यय 15.25639 करोड़ रूपये लेकिन संसाधन 15.92.300 करोड़ रूपये (केन्द्र का व्यय 9.21.291 करोड़ रूपये व राज्यों का 6.71.009 करोड़ रूपये)

२. विकास दर का लक्ष्य 8 प्रतिशत वार्षिक रखा गया।

३. निर्यात वृद्धि दर 12.38 प्रतिशत वार्षिक तक लाना।

४. आयात वृद्धि दर 17.13 प्रतिशत वार्षिक तक लाना।

५. गरीबी अनुपात को 5 वर्षें में 26.1 से घटाकर 19.3 प्रतिशत तक लाना।

६. साक्षरता दर को वर्ष 2007 तक बढ़ाकर 75 प्रतिशत करना।

७. सभी गावों को पेयजल मुहैया कराना।

८. शिशु मृत्युदर को 45 प्रति हजार तथा 2012 तक 28 प्रति हजार जीवित जन्म तक कम करना।

९. योजना काल में 5 करोड़ व्यक्तियों को रोजगार उपलब्ध कराना।

१०. निवेश दर (ळण्क्ण्च्) की 28.41 प्रतिशत,घरेलू बचत दर (ळण्क्ण्च्) की 26.84 प्रतिशत तथा बाहरी बचत 1.57 प्रतिशत करना।

११. नदियों के प्रदूषित हिस्सों की सफाई करना।

१२. जनसंख्या वृद्धिदर को घटाकर 16.2 प्रतिशत करना।

१३. विद्युत पर योजना व्यय का 26.4 प्रतिशत व्यय करने का प्रावधान है। जिससे विद्युत की कुल 41.110 मेगावाट अतिरिक्त क्षमता के सृजन का लक्ष्य निर्धारित किया गया है। इसमें 25.417 मेगावाट ताप विद्युत की 14.393 मेगावाट क्षमता जल विद्युत की व शेश 1.300 मेगावाट क्षमता परमाणु ऊर्जा की।

१४. इस योजना में उदारीकरण पर जताई जा रही चिन्ताओं पर ध्यान दिया गया है। योजना में रोजगार और समानता के आर्थिक मार्ग को चुना गया है। इसमें कृषि, कृषि पर आधारित उद्योग, लघु और कुटीर उद्योग तथा असंगठित क्षेत्र में होने वाली तमाम गतिविधियों पर ध्यान दिया गया है। इस क्षेत्र में संसाधन उपलब्ध कराने और असंगठित क्षेत्र में आने वाली अड़चानों को दूर करने पर भी जोर दिया गया है।

१५. सन् 2007 तक पांच प्रतिशत बिन्दु तक निर्धनता अनुपात में कमी लाना।

१६. रोजगार के अवसरों में वृद्धि करना।

१७. सन् 2003 तक भारत के बालकों को विद्यालय से जोड़ना तथा सन् 2007 तक पांच वर्ष के बच्चों का विद्यालय में नामांकन कराना।

१८.लिंग विभेद के संदर्भ में, साक्षरता तथा मजदूरी दरों में लगभग सन् 2007 तक 50 प्रतिशत तक कमी लाना।

ग्यारहवीं पंचवर्षीय योजना (2007-2012)

ग्यारहवीं पंचवर्षीय योजना के अन्तर्गत समेकित विकास के सिद्धान्त को स्वीकार करते हुए निम्नलिखित बिन्दुओं परविशेषरूप से ध्यान दिया गया:-

१. पांच प्रतिशत तक शिक्षित बेरोजगारी में कमी लाना तथा सत्तर लाख रोजगार के अवसरों का सृजन करना।

२. अनिपूर्ण श्रमिकों की वास्तविक मजदूरी दरों में वृद्धि लाना।

३. प्राथमिक विद्यालय स्तर पर न्यूनतम शैक्षिक मानकों को विकसित करना तथा उसकी प्रभाविकता को सुनिश्चित करना।

४. उच्च शिक्षा के स्तर पर 10-15 प्रतिशत की वृद्धि करना।

५. शिशु मृत्यु दर में कमी लाना।

६. प्रत्यक्ष तथा अप्रत्यक्ष रूप से सरकारी योजनाओं में महिलाएं अथवा बालिकाओं को लगभग 33 प्रतिशत का लाभ प्रदान करने को सुनिश्चित करना।

बारहवीं पंचवर्षीय योजना (2012.2017) में स्थयित्व के साथ समेकित विकास के सिद्धान्त को स्वीकार किया गया है।

7.5 सारांश (Summary)

सारांश के रूप में सामाजिक समस्याओं को सुलझाने के लिए मानव संसाधनों का विकास करते हुए आर्थिक प्रगति की गति को और अधिक तेज करना तथा इससे होने वाले लाभों को आम जनता में न्यायपूर्ण ढंग से बांटना आवश्यक समझा गया। सामाजिक नीति एक अध्ययन की प्रक्रिया के रूप में भारतीय संविधान एवं पंचवर्षीय योजनाओं से निर्देशित होती है जिससे कि मानव कल्याण को प्रेरित करने से सम्बन्धित जीवन की आवश्यक दशाओं का निर्माण करने बनाए रखने व परिवर्तन लाने की दिशा-निर्देश की ओर कार्य किया जा सके है।

7.6 अभ्यासार्थ प्रश्न (Question for Practice)

(1) सामाजिक नीति एवं भारतीय संविधान से आप क्या समझते हैं?

(2) भारतीय संविधान के महत्व पर प्रकाश डालिए।

(3) सामाजिक नीति एवं भारतीय संविधान अन्त्रसम्बन्ध स्थापित कीजिए।

(4) पंचवर्षीय योजना से आप क्या समझते हैं?

(5) पंचवर्षीय योजना एवं सामाजिक नीति के महत्व पर प्रकाश डालिए।

(6) पंचवर्षीय योजना में सामाजिक नीति के योगदान की चर्चा कीजिए।

7.7 सन्दर्भ पुस्तकें (referfence Books)

1. Martin, R.k., Social Policy, Random House, New York, 1970.
2. Singh, Tarlok, Social Policy, Encyclopaedia of Social Work in India, Vol II- Planning commission, GOI, New Delhi, 1968.
3. Singh, S., Mishra, P.k. D.k.and Singh, A.k. N.k.Bharat mein Samajik Niti, Niyojan Evam Vikas, Deva Publications, Lucknow, 2006.
4. Bhartiya, A.k. K.k. and Singh, D.k. K.k. Social Policy in India, NRBC, Lucknow, 2009.
5. Alock, P.k. Social Policy in Bretain, Mcmillan, New York, 2003.
6. Adams, R.k. Social Policy for Social Work, Palgrave, New York.
7. Äake, R.k. F.k. The Principles of Social Policy, Palgrave, New York
8. अवस्थी, अमरेश्वर एवं श्रीराम महेश्वरी, लोक प्रशासन, लक्ष्मीनरायण अग्रवाल पब्लिकेशन, आगरा।
9. सिंह, निर्मल, प्रिन्सिपल ऑफ मैनेजमेन्ट, दीप एण्ड दीप पबिल्केशन, नई दिल्ली।
10. शर्मा एम. एल., केजरीवाल, बी. के. एवं अग्रवाल, अनुपम, प्रबन्धकीय अर्थशास्त्र, साहित्य भवन पब्लिकेशन, आगरा, 2004.
11. अग्निहोत्री इन्द्रा एवं अवस्थी, अरविन्द, आर्थिक सिद्धान्त, आलोक प्रकाशन, लखनऊ, इलाहाबाद 1999।

इकाई-8

भारत में सामाजिक नीतियाँ

इकाई की रूपरेखा

8.0 उद्देश्य (Objectives)

8.1 प्रस्तावना (Preface)

8.2 भूमिका (Introduction)

8.3 भारत में सामाजिक नीति (Social Policy in India)

8.4 सारांश (Summary)

8.5 अभ्यास प्रश्न (Questions for Practice)

8.6 सन्दर्भ पुस्तकें (Reference Books)

8.0 उद्देश्य (Objectives)

प्रस्तुत अध्याय के अध्ययन के पश्चात आप -

1. भारत में बच्चों एवं वृद्धों से सम्बंधित सामाजिक नीति के उद्देश्यों को जान सकेंगे |
2. भारत की बिभिन्न महत्वपूर्ण सामाजिक नीतियो जैसे – स्वस्थ्य नीति , शिक्षा नीति , आवास नीति , जनसंख्या नीति की भूमिका एवं महत्व से परिचित हो जायेंगे ||

8.1 प्रस्तावना (Preface)

सामाजिक नीति सामाजिक संरचना की कमियों को दूर करती है, असंतुलन को रोकती है, तथा असंतुलन वाले क्षेत्र से इसे दूर करने का प्रयास करती है। सामाजिक नीति का मुख्य आधार स्थायी विकास है, जिसके माध्यम से समावेशी विकास के लक्ष्य को प्राप्त करने और सामाजिक पूंजी को सुदृढ़ करने का प्रयास किया जाता है जिससे कि राज्य व राज्य के नागरिक स्वस्थ्य एवं सशक्त हो सके।

8.2 भूमिका (Introduction)

स्वतंत्रता प्राप्ति के पूर्व देश में समाज में अनेक तरह की समस्याएं विद्यमान थीं। इन समस्याओं से निपटने के लिए एक ऐसी नीतियों की आवश्यकता थी जिसके आधार द्वारा इन समस्याओं से छुटकारा पाया जा सके। स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् सामाजिक व्यवस्था को सुदृढ़ बनाने के लिए यह अनुभव किया गया कि गरीबी, बेकारी, शिक्षा, स्वास्थ्य, आवास जैसी अनेक गंभीर सामाजिक समस्यायें उचित विकास न होने के कारण ही हमारे समाज में व्यापक रूप से विद्यमान हैं। सामाजिक समस्याओं को सुलझाने के लिए यह आवश्यक समझा गया कि सामाजिक नीति को उचित रूप से निर्धारित कर लागू किया जाए।

8.3 भारत में सामाजिक नीति (Social Policy in India)

भारत की सामाजिक नीति से अभिप्राय क्रिया के ऐसे व्यक्त मार्ग से है जो भारत में समाज सेवाओं अर्थात् ऐसी सेवाओं जो जनसंख्या के सभी वर्गों के व्यक्तियों के लिए उनके व्यक्तित्व के समुचित विकास के लिए उपयुक्त अवसर उपलब्ध कराने हेतु प्रत्यक्ष रूप से प्रदान की जाती है। सामाजिक नीति व्यक्तियों तथा समुदायों को सशक्त करती है तथा परिवर्तन के लिए प्रेरित करती है। सामाजिक नीति व्यक्तियों तथा समुदायों को सहभागिता के लिए सम्मिलित करती है प्रोत्साहित करती है जिससे सामाजिक लक्ष्यों को प्राप्त किया जा सके। सामाजिक नीति न्याय पर आधारित होती है जिसका उद्देश्य अनुकम्पा तथा संतुष्टि के द्वारा स्थानीय समुदायों तथा वाह्य संसार को सुदृढ़ बनाना होता है।

8.3.1 राष्ट्रीय बाल नीति

बाल विकास का मुख्य लक्ष्य सभी बच्चों का शारीरिक, मानसिक, संवेगात्मक एवं सामाजिक विकास करना है ताकि वे अपनी समस्याओं एवं कठिनाईयों का समाधान करते हुए परिवार, पड़ोस, समुदाय एवं अन्तिम रूप से समाज के साथ समायोजन की स्थिति में आ सके तथा एक पूर्ण एवं विकसित जीवन बिता सके।

भारत में राष्ट्रीय बाल नीति 22 अगस्त, सन् 1974 को स्वीकार की गई। जिसमें यह प्रावधान किया गया कि राज्य का यह उत्तरदायित्व होगा कि जन्म से पूर्व तथा पश्चात् में बच्चों के विकास के लिए सभी प्रकार की पर्याप्त सेवाएं प्रदान करेगा।

राष्ट्रीय बाल नीति, 2001 में बाल विकास से सम्बन्धित उद्देश्यों की प्राप्ति हेतु निम्नलिखित उपायो को स्पष्ट किया गया है। जो कि निम्नवत् है:-

1. जीने का अधिकार
2. स्वास्थ्य का अधिकार
3. पोषण का अधिकार
4. का अधिकार
5. खेलने और आनन्द प्राप्त करने का अधिकार
6. शिक्षा का अधिकार
7. आर्थिक शोषण से संरक्षण प्रदान करने का अधिकार
8. समानता का अधिकार

8.3.2 वृद्ध व्यक्तियों के लिए राष्ट्रीय नीति, 1999

व्यक्ति की वृद्धावस्था का अर्थ बूढ़े हो जाने की अवस्था या आयु है जिसमें व्यक्ति की शारीरिक शक्ति एवं मानसिक सतर्कता में ह्रास होता है। सामान्यतया, इस अवस्था के लिए आयु के मानदण्ड का प्रयोग किया जाता है तो आमतौर पर 60 वर्ष मानी जाती है। यद्यपि आयु संबंधी मानदण्ड का निर्णय स्थानीय प्रशासन पर निर्भर करता है, परन्तु सामाजिक दृष्टि से वृद्धावस्था वह अवस्था है जिसमें व्यक्ति अपना सक्रिय जीवन छोड़ चुका होता है, कार्य अथवा रोजगार छोड़ चुका होता है तथा बढ़ती हुई आयु के कारण अशक्ति का अनुभव होता है और परिवर्तित परिस्थितियों में मान्यताओं के ह्रास का भी अनुभव करता है।

अक्टूबर 1999 में सरकार के द्वारा वृद्ध व्यक्तियों के लिए राष्ट्रीय नीति की घोषणा की गयी तथा संयुक्त राष्ट्र के द्वारा इस वर्ष को अंतर्राष्ट्रीय वर्ष के रूप मे घोषित किया गया। भारत सरकार के द्वारा वर्ष 2000 को वृद्ध व्यक्तियों का राष्ट्रीय वर्ष घोषित किया गया। इस नीति के अन्तर्गतविशेषरूप से कमजोर वृद्ध व्यक्तियों की श्रेणी के अन्तर्गत विधवाओं, महिलाओं, निर्धनों, ग्रामीण क्षेत्रों में रहने वाले लोगों तथा अंपग और मानसिक रूप से विकसित लोगों पर बल दिया गया। राष्ट्रीय नीति का मुख्य उद्देश्य वरिष्ठ नागरिकों को उद्देश्यपूर्ण तथा सम्मानजनक जीवन जीने के अवसर उपलब्ध कराना है। इस नीति में वित्तीय सुरक्षा, स्वास्थ्य देखभाल तथा पोश ण, आवास, कल्याण, मूलभूत सुविधाओं, शोध तथा प्रशिक्षण इत्यादि विशिष्टविशेषताओं पर बल दिया गया है।

8.3.3 स्वास्थ्य नीति

स्वास्थ्य के सन्दर्भ में भारत में स्वतंत्रता प्राप्ति से पूर्व ही सोचना प्रारम्भ हो गया था। स्वास्थ्य से सम्बन्धित किए गए विभिन्न प्रयासो का विवरण निम्नवत् है:-

भोर समिति, 1946

भारत में स्वतंत्रता के पूर्व स्वास्थ्य सर्वेक्षण एवं विकास समिति का गठन सर जोसेफ भोर की अध्यक्षता में शारीरिक एवं मानसिक स्वास्थ्य के विविध पहलुओं का सर्वेक्षण कर इनके विकास के लिए उपयुक्त सुझाव देने हेतु किया गया था। 1946 में इस समिति द्वारा रिपोर्ट प्रस्तुत की गयी जिसमें निम्नलिखित प्रमुख संस्तुतियां की गयी:-

1. चिकित्सा एवं स्वास्थ्य का एकीकरण किया जाय, और प्रत्येक भारतवासी को स्वास्थ्य सेवा उपलब्ध कराने की व्यवस्था की जाय।
2. ग्रामीण क्षेत्रों में चिकित्सा एवं स्वास्थ्य सेवाओं को प्राथमिकता प्रदान की जाय।
3. उपयुक्त आवास, शुद्ध जल और स्वच्छ वातावरण की समुचित व्यवस्था की जाय।
4. रोग निवारण एवं उन्मूलन कार्य को सर्वाधिक प्राथमिकता प्रदान की जाय।
5. स्वास्थ्य सम्बन्धी सभी समाज सेवाओं का यथोचित विकास किया जाय। मातृ एवं शिशु कल्याण, परिवार नियोजन एवं पोषाहार, उचित रोजगार, बेकारी निराकरण, अधिकाधिक कृषि एवं औद्योगिक उत्पादन तथा संचार व्यवस्था का प्रबन्ध किया जाय।
6. समुचित स्वास्थ्य शिक्षा दी जाय और स्वास्थ्य के प्रति जन-चेतना उत्पन्न की जाय
7. चिकित्सकों एवं अन्य सभी सहयोगी कर्मचारियों को एकीकृत स्वास्थ्य विज्ञान का बोध कराया जाय।
8. प्रस्तावित अल्पकालीन एवं दीर्घकालीन योजनाओं के अनुरूप स्वास्थ सेवाओं का विस्तार किया जाय।

मुदालियर समिति, 1959

1959 में डा. लक्ष्मण स्वामी मुदालियर की अध्यक्षता में एक कमेटी नियुक्ति की गयी जिसे भोर कमेटी की संस्तुतियों के आधार पर बनायी गयी योजनाओं के कार्यान्वयन का मूल्यंकन करने, व्यावहारिक कठिनाइयों का निरूपण करने और संस्तुतिया देने का कार्य सौंपा गया। यह समिति इस निष्कर्ष पर पहुँची कि भोर समिति की

संस्तुतिया इसलिये कार्यान्वित नहीं की जा सकी क्योंकि ये आदर्शवाद पर आधारित थी। मुदालियर समिति ने यह संस्तुति की कि प्रचलित नगरीय स्वास्थ्य शिक्षा व्यवस्था का विस्तार किया जाय, विशेषीकृत चिकित्सा की व्यवस्था की जाय तथा संक्रामक रोगों की रोकथाम के लिए जन अभियान चलाया जाय।

स्वास्थ्य सर्वेक्षण तथा नियोजन समिति, 1963

1963 में भारत सरकार ने एक स्वास्थ्य सर्वेक्षण तथा नियोजन समिति का गठन किया जिसने यह संस्कृति की कि ग्रमीण अंचलों में बहुउछेश्यीय महिला एवं पुरुष कार्यकत्र्ताओं द्वारा एकीकृत द्वारा एकीकृत स्वास्थ्य एवं परिवार नियोजन सेवायें प्रदान की जाये । 1972 में भारत सरकार ने बहुउछेश्यीय कार्यत्र्ताओं के सम्बन्ध में एक समिति गठित की जिसकी संस्तुतिया भी वैसी ही थी, जैसी कि स्वास्थ्य सर्वेक्षण तथा नियोजन समिति की।

भारत सकार ने 1972 में ही एक व्यापक योजना (Master Plan) तैयार की जिसमें ग्रमीण एवं सुदूर अंचलों के चिकित्सकों को अधिक पुरस्कार देने एवं सचल चिकित्सालय चलाये जाने का प्रावधान किया गया। 1977 में नयी स्वास्थ्य योजना लागू की गयी जिसके अधीन ग्रमीण स्वास्थ्य कार्य-कत्र्ताओं पर बल दिया गया तथा उसी समुदाय के चिकित्सक (Barefoot Doctor) की नियुक्ति का प्रावधान किया गया। मार्च 1977 में एक नया कार्यक्रम प्रारम्भ किया गया जो गावं-स्तर पर सामुदायिक स्वास्थ्य कार्यकर्ता द्वारा चलाया जाना था। यह कार्यक्रम जन स्वास्थ्य जन हाथ में (Barefoot Doctor) की नियुक्ति का प्रावधान किया गया। मार्च 1977 में एक नया कार्यक्रम प्रारम्भ किया गया जो गांव-स्तर पर सामुदायिक स्वास्थ्य कार्यकर्ता द्वारा चलाया जाना था। यह कार्यक्रम जन स्वास्थ्य जन हाथ में के नारे पर आधारित था। सामुदायिक स्वास्थ्य कार्यकर्ता योजना का उद्घाटन 2 अक्टूबर 1977 को हुआ जिसके अधीन समुदाय से ही किसी व्यक्ति को उचित प्रशिक्षण देकर समुदाय में स्वास्थ्य के लिए नियुक्त कर दिया गया।

अल्मा आटा घोषणा , 1978

1978 में प्राथमिक स्वास्थ्य के सम्बन्ध में संयुक्त राष्ट्र संघ द्वारा अल्मा आटा घोषणा की गयी जिसे भारत सहित अधिकांश राष्ट्रों ने स्वीकार किया। इस घोषणा के अनुसार, 'प्रायोगिक वैज्ञानिक दृष्टि से उपयुक्त एवं सामाजिक दृष्टि से स्वीकार ढंगों एवं प्रौद्योगिकी पर आधारित, उनकी पूर्ण सहभागिता के माध्यम से समुदाय के व्यक्तियों एवं परिवारों की पहुंच के अन्दर सार्वभौमिक रूप से लायी गयी तथा ऐसी लागत जिसे आत्मनिर्भरता एवं आत्मनिर्णय की इच्छा से अपने विकास के प्रत्येक स्तर पर समुदाय एवं राष्ट्र उन्हें चलाते रहने में समर्थ हो सकें, पर आधारित अनिवार्य स्वास्थ्य सेवा आयोजित किये जाने की बात की गयी।

इस घोषणा के भारत द्वारा स्वीकार किये जाने के परिणामस्वरूप प्राथमिक स्वास्थ्य सम्बन्धी कार्य सामाजिक आर्थिक विकास का एक अंग बन गया, जीवन के सभी क्षेत्रों से इसका घनिष्ठ सम्बन्ध स्थापित हो गया और सभी लोगों के लिए स्वास्थ्य सेवाओं को 2000 तक प्रदान करने का लक्ष्य रखा गया।

1980 में भारत सरकार ने मानसिक स्वास्थ्य सम्बन्धी एकविशेषज्ञ समूह का गठन किया जिसने मानसिक स्वास्थ्य कार्यक्रम को चलाने का प्रस्ताव रखा। 1982 में स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण केन्द्रीय परिषदने एक यह संस्तुति की कि मानसिक स्वास्थ्य को सम्पूर्ण कार्यक्रम का एक अंग बनाया जाय इसे स्वास्थ्य, शिक्षा एवं समाज कल्याण सभी की राष्ट्रीय नीतियों में सम्मिलित किया जाय, और इसी संस्तुति के परिणामस्वरूप 1982 में भारत सरकार द्वारा राष्ट्रीय मानसिक स्वास्थ्य कार्यक्रम किया गया।

1982 में ही कुष्ठ निवारण कार्यक्रम प्रारम्भ किया गया। 1985 में सार्वभौमिक टीकाकरण कार्यक्रम प्रारम्भ किया गया जिसका उद्देश्य बाल्यकाल की 6 बड़ी-बड़ी बीमारियों-डिपथीरिया,जमोघा, क्षय, लकवा, खसरा और काली खांसी को रोकना है।

इस नीति को कार्यान्वित करने के लिए एक के बाद दूसरी सभी पंचवर्षीय योजनाओं में स्वास्थ्य के लिए विनियोजन किया गया जो पहली पंचवर्षीय योजना के 65.2 करोड़ रूपये से बढ़कर सातवीं पंचवर्षीय योजना में 3392 करोड़ रूपया हो गया।

राष्ट्रीय स्वास्थ्य नीति, 2002

राष्ट्रीय स्वास्थ्य नीति, 2002 का मुख्य उद्देश्य राष्ट्र के सामान्य लोगों को स्वास्थ्य के मानकों को लागू करना तथा स्वस्थ्य जीवन के अवसर प्रदान करना है। इस नीति का मुख्य दृष्टिकोण जन स्वास्थ्य व्यवस्था को विकेन्द्रीकृत करते हुए नई अधः संरचना की स्थापना करना तथा स्वास्थ्य की सुविधाओं को सुविधाजनक बनाना है। इन सुविधाओं को लागू करने तथा लोगों तक उपलब्ध कराने के लिए निजी क्षेत्रों के योगदान को स्वीकार किया गया है।

8.3.4 जनसंख्या नीति

भारत में निर्धनता का प्रमुख कारण जनसंख्या वृद्धि की तीव्र दर है। विभिन्न जनगणना प्रतिवेदनों में यह कहा गया है कि जनसंख्या में तीव्र वृद्धि के कारण समुचित आर्थिक विकास सम्भव नहीं हो पा रहा है।

अनेक मनीशियों ने तीव्र जनसंख्या वृद्धि को अंग्रेजी सरकार की दोश पूर्ण आर्थिक नीति का परिणाम बताते हुए यह विचार प्रस्तुत किया कि आर्थिक तथा औद्योगिक प्रगति के बिना जनसंख्या वृद्धि को रोका नहीं जा सकता, किन्तु कालान्तर में इन विद्धानों का यह तर्क सत्य की कसौटी पर खरा नहीं उतरा क्योंकि आर्थिक तथा औद्योगिक प्रगति के बावजूद जनसंख्या वृद्धि को नियंत्रित नहीं किया जा सका। 1938में भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस ने जनसंख्या वृद्धि को नियंत्रण विषय को राष्ट्रीय नियोजन समिति के अध्ययन का एक प्रमुख अंग बनाया। इस समस्या का गंभीरतापूर्वक अध्ययन करने हेतु एक उपसमिति बनाई गई। 1947 में इस उपसमिति ने अपना प्रतिवेदन प्रस्तुत किया, और इसे भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस ने इसी साल प्रकाशित कर दिया। पहली पंचवर्षीय योजना में जनसंख्या की वृद्धि के विषय में कहा गया है कि आर्थिक संसाधनों पर जनसंख्या का दबाव पहले से ही इतना अधिक है कि जब तक जन्मदर को कम नहीं किया जायेगा तब तक आर्थिक वृद्धि नहीं हो सकती है। अतः परिवार नियोजन का कार्यक्रम प्रारम्भ किया गया तथा इसे जनस्वास्थ्य कार्यक्रम का एक महत्वपूर्ण अंग बनाया गया।

दूसरी पंचवर्षीय योजना के प्रारम्भ में ही यह स्पष्ट कर दिया गया कि सामाजिक आर्थिक विकास के लिए जनसंख्या वृद्धि पर रोक लगाना अत्यावश्यक है तीसरी पंचवर्षीय योजना में भी इसी बात की पुनरावृत्ति की गयी। चोथीपंचवर्षीय योजना की प्रस्तावना में यह स्पष्ट किया गया कि भारतीय जीवन में समानता तथा महत्ता तभी प्राप्त की जा सकती है जब आर्थिक वृद्धि की दर अधिक तथा जनसंख्या वृद्धि की दर कम हो। विकास के लिए परिवार को सीमित करना परमावश्यक है।

राष्ट्रीय जनसंख्या नीति, 1976

1976 के मध्य में संसद में राष्ट्रीय जनसंख्या नीति घोषित की गई। इसमें यह स्पष्ट किया गया कि क्योंकि जनसंख्या वृद्धि का कारण निर्धनता है, अतः निर्धनता दूर करने का अत्यधिक प्रयास किया जाय। इसी उद्देश्य को ध्यान में

रखकर पांचवर पंचवर्षीय योजना में न्यूनतम आवश्यकता कार्यक्रम प्रारम्भ किया गया। इस नीति में यह भी कहा गया कि जन्मदर को कम करने के लिएशिक्षा स्तर में वृद्धि तथा आर्थिक विकास की प्रतीक्षा करना अव्यावहारिक है। यह समस्या इतनी भयंकर है कि सीधे इस समस्या पर चोट करने की आवश्यकता है। इस नीति को परिवार नियोजन हेतु लागू किया गया जिसका परिणाम यह हुआ कि 1977 के चुनावों में सत्ता परिवर्तन हो गया।

1977 में सत्ता में आयी सरकार ने परिवार नियोजन के स्थान पर परिवार कल्याण की अवधारणा को स्वीकार किया तथा सम्बन्धित मन्त्रालय का नाम बदलकर स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण रखा। इस सरकार ने नयी जनसंख्या नीति की घोषणा की। यह कहा गया कि परिवार नियोजन कार्य को कल्याण के दर्शन के आधार पर समझा जाय तथा इसे ऐच्छिक कार्यक्रम बनाया जाय।

जनता सरकार अधिक समय तक सत्ता में नहीं रह पायी। 1980 में कांग्रेस पुनः सत्ता में आई परन्तु अतीत के कटु अनुभवों के कारण इसने भी जनसंख्या नियंत्रण पर अधिक बल नहीं दिया। 1978 में जनता सरकार ने जनसंख्या नीति पर एक अध्ययन दल बनाया था। जिसने यह तर्कपूर्ण विचार रखा कि न्यूनतम आवश्यकता कार्यक्रम, एकीकृत ग्राम्य विकास, प्रौढ़ शिक्षा और अन्य कल्याणकारी कार्यक्रमों को अधिक अच्छे ढंग से बनाया जाना चाहिए ताकि छोटे परिवार सिद्धान्त की सामान्य स्वीकृति सम्भव हो सके। यह विचार भी व्यक्त किया गया कि परिवार नियोजन शब्द का त्याग लाभकारी सिद्ध नहीं हुआ है कि इसे विकास की योजना में यथोचित स्थान मिलना ही चाहिए।

इस प्रकार भारतीय नियोजन में परिवार कल्याण कार्यक्रम परविशेष बल दिया गया क्योंकि इसका अन्य क्षेत्रों के विकास से सीधा सम्बन्ध है। प्रथम पंचवर्षीय योजना में परिवार नियोजन हेतु 65 करोड़ रूपया निर्धारित किया गया था। इसे सातवीं पंचवर्षीय योजना में बढ़ाकर 32560 करोड़ रूपये कर दिया गया। ऐसा अनुमान लगाया जाता है कि परिवार नियोजन के परिणामस्वरूप 1060 करोड़ बच्चे जन्म नहीं ले पाये। अभी भी जनसंख्या वृद्धि दर 2 प्रतिशत है। इसका कारण जन्मदर में धीरे-धीरे कमी होनातथा मृत्युदर का शीघ्रता से कम होना है। भारत के सामने यह बड़ी समस्या बन गयी कि दोनों में किस प्रकार सामंजस्य किया जाय जिससे जनसंख्या वृद्धि को रोका जा सके। 1984-1985 तक परिवार नियोजन को अपनाने वाले 1644 करोड़ लोग थे जिनकी संख्या 1988-89 में बढ़कर 2411 करोड़ हो गयी। राष्ट्रीय स्वास्थ्य नीति 1983 में कहा गया है कि 2000 तक प्रजनन दर को 1 तक अवश्य लाना होगा जिसके लिए जन्मदर को 21 प्रति हजार तथा मृत्युदर को 9 प्रति हजार तक लाना होगा। 2003-2004 के दौरान परिवार योजना के साधनों को अपनाने वालों की संख्या में काफी वृद्धि हुई है।

राष्ट्रीय जनसंख्या नीति, 2000

15 फरवरी को राष्ट्रीय जनसंख्या नीति 2000 की घोषणा की गयी जिसका उद्देश्य दो बच्चों के मानक को प्रोत्साहित करना था ताकि सन् 2046 तक जनसंख्या को स्थिर किया जा सके।

लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए निम्नलिखित उपायों का उल्लेख किया गया हैः-

1. प्रति 1000 जीवित जन्में बच्चों के लिए शिशु मृत्युदर 30 से कम करना।
2. मातृ मृत्युदर को 100000 जीवित जन्मों के लिए 100 से भी कम करना।
3. सर्वव्यापक प्रतिरक्षण।
4. 80 प्रतिशत प्रसवों के लिए प्रशिक्षित स्टाफ के साथ नियमित डिस्पेन्सरियों अस्पतालों और चिकित्सा संसाधनों का प्रयोग करना।

5. एड्स के बारे में सूचना उपलब्ध कराना।
6. सुरक्षित गर्भपात की सुविधा को बढ़ाना।
7. शिशु विवाह प्रतिबन्ध कानून और जन्मपूर्व लिंग निर्धारण तकनीक कानून का कड़ाई से पालन करना।
8. लड़कियों की विवाह आयु को 18 वर्ष से ऊपर उठाना और बेहतर तो यह है कि 20 वर्ष से भी अधिक करना।

8.3.5 पोषण नीति

स्वतंत्रता के पूर्व अधिकांश प्रयत्न अकाल से निपटने तथा गरीबी एवं भुखमरी को दूर करने से सम्बन्धित थे। इस सम्बन्ध में कई आयोग स्थापित किये गये जिन्होंने खाद्यान्नों का अधिक उत्पादन करने तथा पोषण के स्तर के निम्न होने पर चिन्ता व्यक्त की। लेकिन कोई भी स्पष्ट पोषण नीति नहीं बन पायी। विज्ञान की प्रगति ने इस समस्या को वैज्ञानिक दृष्टिकोण प्रस्तुत किया तथा पोषण विज्ञान एवं उसके स्वास्थ्य एवं रोगों के सम्बन्ध को भलीभांति स्पष्ट किया गया। अंग्रेजों की सेना के अधिकारियोंविशेषकर डा0 राबर्ट मैकरिसन का योगदान महत्वपूर्ण है। उन्होंने पोषण अनुसंधान संस्था स्थापित की जो आगे चलकर भारतीय आयुर्विज्ञान शोध परिषदके रूप में परिवर्तित हो गयी। यह अनुभव किया गया कि बीमारी की समस्या, उच्च मृत्युदर तथा स्वास्थ्य के निम्न स्तर का कारण पोषण का निम्न स्तर है। भोर समिति ने भी स्पष्ट संस्तुति की थी कि स्वास्थ्य विभाग को पोषण स्तर को सुधारने तथा ऊँचा उठाने के लिए प्रयास करने चाहिए। मुदालियर समिति ने भी इसी प्रकार की संस्तुति की थी।

महिला एवं बाल विकास विभाग के द्वारा सन् 1993 में राष्ट्रीय पोषण नीति को स्वीकार किया गया। जिसमें यह माना गया कि राष्ट्र के वकिास के लिए पोषण महत्वपूर्ण है। राष्ट्रीय पोषण नीति इस तथ्य को स्वीकार करती है कि पोषण विकास को प्रभावित करता है और विकास पोषण को प्रभावित करता है।

8.3.6 शिक्षा नीति

प्रारम्भ में शिक्षा के उद्देश्यों, माध्यमों, शिक्षण संस्थानों के संगठन और शिक्षा के प्रसार के ढंगों को लेकर पर्याप्त मतभेद था। लेकिन 1835 में गवर्नर जनरल की कार्यकारी सभा के विधि सदस्य लार्ड मैकाले ने एक निर्णायक प्रस्ताव प्रस्तुत किया जिसका एक मुख्य उद्देश्य एक वर्गविशेष को अंग्रेजी के माध्यम से पाश्चात्य शिक्षा देकर एक उद्देश्यविशेष के लिए प्रशिक्षित करना था। तत्कालीन सरकार ने जनसाधारण कीशिक्षा हेतु कोई प्रत्यक्ष उत्तरदायित्व नहीं ग्रहण किया तथा इसे विदेशी मिशनरियों पर छोड़ दिया।

1854 में हाउस ऑफ कामन्स में वुड की अध्यक्षता में एक समिति ने मैकाले की शिक्षा नीति के उद्देश्यों का अनुमोदन करते हुए यह कहा कि इंग्लैण्ड में प्रचलित पद्धति का अनुसरण करते हुए भारत में भी स्तरीकृत विद्यालय एवं विश्वविद्यालय खोले जाय। लेकिन वुड समिति की संस्तुतियां लागू नहीं की जा सकती जिसके परिणाम स्वरूप शिक्षा की प्रगति अत्यन्त धीमी रही।

1984 में भारतीय शिक्षा आयोग ने यह संस्तुति की कि प्राथमिक शिक्षा का उत्तरदायित्व सरकार पर होना चाहिए और इसके लिए यदि आवश्यक हो, वैधानिक प्रावधान किये जाने चाहिए। आयोग ने यह भी कहा कि प्राथमिक शिक्षा स्थानीय लोगों के जीवन एवं आवश्यकताओं से सम्बन्धित होनी चाहिए तथा स्थानीय भाषायें इसका माध्यम होनी चाहिए।

शिक्षा नीति सम्बन्धी संवैधानिक प्रावधान

प्रारम्भ में संविधान के अधीन शिक्षा को अनुसूची 6 के अन्तर्गत राज्य सूची में रखा गया था किन्तु बाद में 1976 में इसे समवर्ती सूची में सम्मिलित कर लिये जाने के पश्चात् अब शिक्षा का आयोजन केन्द्र तथा राज्य सरकार दोनों के अधिकार क्षेत्र में है। संविधान के अनुच्छे 45 में यह व्यवस्था की गयी है कि 10 वर्ष के अन्तर्गत राज्य 14 वर्ष तक की आयु के सभी बच्चों के लिए अनिवार्य एवं निःशुल्क शिक्षा की व्यवस्था कमजोर वर्गों,विशेषकर अनुसूचित जाति व जनजातियों के आर्थिक एवं शैक्षिक हितों की उन्नति के लिएविशेष ध्यान देगा।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति

शिक्षा आयोग की संस्तुतियों के आधार पर 1986 में राष्ट्रीय शिक्षा नीति लागू की गयी जिसकी मुख्यविशेषताएं निम्नलिखित थीं:

1. 14 वर्ष तक के बच्चों के लिए अनिवार्य शिक्षा को लागू करने हेतु कठिन प्रयास करना,
2. क्षेत्रीय भाषाओं का विकास करना और इसके लिए अंग्रेजी तथा हिन्दी के अध्यापन के साथ-साथ एक अन्य आधुनिक भाषा का ज्ञान कराना,
3. क्षेत्रीय असंतुलन को दूर करते हुए समान शैक्षिक अवसर उपलब्ध कराना,
4. कार्य अनुभव एवं राष्ट्रीय सेवा के कार्यक्रमों का विकास करना,
5. वैज्ञानिक शिक्षा एवं शोध को उच्च प्राथमिकता प्रदान करना,
6. कृषि एवं उद्योगों के विकास को शिक्षा में सम्मिलित करना,
7. माध्यमिक स्तर पर पाठ्यक्रम एवं सुविधाओं का विस्तार करना,
8. उच्च शिक्षा के स्तर पर प्रवेश सीमित करना,
9. पत्राचार शिक्षा एवं अंशकालिक शिक्षा का विकास करना, तथा
10. शिक्षा को 10$2$3 की पद्धति पर विकसित करना।

शिक्षा नीति में यह भी कहा गया कि सरकार को शिक्षा पर व्यय अनवरत रूप से बढ़ाना चाहिए ताकि राष्ट्रीय आय 6 प्रतिशत तक पहुंच सके। लेकिन दुर्भाग्यवश यह 4 प्रतिशत से अधिक नहीं बढ़ सका।

नवोदय विद्यालय

नवोदय विद्यालय की योजना के अधीन सातवीं पंचवर्षीय योजना के दौरान देश के प्रत्येक जिले में एक नवोदय विद्यालय स्थापित करने का प्रावधान है। इस दिशा मे 1986-87 से कार्य प्रारम्भ हुआ। देश में 2006 नवोदय विद्यालय स्थापित किये जा चुके थे। ये विद्यालय केन्द्रीय माध्यमिक शिक्षा बोर्ड से सम्बद्ध थे। इनमें कक्षा 6 से 12 तकि की कक्षायें चलाने की व्यवस्था है। इन विद्यालयों में प्रवेश का आधार छात्रों की योग्यता है तथा इनमें प्रवेश परीक्षा के आधार पर होता है। इन विद्यालयों में भोजन, पहनने के कपड़ो, पुस्तको, लेखन सामग्री एवं आवास सुविधा सहित शिक्षा निःशुल्क दी जाती है।

श्यामपट प्रचालन

अनिवार्य प्राथमिक शिक्षा के लक्ष्य की प्राप्ति में सबसे बड़ा व्यवधान विद्यालयों में न्यूनतम आवश्यक भौतिक सुविधाओं का अभाव है। चैथे अखिल भारतीय शैक्षिक सर्वेक्षण के दौरान लगभग 188000 प्राथमिक विद्यालय बिना उपयुक्त सुविधाओं के थे। 192000 से भी अधिक विद्यालयों में चटायी या टाटापट्टी भी नहीं थी।

आपरेशन ब्लैकबार्ड योजना का उद्देश्य प्राथमिक विद्यालयों में न्यूनतम आवश्यक शैक्षिक सुविधाओं की व्यवस्था करना है। आपरेशन शब्द का प्रयोग ही बताता है कि यह योजना अत्यावश्यक है। इसके लक्ष्य स्पष्ट तथा भलीभांति परिभाषित है। सरकार तथा जनता दोनों पूर्व निर्धारित समयावधि में इन लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए कटिबद्ध है।

लड़कियों के लिए निःशुल्क शिक्षा

शैक्षिक दृष्टि से पिछड़े हुए वर्गों की शिक्षा की अधिकाधिक सुविधाएं प्रदान करने की योजना के अन्तर्गत लड़कियों को माध्यमिक स्तर तक निःशुल्क शिक्षा देने की योजना बनाई गई है और योजना पर व्यय होने वाली धनराशि को राज्य एवं केन्द्र शासित प्रदेशों को आवंटित कर दिया गया है।

मुक्त विश्वविद्यालय

शिक्षा का व्यापक स्तर पर प्रचार व प्रसार करने के उद्देश्य से 1985 में इंदिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय की स्थापना की गयी जिसमें 1987 में शैक्षणिक कार्यक्रम आरम्भ कर दिये गये है। यह विश्वविद्यालय प्रबन्ध, दूरस्थ, शिक्षा तथा अन्य विषयों में डिप्लोमा पाठ्यक्रम चला रहा है। मुक्त विश्वविद्यालय प्रवेश योग्यता, प्रवेश आयु, पाठ्यक्रम के चयन, शिक्षण पद्धति, शिक्षण स्थान, परीक्षा प्रणाली इत्यादि की दृष्टि से लचीली, खुली एवं जन तांत्रिक है।

8.3.7 आवास नीति

आवास के क्षेत्र में न केवल आवासीय भवनों की अत्यधिक कमी है अपितु आवास सम्बन्धी सूचनाओं में भी भारी कमियां है। सरकार प्रगतिशील आधर पर प्रत्यक्ष रूप से आवास देने के स्थान पर सामश्र्यदाता की भूमिका अपनाती जा रही है। आवश्यकता है आवास क्षेत्र में ऐसे नीतिगत परिवर्तनों की जिससे निजी एवं सहकारी क्षेत्रों में अधिकाधिक भूमिका स्वीकार करने हेतु प्रोत्साहित किया जा सके इसके लिए वर्तमान विधिक एवं नियामक व्यवस्था में परिवर्तन करना होगा। इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए सरकार ने एक नई आवास एवं अभ्यारण्य नीति स्वीकार की जिसे जुलाई 1998 में मंत्रिमण्डल की स्वीकृति प्राप्त हो चुकी है।

जनसंख्या के सभी वर्गों की आवासीय आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुए निम्न वर्गों की आवासीय आवश्यकताओं परविशेष ध्यान दिया जायेगा। आवासीय सहायता प्रदान करने हेतु निर्धनता रेखा से नीचे जीवन यापन करने वाले व्यक्तियों, अनुसूचित जातियों , जनजातियों, बाधितों, मुक्त बन्धुआ मजदूरों, मलिन बस्तियों के निवासियों तथा महिला प्रमुख परिवारों को प्राथमिकता समूहों के रूप में चिन्हित किया जायेगा।

सरकार एक सुविधादाता के रूप में ऐसे पर्यावरण का निर्माण करेगी जिसमें सभी को समय से उपयुक्त मात्रा में आवश्यक संसाधन उपलब्ध हों जो पर्याप्त गुणवत्ता एवं मानक वाले हों।

आवासीय बाजार के नीचले भाग तथा चयनित अभावग्रस्त समूहों के सन्दर्भ में सरकार के और अधिक प्रत्यक्ष हस्तक्षेप का प्रविधान होगा। निर्धनों के लिए आवास उपलब्ध कराने के कार्य में निजी क्षेत्र को आकर्षित करने हेतु प्रोत्साहनों की घोषणा की जायेगी।

भारत में आवास सम्बन्धी समस्या के समाधान हेतु नगरीय एवं ग्रामीण क्षेत्रों के लिए अलग-अलग विशिष्ट प्रावधान किये गये हैं और एक सामान्य नीति की घोषणा भी की गयी है।

नगरीय आवास

नगरों में मलिन बस्तियों में आवास की समस्या प्रमुख है। छठी पंचवर्षीय योजना में अनुमान लगाया गया है कि 20 प्रतिशत नगरीय जनसंख्या मलिन बस्तियों में रहती है। 1985 में यह अनुमान लगाया गया था कि मलिन बस्तियों के 3.31 करोड़ निवासियों के लिए आवास समस्या गंभीर रूप धारण किये हुए है। इनमें से केवल 0.68 करोड़ लोगों को ही सेवाएं प्रदान की जा सकी हैं। योजनाबद्ध विकास प्रारम्भ होने के बाद भारत में सर्वप्रथम 1956 में मलिन बस्तियों की सफाई एवं सुधार योजना बनाई गई। इस योजना के अधीन इस प्रकार की सेवायें प्रदान का उद्देश्य रखा गयाः

- मलिन बस्तियों में उन लोगों के लिए जिनकी आय 350 रूपये से कम है, आवास की व्यवस्था करना,
- पर्यावरणात्मक दशाओं में सुधार करना, तथा
- रात्रि शरणालय बनाना

आवास नीति, 1989

12 मई, 1989 को संसद में राष्ट्रीय आवास नीति पेश की गयी जिसके अन्तर्गत निम्नलिखित प्रावधान है:-

1. गृह निर्माण के कार्य को बढ़ाकर भवनों की कमी को समाप्त किया जायेगा ताकि भवन निर्माण की गति जनसंख्या वृद्धि के साथ बढ़ती रहे। गृह निर्माण लागत पर 35 प्रतिशत तक की वृद्धि की जायेगी।
2. 2000 तक सभी को भवन उपलब्ध कराने का लक्ष्य है जिस पर 145000 करोड़ रूपये की लागत आयेगी।
3. राष्ट्रीय भवन बैंक की स्थापना की जायेगी ताकि इच्छुक व्यक्ति उसमें पूंजी निवेश कर सके और भवन निर्माण या मरम्मत के लिए ऋण ले सकें।
4. न्यूनतम गृह सम्बन्धी आवश्यकता की पूर्ति, ग्रामीण भवन निर्माण योजनाएं, अनौपचारिक क्षेत्र में गृह निर्माण कार्य, झुग्गी, झोपड़ियों में भवन निर्माण कार्य, पर्यावरण में सुधार इत्यादि प्रारम्भ किये जायेंगे।
5. विधि के अधीन प्रदान किये जाने वाले मदों पर करों से छूट दी जायेगी तथा गृह निर्माण हेतु बचत को प्रोत्साहित किया जायेगा।
6. गृह निर्माण हेतु सहकारिता का विकास किया जायेगा।
7. झुग्गी झोपड़ियों का उत्थान किया जायेगा तथा उनमें रहने वाले लोगों को भवन निर्माण हेतु बचत करने के लिए प्रेरित किया जायेगा।

राष्ट्रीय आवास नीति, 1998

राष्ट्रीय आवास नीति 1998 का मुख्य लक्ष्य लोगों की आवश्यकता के अनुसार सभी लोगों को आवास उपलब्ध कराना है। जिससे कि वे एक बेहतर जीवन जी सके। इस नीति में निम्नलिखित उद्देश्यों को निर्धारित किया गया है:-

1. न्यूनतम लागत पर आवासों का निर्माण करनाविशेषकर कमजोर वर्ग और निर्धन लोगों को गुणवत्तायुक्त आवास उपलब्ध कराना।
2. आवास की उपलब्धता के साथ-साथ उससे सम्बन्धित अन्य सेवाओं को प्राथमिकता के आधार पर सुनिश्चित करना तथा आवश्यक अधः संरचना का निर्माण करना।
3. भूमि, वित्त तथा प्रौद्योगिकी के बीच आने वाली वैधानिक तथा प्रशासकीय बाधाओं को दूर करने का प्रयास करना।
4. निजी तथा सरकारी सहभागिता पर बल देना तथा सहकारी क्षेत्रों को प्रेरित करना जिससे कि सुलभ आवासों का निर्माण किया जा सके।
5. आवास के क्षेत्रों में उपयुक्त प्रौद्योगिकी का प्रयोग करते हुए कार्यकुशलता, उत्पादकता, ऊर्जा क्षमताओं तथा गुणवत्ता में वृद्धि करना।

दसवीं योजना के आरम्भ के समय अस्सी लाख नवासी हजार इकाइयों की कमी होने का अनुमान लगाया है। हलांकि यह एक चिंताजनक संख्या है, लेकिन इसमें संयुक्त परिवारों की भीड़-भाड़ सम्बन्धी आवश्यकताएं काम में न आ सकने वाले पुराने और प्रतिस्थापित किए जाने वाले मकान और सुधार किये जाने वाले कच्चे मकान भी शामिल हैं। दसवीं योजना में कुल मिलाकर 2 करोड़ 24 लाख 40 हजार मिलियन मकानों की आवश्यकता का अनुमान लगाया गया है। इसलिए दसवीं योजना की अवधि में 20 लाख आवास स्कीम को जारी रखने का पर्याप्त कारण है, क्योंकि इससे शहरी गरीबों के लिए लगभग 30 लाख 50 हजार मकानों की व्यवस्था हो सकेगी।

8.4 सारांश (Summary)

सारांश के रूप में इस इकाई में भारत में सामाजिक नीति के रूप में यथा शिक्षा, स्वास्थ्य, आवास, आय इत्यादि से सम्बन्धित नीतियो का उल्लेख किया गया है। जिसका उद्देश्य लोगो के जीवन में वृद्धि करना और मानव कल्याण को प्रेरित करने से सम्बन्धित जीवन की आवश्यक दशाओं का निर्माण करने से है।

8.5 अभ्यासार्थ प्रश्न (Questions for practice)

(1) भारत में सामाजिक नीति से आप क्या समझते हैं?

(2) भारत में सामाजिक नीति के महत्व पर प्रकाश डालिए।

(3) स्वास्थ्य नीति के उपायों का वर्णन कीजिए।

(4) शिक्षा नीति कीविशेषताओं पर प्रकाश डालिए।

(5) निम्नलिखित पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए।

(अ) राष्ट्रीय आवास नीति, 1998

(ब) श्यामपट प्रचालन

(स) पोषण नीति

(द) मुदालियर समिति, 1959

8.6 सन्दर्भ पुस्तकें (reference Books)

1. Martin, R.k, Social Policy, Random House, New York, 1970.
2. Singh, Tarlok, Social Policy, Encyclopaedia of Social Work in India, Vol Ii Planning commission, GOI, New Delhi, 1968.
3. Singh, S., Mishra, P.k, D.k, and Singh, A.k, N.k, Bharat mein Samajik Niti, Niyojan Evam Vikas, Deva Publications, Lucknow, 2006.
4. Bhartiya, A.k,K .k. Introduction to Social Policy, NRBC, Lucknow, 2009.
5. Alock, P.k, Social Policy in Bretain, Mcmillan, New York, 2003.
6. Adams, R.k, Social Policy for Social Work, Palgrave, New York.
7. äake, R.k, F.k, The Principles of Social Policy, Palgrave, New York
8. साइमन, एच.ए. (1946), द प्रोवर्ब ऑफ एडमिनिस्ट्रेसन, पब्लिक एडमिनिस्ट्रेसन रिव्यू: विन्टर।
9. ड्रकर, पी.एफ (1975), मैनेजमेन्ट: टास्क, रिसपान्सबिलिटिज, प्रैक्टिस, बाम्बेः एलाइड पब्लिर्स।
10. टेलर, एफ.डब्ल्यू, (1911) द प्रिसिंपल ऑफ साइंसटिफिक मैनेजमेन्ट, न्यू यार्क: हार्पर ब्रदर्स।
11. योडर, डी. (1959) पर्सनेल प्रिंसिपलस् एण्ड पालिसिस, एन्गलीवुड क्लिफस् एन.जे.: प्रेन्टिस हॉल ।
12. ब्रीच, इ.एफ.एल. (1967), मैनेजमेन्ट - इटस् नेचर एण्ड सिग्निफिकेन्स्, लन्दन: पिटमैन पेपरबैक्स।
13. अवस्थी, अमरेश्वर एवं श्रीराम महेश्वरी, लोक प्रशासन, लक्ष्मीनरायण अग्रवाल पब्लिकेशन, आगरा।
14. सिंह, निर्मल, प्रिन्सिपल ऑफ मैनेजमेन्ट, दीप एण्ड दीप पबिल्केशन, नई दिल्ली।
15. शर्मा एम. एल., केजरीवाल, बी. के. एवं अग्रवाल, अनुपम, प्रबन्धकीय अर्थशास्त्र, साहित्य भवन पब्लिकेशन, आगरा, 2004.
16. अग्निहोत्री इन्द्रा एवं अवस्थी, अरविन्द, आर्थिक सिद्धान्त, आलोक प्रकाशन, लखनऊ, इलाहाबाद 1999।

इकाई-9

सामाजिक नियोजन

इकाई की रूपरेखा

9.0 उद्देश्य (Objectives)

9.1 प्रस्तावना (Preface)

9.2 भूमिका (Introduction)

9.3 सामाजिक नियोजन की अवधारणा (Concept of Social Planning)

9.4 सामाजिक नियोजन की प्रमुख विशेषतायें (Characteristics of Social Planning)

9.5 संविधान में वर्णित सामाजिक नियोजन के उद्देश्य (Objectives of Social planning described in Constitution)

9.6 सामाजिक नियोजन के लक्ष्य (Goal of Social Planning)

9.7 सामाजिक नियोजन के प्रकार्य (Functions of Social planning)

9.8 सामाजिक नियोजन के सिद्धान्त (Theories of Social Planning)

9.9 सामाजिक नियोजन के प्रकार (Types of Social Planning)

9.10 सामाजिक नियोजन के प्रभावपूर्ण कारक (Effective factors of Social Planning)

9.11 सफल सामाजिक नियोजन की आवश्यक शर्तें (Required Conditions of Success Social Planning)

9.12 सफल नियोजन हेतु महत्वपूर्ण तत्व (Important Component for Success Social Planning)

9.13 सारांश (Summary)

9.14 अभ्यासार्थ प्रश्न (Questions for practice)

9.15 सन्दर्भ पुस्तकें (Reference books)

9.0 उद्देश्य (Onjectives)

प्रस्तुत अध्याय के अध्ययन के पश्चात आप –

1. सामाजिक नियोजन की अवधारणा, अर्थ एवं विशेषताओं को जान सकेंगे |
2. सामाजिक नियोजन की उद्देश्य एवं प्रक्रिया से अवगत हो जायेंगे|
3. सामाजिक नियोजन के प्रकार्य , सिद्धांत तथा प्रकार को समझ सकेंगे |

9.1 प्रस्तावना (Preface)

नियोजन एक बौद्धिक प्रक्रिया है जो कि पूर्व निर्धारित होती है। नियोजन की आवश्यकता प्रत्येक समय में रही है, क्योंकि बिना नियोजन के विकास के लक्ष्य को प्राप्त करना असम्भव सा प्रतीत होता है। नियोजन से तात्पर्य एक ऐसी व्यवस्था से है जिसके माध्यम से लक्ष्य को पूरा किया जा सके और कार्यक्रमों की रूपरेखा का निर्माण समस्या को दृष्टिगत करते हुए किया जा सके। सामाजिक समस्याओं के निराकरण के लिए सामाजिक नियोजन आवश्यक हैं।

9.2 भूमिका (Introduction)

आधुनिक समाज में सामाजिक नियोजन शब्द का प्रयोग अत्यधिक होने लगा है। समाज विज्ञानों में यह अध्ययन का प्रमुख विषय बनता जा रहा है, क्योंकि व्यक्ति संतुलित सामाजिक-आर्थिक व्यवस्था चाहता है तथा उपलब्ध साधनों का सर्वोत्तम उपयोग करना चाहता है ताकि उसे सुख एवं सन्तोश प्राप्त हो सके, इसलिए वह अपने जीवन के विविध क्षेत्रों में योजनायें बनाने का प्रयास करता है।

9.3 सामाजिक नियोजन की अवधारणा (Concept of Social Planning)

नियोजन जीवन का एक महत्वपूर्ण अंग है। ऐसा कोई व्यक्ति अथवा समाज नहीं है जो योजना न बनाता हो। व्यक्तिगत आवश्यकताओं की संतुष्टि तथा सामाजिक संतुलन बनाये रखने के लिए नियोजन व्यवहार के आवश्यक अंगभूत के रूप में कार्य करता है। निम्नलिखित कारणों से नियोजन महत्वपूर्ण है:

1. नियोजित व्यवस्था में लक्ष्यों तथा संसाधनों में पारस्परिक सम्बन्ध स्थापित हो पाता है तथा कार्यक्रम सुचारू रूप से सम्पन्न हो पाते हैं।
2. नियोजित व्यवस्था में प्राकृतिक संसाधनों से समाज के सभी वर्गों को अधिक लाभ प्राप्त होता है। अनियोजित व्यवस्था में पूंजीपति वर्ग प्राकृतिक संसाधनों पर एकाधिकार स्थापित करते हुए इनका अधिकाधिक उपयोग अपने व्यक्तिगत लाभ के लिए करता है। यद्यपि इससे उत्पादन में वृद्धि अवश्य होती है किन्तु उत्पादन से होने वाले लाभों में अन्य वर्गों को साम्यपूर्ण भाग नहीं मिला पाता।
3. नियोजन द्वारा माँग तथा पूर्ति, आवश्यकता तथा संसाधनों में समन्वय स्थापित किया जाता है। अनियोजित स्थिति में बेकारी तथा मूल्यों में वृद्धि होती है तथा निर्धन वर्ग का शोश ण होता है।
4. सामाजिक विकास के लिए लाभों एवं सेवाओं का न्यायपूर्ण वितरण आवश्यक होता है। अनियोजित स्थिति में धनी वर्ग को अधिक लाभ एवं सेवायें प्राप्त होती हैं जिसके परिणामस्वरूप वे और अधिक धनी बनते जाते हैं तथा निर्धन वर्ग दिन-प्रतिदिन और अधिक निर्धन होता चला जाता है।
5. नियोजित व्यवस्था में इस प्रकार की कार्य पद्धतियाँ तथा नियमावलियाँ बनायी जाती हैं। जिनसे निर्बल वर्गों का शोश ण सम्भव नहीं हो पाता।

6. नियोजित व्यवस्था में समाज का सर्वतोन्मुखी विकास होता है। इससे समाज के सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक, शैक्षिक, राजनीतिक, संचार, परिवहन आदि सभी पक्षों को विकास के समुचित अवसर प्राप्त होते है।
7. अनियोजित अर्थव्यवस्था में आयात तथा निर्यात में संतुलन नहीं रहता है। ऐसी स्थिति में विकासशील राष्ट्रों को अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार में हानि होती है क्योंकि पूँजीवादी राष्ट्र अपने उत्पादों का अधिक मूल्य लेते हैं तथा विकासशील राष्ट्रों में उत्पादों का कम मूल्य देते हैं। नियोजन इस स्थिति को नियंत्रित करते हुये विकसित एवं विकासशील देशों के बीच होने वाले आयात-निर्यात में संतुलन स्थापित करता है।
8. नियोजन समाज के अन्तर्गत सामाजिक सम्बन्धों के प्रतिमानों को सुनिश्चित करते हुए सामाजिक स्थिरता उत्पन्न करता है।
9. नियोजन की स्थिति में उपलब्ध प्राकृतिक संसाधनों का उपयोग विवेक एवं सावधानी के साथ किया जाता है जिसके परिणामस्वरूप प्रकृति प्रदत्त संसाधनों का अनावश्यक तथा अविवेकपूर्ण दोहन नहीं होता तथा प्राकृतिक सन्तुलन बना रहता है।
10. नियोजन के परिणामस्वरूप ऐसी सेवाओं का आयोजन सम्भव हो पाता है जो समाज के निर्बल एवं शोश ण का सरलतापूर्वक शिकार बनने वाले वर्गों के लोगों को जीवन की मुख्यधारा में होने वाली प्रतियोगिता में सफलतापूर्वक भाग लेने में समर्थ बनाती हैं और परिणामतः समाज कल्याण की अभिवृद्धि होती है।

9.3.1 सामाजिक नियोजन का अर्थ एवं परिभाषाएं

सामाजिक नियोजन दो शब्दों से मिलकर बना हैः सामाजिक नियोजन। सामाजिक का अभिप्राय समाज से सम्बन्धित मामलों से है। समाज में विविध प्रकार के सम्बन्ध पाये जाते हैं यथा पारिवारिक सम्बन्ध, शैक्षिक सम्बन्ध, धार्मिक सम्बन्ध, राजनीतिक सम्बन्ध, औद्योगिक सम्बन्ध इत्यादि। ये सम्बन्ध व्यक्ति के जीवन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। इनमें से प्रत्येक प्रकार के सम्बन्ध का क्षेत्र इस प्रकार कार्य करता है कि वह अधिक बड़ी सामाजिक व्यवस्था में स्वतः एक व्यवस्था अथवा उपव्यवस्था का रूप धारण कर लेता है। नियोजन लक्ष्यों के निर्धारण, उनकी पूर्ति के लिए संसाधनों की व्यवस्था और क्रियाओं के संगठित रूपों जो सामान्य सामाजिक व्यवस्था से उत्पन्न होते हैं, का प्रयोग है। नियोजन के अन्तर्गत वर्तमान स्थितियों तथा सम्भावित परिवर्तनों की उपयोगिता को ध्यान में रखकर एक नियमित, व्यवस्थित तथा सुगठित रूपरेखा तैयार की जाती है ताकि भावी परिवर्तन को अपेक्षित लक्ष्यों के अनुरूप नियंत्रित, निदेशित तथा संशोधित किया जा सके।

सामाजिक एवं नियोजन शब्दों के विवेचन के पश्चात् अब सामाजिक नियोजन का अर्थ स्पष्ट किया जा रहा है। सामाजिक नियोजन किसी भी रूप में किया गया नियोजन है जो सामाजिक व्यवस्था या उसकी अन्तर्सम्बन्धित उपव्यवस्थाओं में पूर्ण या आंशिक रूप से एक निश्चित दिशा में अपेक्षित परिवर्तन लाने के एक चेतन एवं संगठित प्रयास का परावर्तन करता है। नियोजन का उद्देश्य एक निश्चित दिशा में परिवर्तन लाने के लिए योजना का निर्माण करना है।

पं. जवाहर लाल नेहरू के शब्दों में ''नियोजन न केवल कार्यसूची बना लेना है और न ही यह एक राजनीतिक आदर्शवाद है, वरन् नियोजन एक बुद्धिमत्तापूर्ण, विवेकपूर्ण तथा वैज्ञानिक पद्धति है जिसके अनुसार हम अपने

आर्थिक तथा सामाजिक उद्देश्यों को निर्धारित एवं प्राप्त करते हैं। स्पष्ट है नियोजन भौतिक पर्यावरण का कुशलतापूर्वक उपयोग करने की प्रक्रिया है।''

भौतिक एवं सामाजिक पर्यावरण का प्रभाव मानव जीवन पर बहुत अधिक पड़ता है। भौतिक संसाधनों के उपयोग के बिना पर्यावरण में सुधार करना सम्भव नहीं है। भौतिक तथा सामाजिक दशाएँ एक दूसरे की पूरक हैं। यद्यपि आज सामाजिक तत्वों को भी भौतिक तत्वों के रूप में देखा जाने लगा है, परन्तु वास्तविकता यह है कि भौतिक कारकों का स्वयं अपने में कोई महत्व नहीं है। समाज अपने दृष्टिकोणों, विचारों तथा महत्व के आधार पर उनका अर्थ निर्धारित करता है।

एन. बी. सोवानी के अनुसारः ''सामाजिक नियोजन भूमि सुधार, असमानता में कमीं, आय का साम्यपूर्ण वितरण, लोगों तथा क्षेत्रों में कल्याण एवं समाज- सेवाओं के विस्तार, अधिक सेवायोजन तथा मात्र एक दूसरे से जुड़ी हुई नहीं प्रत्युत एकीकृत योजनाओं एवं नीतियों इत्यादि की एक प्रक्रिया है।''

ए. जे. कान्ह के अनुसार, ''सामाजिक नियोजन के अन्तर्गत वैयक्तिक और सामूहिक विकास एवं जीवनयापन के लिए गारण्टीयुक्त न्यूनतम संसाधनों के कार्यान्वयन एवं अपने सदस्यों के लिए अपनी अभिलाषाओं एवं उद्देश्यों की प्राप्ति हेतु समाज के प्रयास समाहित हैं।''

उक्त परिभाषाओं के विश्लेषण से स्पष्ट है कि सामाजिक नियोजन एक ऐसी प्रक्रिया है जो समाज के मानवीय संसाधनों के समुचित विकास हेतु उनकी विविध प्रकार की अवश्यकताओं एवं समाज में उपलब्ध विविध प्रकार के संसाधनों के बीच प्राथमिकता के आधार पर सामन्जस्य स्थापित करती है।

9.4 सामाजिक नियोजन की प्रमुख विशेषतायें (Chief Characteristics of Social Planning)

सामाजिक नियोजन की सामान्यविशेषतायें निम्नलिखित हैं:-

निश्चित लक्ष्य

विकासशील देशों में नियोजन का लक्ष्य मुख्यतः उत्पादन बढ़ाना, प्राकृतिक संसाधनों का सदुपयोग करना, उत्पादकता बढ़ाना, अतिरिक्त जनशक्ति का समुचित उपयोग करना तथा आय में समानता लाना होता है।

आधारभूत लक्ष्यों की प्राथमिकता

विकासशील देशों में आवश्यकताओं की अधिकता तथा संसाद्नों की कमी के कारण प्राथमिकताओं का निर्धारण किया जाता है। प्रमुख लक्ष्य कृषि एवं उद्योगों में समन्वय तथा कृषि क्षेत्र में आत्मनिर्भरता लाना होता है। आयात प्रतिस्थापन एवं निर्यात सम्वर्द्धन करते हुये, उद्योगों को बढ़ाने का प्रयास किया जाता है। मानवीय विकास के साद्नों को समुचित स्थान प्रदान किया जाता है।

आर्थिक एवं सामाजिक उत्पादकता में वृद्धि

नियोजन में केवल आर्थिक उत्पादकता को बढ़ाने का ही प्रयत्न नहीं किया जाता वरन् सामाजिक तत्वों को सबल एवं कार्यात्मक बनाने का भी भरसक प्रयास किया जाता है।

अल्प एवं दीर्घकालीन योजनायें

नियोजन में समय एक महत्वपूर्ण कारक होता है। प्रत्येक राष्ट्र एक दीर्घकालीन (10 से 20 वर्ष की) योजना बनाता है। दीर्घकालीन योजना को चार वर्षीय या पंचवर्षीय योजनाओं में विभाजित कर दिया जाता है। अल्पकालीन योजनाएं प्रायः वार्षिक होती हैं।

साधनों का समुचित वितरण

साधनों के अभाव के कारण नियोजन की नितान्त आवश्यकता पड़ती है। नियोजित व्यवस्था में साधनों का वितरण इस प्रकार किया जाता है कि न्यूनतम साधनों के माध्यम से अधिकतम क्षेत्रों के सर्वाद्दिक व्यक्तियों को अधिकाधिक लाभान्वित किया जा सके।

9.5 संविधान में वर्णित सामाजिक नियोजन के उद्देश्य

सामाजिक नियोजन का प्रमुख उद्देश्य संविधान की प्रस्तावना में वर्णित लक्ष्यों को प्राप्त करना है। ये प्रमुख लक्ष्य एवं उद्देश्य निम्नलिखित हैं:-

1. सामाजिक, आर्थिक तथा राजनीतिक न्याय
2. विचारों का स्पष्टीकरण (धर्मों एवं अनुयायियों की स्वतंत्रता)
3. स्थितियों एवं अवसरों की समानता
4. भ्रातृ भावना का अनुरक्षण जिसमें प्रत्येक का व्यक्तित्व परिलक्षित हो
5. बालिकाओं एवं बालकों की निःशुल्क तथा अनिवार्य शिक्षा का प्रबन्ध
6. अनुसूचित जातियों, जन-जातियों तथा पिछड़े वर्गों का आर्थिक एवं शैक्षिक विकास
7. पोषण स्तर, जन स्वास्थ्य तथा जीवन स्तर का उन्नयन
8. लोक कल्याण हेतु सामाजिक संरचना
9. आर्थिक असमानताओं में सामन्जस्य की स्थापना
10. पद, अवसर, सुविधा आदि की असमानताओं में सामान्जस्य की स्थापना

9.6 सामाजिक नियोजन के लक्ष्य (Goals of Social Plannig)

सामाजिक नियोजन के लक्ष्यों को प्रमुख रूप से तीन वर्गों में विभाजित कर सकते हैं:-

1. अर्थव्यवस्था में सुधार हेतु लक्ष्य
2. समयानुसार सामन्जस्य की स्थापना (समानता लाना) हेतु लक्ष्य
3. समयानुसार सामाजिक एवं राजनीतिक परिवर्तन हेतु लक्ष्य

अर्थव्यवस्था में सुधार हेतु लक्ष्य

अर्थव्यवस्था में सुधार हेतु सामाजिक नियोजन के लक्ष्य निम्नलिखित हैं:-

1. आर्थिक संसाद्नों का समुचित उपयोग

2. बेकारी दूर करने के प्रयत्न
3. उत्पादकता में वृद्धि
4. संतुलित विकास को प्रोत्साहन एवं पिछड़े वर्गों तथा अल्पविकसित क्षेत्रों की उन्नति
5. सामाजिक सुरक्षा का प्रावधान जिसके अन्तर्गत रोजगार, उचित मजदूरी, उचित लाभ, उचित मूल्य, लगान, ब्याज आदि की दरों का निर्धारण एवं विनियमन सम्मिलित है
6. रोजगार के अवसरों में वृद्धि
7. शिक्षा एवं स्वास्थ्य सम्बन्धी सुविधाओं का समुचित प्रबन्ध
8. राष्ट्रीय आय एवं प्रति व्यक्ति आय में वृद्धि
9. कृषि में सुधार तथा कृषि सम्बन्धी उद्योगों की प्रगति
10. जन साधारण के जीवन स्तर का उत्थान
11. उद्योगों का संतुलित विकास
12. एक निश्चित अवधि में अधिकतम सामाजिक एवं आर्थिक उन्नति की प्राप्ति
13. सामाजिक एवं सांस्कृतिक स्तर का उन्नयन
14. एकाधिकार प्रवृत्ति का समापन एवं शोश ण से मुक्ति
15. कल्याणकारी राज्य की स्थापना

समयानुसार सामन्जस्य की स्थापना (समानता लाना) हेतु लक्ष्य

सामाजिक एवं आर्थिक असमानताओं को दूर करने के लिए समाज में नियोजित व्यवस्था का प्रयास किया जाता है। इस प्रकार की व्यवस्था में योग्यतानुसार विकास तथा जीवन यापन के अवसर प्रदान किये जाते हैं तथा इसके अन्तर्गत एक निश्चित सीमा के उपरान्त आय में वृद्धि पर रोक लगाई जाती है। नियोजन द्वारा निम्नलिखित क्षेत्रों में समानता स्थापित करने का प्रयास किया जाता है:-

1. समान आर्थिक विकास
2. आर्थिक स्रोतों के उपयोग के समान अवसर
3. शिक्षा ग्रहण करने के समान अवसर
4. न्याय के समान अवसर
5. सामाजिक प्रगति के समान अवसर
6. लाभ का समान वितरण
7. सांस्कृतिक विकास के समान अवसर

समयानुसार सामाजिक एवं राजनीतिक परिवर्तन हेतु लक्ष्य

नियोजन का मुख्य उद्देश्य देश की सुरक्षा को स्थायित्व प्रदान करने के साथ-साथ उद्योगों की स्थापना करते हुए अर्थव्यवस्था को सुदृढ़ बनाना होता है। सामाजिक क्षेत्र में नियोजन का लक्ष्य राष्ट्र में लिंग, जाति, धर्म, रंग आदि के आधार पर भेद-भाव को समाप्त करना है ताकि जीवन स्तर न केवल आर्थिक दृष्टि से बल्कि सामाजिक एवं सांस्कृतिक दृष्टि से भी ऊँचा उठ सके।

9.7 सामाजिक नियोजन एक प्रक्रिया के रूप में (Social Planning as a Process)

सामाजिक नियोजन में तार्किक रूप से क्रमबद्धता का पालन किया जाना अत्यन्त आवश्यक है ताकि कार्यक्रम समुदाय की समस्याओं एवं इसके सदस्यों की आवश्यकताओं से सार्थक रूप से सम्बन्धित रह सकें तथा वे निर्धारित लक्ष्यों, उद्देश्यों एवं सामाजिक मूल्यों की व्यवस्था के अनुरूप प्रतिपादित एवं कार्यान्वित किये जा सकें। विकास के उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए अनेक कारकों को ध्यान में रखकर जो कार्यक्रम प्रस्तावित किये जाते हैं उन्हें निवेश या लागत कहते हैं; क्षेत्र तथा लाभार्थियों को जिन्हें कार्यक्रम से विशेष लाभ होता है, समावेश क्षेत्र कहते हैं; तथा इन कार्यक्रमों के कार्यान्वयन हेतु जो निश्चित कार्य किये जाते हैं उन्हें लक्ष्य कहते हैं। सामाजिक नियोजन में विकास की सीमाओं का आकलन केवल लक्ष्यों की उपलब्धि के आधार पर ही नहीं होता वरन् उद्देश्यों के सन्दर्भ में कार्यक्रम की प्रभावपूर्णता के आधार पर भी होता है। इस प्र्रभाव को परिणाम कहते हैं। ये परिणाम कालान्तर में अन्य कार्यक्रमों के लिए स्वयं निवेश का रूप ग्रहण कर लेते हैं और उनका प्रभाव अनेक क्षेत्रों पर पड़ने लगता है। इस प्रकार के प्रभाव को कार्यक्रम का प्रतिफल कहते हैं।

लक्ष्य की प्राप्ति के लिए अनेक उद्देश्यों को ध्यान में रखा जाता है। इन उद्देश्यों में अन्तर्सम्बन्ध होता है जिसे कार्यक्रम की रणनीति कहा जाता है। लक्ष्य निर्धारण के पहले उस क्षेत्र के विषय में जानकारी प्राप्त करते हैं तथा उस क्षेत्र में आयोजित किये गये कार्यक्रमों तथा उनकी कमियों का विश्लेषण करते हैं। इसे सन्दर्भ विश्लेषण कहते हैं। निष्पत्ति मूल्यांकन हेतु कुछ सूचकों को आधार मानकर अध्ययन आधार वर्ष निर्धारित करते हैं। कार्यक्रम का मूल्यांकन एक निश्चित अवधि के अन्तराल पर करते रहते हैं, जब तक निश्चित लक्ष्य की प्राप्ति न हो जाय। इन मध्यवर्ती मूल्यांकनों की इस प्रक्रिया को खण्डीय विश्लेषण कहते हैं । तदुपरान्त खण्डीय विश्लेषण के अन्तर्गत किये गये कार्यक्रम मूल्यांकन, कमियों की जानकारी, कार्यक्रम में आने वाली बाधाओं आदि का साथ-साथ विश्लेषण करते हैं जिसे स्थितिपरक विश्लेषण कहते हैं।

स्थितिपरक विश्लेषण के आधार पर किसी क्षेत्र में प्रस्तावित कार्यक्रमों के उद्देश्यों का निर्धारण किया जाता है। परन्तु ये उद्देश्य राज्य तथा केन्द्र द्वारा संचालित कार्यक्रम एवं लक्ष्यों के अनुरूप ही होते हैं। नियोजनकर्ता इन उद्देश्यों को निर्धारित कर वर्तमान कमियों को ध्यान में रखते हुये ऐसे कार्यक्रम प्रस्तुत करता है जो इन कमियों की भी पूर्ति करते हों। इन कमियों को केवल भौतिक उपलब्धि की दृष्टि से ही नहीं देखा जाता वरन् इनका गुणात्मक प्रभाव भी देखा जाता है। इस प्रकार इनका कार्य गुणात्मक एवं परिमाणात्मक (qualitative and quantitative) प्रतिमानों का निश्चित करना होता है। यह अवश्य ध्यान में रखा जाता है कि जो प्रतिमान केन्द्रीय सरकार ने निर्धारित किये हैं वे इस क्षेत्र के लिए उपयुक्त हैं अथवा नये प्रतिमानों की आवश्यकता है।

योजना निर्माण तथा कार्यान्वयन में दूसरा महत्वपूर्ण कार्य उपलब्ध एवं प्रत्याशित संसाधनों का मूल्यांकन होता है। इन्हें स्थानीय स्तर पर किस प्रकार सक्रिय बनाया जाय, इस पर विचार विमर्श होता है। संसाधनों को दो वर्गों में बाँटा जा सकता हैः (1) मानव शक्ति; एवं (2) भौतिक संसाधन। मानव शक्ति के अन्तर्गत श्रमिकों तथा

कार्यकर्ताओं की उपलब्धता तथा उनकी निपुणता आदि को सम्मिलित किया जाता है। भौतिक संसाधनों के अन्तर्गत इकाइयों की संख्या, प्रौद्योगिकी के स्तर, संसाधनों की लागत इत्यादि को सम्मिलित किया जाता है।

सामाजिक नियोजन की प्रक्रिया के चरण

सामाजिक नियोजन की प्रक्रिया के अन्तर्गत प्रयोग में लाये जाने वाले विभिन्न चरणों का क्रम इस प्रकार हैः-

1. विकास के लक्ष्यों तथा मूल्यों का निर्धारण
2 परिस्थिति विश्लेषण
3. वर्तमान योजनाओं के गुणात्मक तथा परिमाणात्मक आयामों का ज्ञान
4. विशिष्ट उद्देश्यों तथा रणनीति का निर्धारण
5. क्षेत्रीय संगठनों का गठन ताकि सेवाओं का समुचित उपयोग हो सके
6. खण्डीय नियोजन का कार्य (निवेश, लक्ष्य, क्षेत्र इत्यादि का निद्र्दारण)
7. आर्थिक तथा सामाजिक निवेशों के बीच अन्तर्सम्बन्धों की स्थापना
8. प्रशिक्षण तथा संचार सम्बन्धी प्रस्ताव
9. क्रिया नियोजन तथा कार्यों का स्पष्टीकरण
    - सामाजिक तथा आर्थिक विकास योजनाओं का एकीकरण
    - प्रशिक्षण तथा अभिमुखीकरण ;वतपमदजंजपवदद्ध
    - परिवीक्षण ;उवदपजवतपदहद्ध तथा मूल्यांकन
    - कार्य के लिए अपेक्षित उपकरणों का निर्माण
    - सेवायें प्रदान करने की विधि का निर्धारण
    - संस्था की स्थापना
10. बजट की स्थापना

सामाजिक नियोजन की आधारभूत कार्यरीति

नियोजन की प्रक्रिया के अन्र्तगत निम्न बातों का स्पष्ट विवरण प्रस्तुत किया जाता है:

1. सम्भावित साधनों तथा कार्य लक्ष्यों से सम्बन्धित मूल्यों की प्राथमिकताओं का स्पष्ट चित्रण।
2. उस सामाजिक समस्या का उचित निदान जिस पर कार्य करने की आवश्यकता है।

प्रचलित सामाजिक मूल्यों के साथ प्रक्रिया प्रारूप जिसका उपयोग समाधान के लिये किया जा रहा है, की अनुरूपता का निर्धारण करना।

3. उपलब्ध ज्ञान का अवलोकन (उपलब्ध सभी सम्बन्धित तथ्यों का वर्तमान समस्या के सन्दर्भ में अध्ययन)।
4. अध्ययन के आधार पर योजना का प्रस्तुतीकरण।

5. सम्भावित परिणामों का अवलोकन
6. सम्पूर्ण कार्यान्वयन प्रक्रिया का मूल्यांकन

9.8 सामाजिक नियोजन के प्रकार्य (Functions of Social Planning)

सामाजिक नियोजन का प्रमुख प्रकार्य आर्थिक विकास की निरन्तर वृद्धि हेतु आवश्यक सामाजिक निवेशों को उपलब्ध कराना है ताकि मानव समाज द्वारा ही उत्पन्न किये गये ये सामाजिक निवेश जीवन स्तर को ऊँचा उठाने में सक्रिय रूप से सहायक सिद्ध हो सकें। साथ ही साथ इसका यह कार्य भी है कि सामाजिक एवं आर्थिक कारकों के बीच इच्छित समन्वय हो सके ताकि विकास की प्रक्रिया तेजी से चलाई जा सके। इनके अतिरिक्त सामाजिक नियोजन के विशिष्ट कार्य निम्नलिखित हैं:-

सामाजिक नियोजन के प्रकार्य

सामाजिक नियोजन के प्रमुख प्रकार्य निम्नलिखित हैं:

1. संरचनात्मक परिवर्तन तथा समाज सुधार की गति को तीव्र करना ताकि विकास का प्रतिफल समाज के विभिन्न वर्गों को समान रूप से प्राप्त हो सके।
2. विकास से सम्बन्धित योजनाओं को अधिक प्रभावशाली बनाने के लिए संस्थागत तथा प्रशासनिक व्यवस्था को सुदृढ़ बनाना।
3. विकास के लक्ष्यों को निर्धारित करने से सम्बन्धित निर्णय प्रक्रिया में समुदाय को रचनात्मक रूप से सम्मिलित करना।
4. उत्पादन एवं उत्पादकता को अधिक से अधिक बढ़ाने के लिए समुदाय को प्रेरित करना।
5. विकास हेतु स्थानीय शक्तियों, स्त्रोतों तथा ज्ञान का अद्दिकाद्दिक उपयोग करना।
6. समुदाय में रोजगार के अवसरों की वृद्धि हेतु उचित तकनीकी ज्ञान उपलब्ध कराना ताकि निर्धन वर्ग अधिक से अधिक लाभान्वित हो सके।
7. समुदाय,विशेष रूप से निर्धन वर्ग, को लाभकारी योजनाओं तथा कार्यक्रमों में भागीदारी के लिए प्रेरित करना, तथा निर्णय लेने, लिये गये निर्णयों को कार्यान्वित करने तथा कार्यान्वयन के परिणामस्वरूप होने वाले लाभों से लाभान्वित कराना।
8. समुदाय,विशेष कर पिछड़े वर्ग, को स्वास्थ्य, शिक्षा, पेयजल तथा उत्पादन एवं कार्य क्षमता के स्तर को बढ़ाने के लिएविशेष अवसर प्रदान करना और इसके लिए आवश्यक प्रशिक्षण उपलब्ध कराना ।
9. संतुलित नगरीय-ग्रामीण सम्बन्धों द्वारा जनसंख्या का समुचित वितरण प्रारूप प्रदान करना। ऐसी स्थिति उत्पन्न करना जिससे ग्रामीण जनसंख्या का नगर की ओर आने का प्रयास न्यूनतम हो सके।
10. विकास सम्बन्धी कार्यक्रमों के लिए पर्यावरण का समुचित किन्तु सावधानीपूर्वक प्रयोग करना।

11. सामाजिक नियोजन के अन्तर्गत समाज की आर्थिक उन्नति के साथ-साथ स्वास्थ्य, शिक्षा, कार्यक्षमता, सांस्कृतिक उन्नति, जीवन स्तर में सुधार, वैज्ञानिक दृष्टिकोण आदि का विकास भी महत्वपूर्ण है।
12. विकास के लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए स्थानीय स्रोत एवं ऊर्जा का प्रबन्ध करना तथा आन्तरिक प्रेरणा को सुदृढ़ बनाना।
13. वास्तव में सम्बन्धित व्यक्तियों के लाभ हेतु कल्याणकारी योजनाओं का निर्धारण करना।
14. जन संगठन तथा सरकारी संस्थाओं के बीच अधिक से अधिक कार्यात्मक सम्बन्ध बढ़ाने का प्रयास करना।
15. सामाजिक विकास की प्रक्रिया के अन्तर्गत आर्थिक एवं स्थानिक नियोजन को एकीकृत करना।
16. आत्म-निर्भरता की दृष्टि से विकास की प्रक्रिया का इस प्रकार कार्यान्वयन करना ताकि नियोजन, कार्यान्वयन, मूल्याँकन इत्यादि सभी स्तरों पर जन सहभागिता को प्रोत्साहित किया जा सके।
17. (6) व्यवस्था का कार्यान्वयन इस प्रकार करना ताकि स्थानीय विकास एवं उच्च स्तरीय प्रयासों में पारस्परिक सम्बन्ध स्थापित किया जा सके।

9.9 सामाजिक नियोजन के सिद्धान्त (Theories of Social planning)

सामाजिक नियोजन के प्रमुख सिद्धान्त निम्नलिखित हैं :-

बचत वृद्धि-पूँजी सृजन का सिद्धान्त

प्रायः पूँजी अधिक होने पर ही योजनायें उचित रूप से कार्यान्वित हो पाती हैं तथा लक्ष्यों की प्राप्ति सम्भव हो पाती है। अतः नीतियों का निर्धारण एवं कार्यान्वयन अधिक बचत के दृष्टिकोण से किया जाना चाहिए।

प्राकृतिक संसाधनों के समुचित उपयोग का सिद्धान्त

उत्पादन हेतु प्राकृतिक संसाधनों का नियोजित रूप से तथा सावधानीपूर्वक उपयोग करने के साथ-साथ उन्हें बढ़ाने तथा सुरक्षित रखने का प्रयास भी किया जाना चाहिए।

निजी एवं सार्वजनिक क्षेत्र के समन्वय का सिद्धान्त

नियोजन की सफलता निजी तथा सार्वजनिक क्षेत्र मे समन्वय पर निर्भर करती है। अल्प विकसित राष्ट्रों में इस समन्वय का अभाव होता है।

समय के समुचित उपयोग का सिद्धान्त

योजना बनाते समय सभी प्रभावकारी पक्षों का विस्तृत अध्ययन करते हुए प्राथमिकता स्थापित करने के पश्चात् कार्यान्वयन के समय इन पर लगने वाले समय का यथार्थवादी मूल्यांकन करते हुये समय की रूपरेखा तैयार की जानी चाहिए। निश्चित समय की रूपरेखा अत्यन्त आवश्यक है।

केन्द्रित किन्तु विकेन्द्रित विकास की प्राथमिकता का सिद्धान्त

पिछड़े क्षेत्रों का विकास सर्वप्रथम होना चाहिए परन्तु इन क्षेत्रों के विकास हेतु अधिक समय तथा पूँजी की आवश्यकता होती है जो केन्द्र सरकार के पास सर्वाधिक उपलब्ध होती है। अतः सामाजिक नियोजन की दृष्टि से यह अधिक उपयोगी होगा कि देश में पिछड़े हुये क्षेत्रों के विकास का दायित्व केन्द्र सरकार द्वारा प्राथमिकता के आधार पर ग्रहण किया जाय।

लचीलेपन का सिद्धान्त

सामाजिक-साँस्कृतिक परिवेश एवं भौतिक पर्यावरण के भिन्न होने के कारण योजना के कार्यान्वयन के स्तर पर एक ही रणनीति अथवा प्रणाली सदैव प्रभावपूर्ण सिद्ध नहीं होती। अतः यह आवश्यक है कि योजना लचीली हो ताकि परिस्थितियों की आवश्यकतानुसार इसमें आवश्यक संशोधन किये जा सकें।

संसाधनों के आवंटन का सिद्धान्त

नियोजन के लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए संसाधनों की आवश्यकता होती है। अतः योजना के लक्ष्यों को ध्यान में रखते हुए इनकी आवश्यकताओं के अनुरूप संसाधनों का आवंटन किया जाना चाहिए।

जनसहभागिता के महत्व का सिद्धान्त

किसी भी सरकार के पास इतने तथा ऐसे संसाधन नहीं होते कि वह योजना निर्माण एवं कार्यान्वयन सम्बन्धी विभिन्न आवश्यकताओं की संतोश जनक पूर्ति केवल सरकारी तंत्र का प्रयोग करते हुए कर सके। अतः जन सहभागिता एवं जन सहयोग आवश्यक हो जाते हैं।

समुचित एवं सामयिक मूल्यांकन का सिद्धान्त

मूल्यांकन किसी भी कार्यक्रम का महत्वपूर्ण अंग है। योजना के समुचित एवं सामयिक मूल्यांकन से यह पता चलता है कि निर्धारित उद्देश्यों की प्राप्ति किस सीमा तक हो रही है, इनकी प्राप्ति के लिए निर्धारित साधन कहाँ तक उपयोगी हो रहे हैं, उद्देश्यों की प्राप्ति के मार्ग में क्या व्यवधान, यदि कोई हों, आ रहे हैं तथा इन्हें किस प्रकार दूर किया जा सकता है। इस प्रकार मूल्यांकन वह आधार प्रदान करता है जिसकी पृष्ठभूमि में योजना में संशोधन किये जाने की आवश्यकता होती है।

9.10 सामाजिक नियोजन के प्रकार (Types of Social Planning)

भौतिक नियोजन

जब नियोजन के लक्ष्यों उपलब्ध भौतिक संसाधनों को ध्यान में रखते हुए भौतिक वस्तुओं के रूप में व्यक्त किया जाता है तो उसे भौतिक नियोजन के नाम से जाना जाता है। यथा, निर्मित किये जाने वाले मार्ग की लम्बाई, विद्यालयों, चिकित्सालयों इत्यादि की संख्या।

वित्तीय नियोजन

वित्तीय नियोजन के अन्तर्गत सम्पूर्ण योजना तथा इसके विभिन्न मदों पर एक निश्चित मात्रा में व्यय करने का लक्ष्य निर्धारित किया जाता है। उदाहरणार्थ, मार्ग निर्माण पर व्यय, शैक्षिक संस्थाओं पर व्यय, चिकित्सालय स्थापना पर व्यय इत्यादि। मूलतः यह व्यय कितना तथा किस रूप में होना है। यह वित्तीय नियोजन का महत्वपूर्ण

पक्ष है। वित्तीय नियोजन का महत्व मुद्रा विस्फीति या अवस्फीति काल में होता है। संसाधनों के मूल्य बढ़ने से भौतिक लक्ष्यों की उपलब्धता में अभाव उत्पन्न होता है।

भौतिक तथा वित्तीय नियोजन परस्पर आश्रित हैं। संसाधनों की वृद्धि अथवा ह्रास के परिणामस्वरूप भौतिक लक्ष्यों में समयानुसार परिमाणात्मक परिवर्तन (वृद्धि अथवा कमी) किया जाता है। यदि भौतिक लक्ष्य अधिक प्रभावपूर्ण होते हैं तो अतिरिक्त वित्तीय संसाधनों की व्यवस्था की जाती है।अल्प विकसित राष्ट्रों में इन दोनों प्रकारों में समन्वय प्रायः दुष्कर होता है। अतः नियोजन सामान्यतया सफल नहीं हो पाता है।

संरचनात्मक नियोजन

संरचनात्मक नियोजन में समाज की सम्पूर्ण संरचना में परिवर्तन लाने तथा नये सामाजिक-आर्थिक ढ़ाँचे के निर्माण का प्रारूप प्रदान करने का प्रयास किया जाता है। नवीन पद्धतियों का विकास करते हुये इनका प्रायोगात्मक परीक्षण किया जाता है और इसके परिणामस्वरूप सामाजिक एवं आर्थिक व्यवहार के नये आयाम स्थापित होते हैं तथा परम्परागत पद्धतियाँ एवं व्यवस्थायें समाप्त होती हैं। नियोजन के इस प्रारूप को क्रांतिकारी नियोजन भी कहते हैं।

प्रकार्यात्मक नियोजन

प्रकार्यात्मक नियोजन में वर्तमान सामाजिक व्यवस्था में परिवर्तन न कर उन रिक्तियों एवं अभावों को दूर करने का प्रयास किया जाता है जो विकास में बाधक होते हैं।

संरचनात्मक नियोजन तथा प्रकार्यात्मक नियोजन में घनिष्ठ सम्बन्ध है। दीर्घकालीन कार्यान्वयन के उपरान्त संरचनात्मक नियोजन स्वतः प्रकार्यात्मक नियोजन का रूप धारण कर लेता है । वस्तुतः सामाजिक संरचना में किये गये परिवर्तन के पश्चात् मात्र सुधारों की आवश्यकता होती है। सोवियत संघ तथा चीन में सर्वप्रथम सरंचनात्मक नियोजन प्रारम्भ किया गया। तथापि, व्यवस्था में विद्यमान कुरीतियों एवं अभावों को धीरे-धीरे समाप्त करने के लिए प्रकार्यात्मक नियोजन का सहारा लिया गया।

सुधारात्मक नियोजन

सुधारात्मक नियोजन,विशेष रूप से विकसित राष्ट्र अथवा पूँजीवादी राष्ट्रो द्वारा अधिकांशतः अपनाया जाता हैं। जब कभी इन राष्ट्रों की विकास की प्रक्रिया में अवरोध उत्पन्न होता है तो ये सुधारात्मक नियोजन द्वारा इसे समाप्त करने का प्रयास करते हैं। सुधारात्मक नियोजन के अन्तर्गत निजी उत्पादकों एवं विनियोजकों को सहायता तथा निदेशन प्रदान किया जाता है और आवश्यकता पड़ने पर नियंत्रण किया जाता है। इस नियोजन का लक्ष्य आर्थिक अस्थिरता को दूर करना होता है, किन्तु राज्य अर्थव्यवस्था में आवश्यकता से अधिक हस्तक्षेप नहीं करता।

विकासात्मक नियोजन

विकासात्मक नियोजन की आवश्यकता प्रायः विकसित देशों में होती है। इसके अन्तर्गत भौतिक, सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक, सांस्कृतिक उन्नति का प्रयास किया जाता है। वास्तव में, आवश्यकता पड़ने पर समयानुसार आर्थिक ढ़ाँचे के साथ-साथ सामाजिक, राजनीतिक, प्रशासनिक एवं विविध संरचनाओं में भीविशेष परिवर्तन किये जाते हैं। नियोजनकर्ता सर्वप्रथम राष्ट्र के प्राकृतिक संसाधनों का सर्वेक्षण करते हैं। उसके बाद उनके उपयोग के लिए लागत का अनुमान लगाते हैं। पुनः संसाधनों के उपयोग में वरीयता निर्धारित करते हैं। तदुपरान्त सम्पूर्ण राष्ट्र के संतुलित विकास हेतु दीर्घकालीन योजना प्रस्तुत करते हैं। पुनः उसे अल्पकालीन योजनाओं में विभाजित करते

हैं। तत्पश्चात् योजना को कार्यान्वित करते हैं। ऐसी योजना में लचीलापन आवश्यक होता है ताकि परिस्थिति में आवश्यकताओं के अनुसार अपेक्षित परिवर्तन किये जा सकें।

विकास नियोजन कृषि, उद्योग, शिक्षा, स्वास्थ्य, यातायात आदि विविध पक्षों का विकास करता है। रोजगार के अवसरों में वृद्धि, जीवन-स्तर का निरन्तर उन्नयन तथा प्राकृतिक संसाधनों का सर्वाद्दिक उपयुक्त उपयोग ही विकास नियोजन का मुख्य ध्येय है। विकास नियोजन के परिणामस्वरूप राष्ट्र के उत्पादन एवं उत्पादकता में वृद्धि अवश्यंभावी हो जाती है।

प्रजातांत्रिक नियोजन

प्रजातांत्रिक नियोजन का आधार जन सहभागिता एवं जन सहयोग है। यह नियोजन निम्न स्तर से प्रारम्भ होता है। इस प्रकार के नियोजन की सफलता इस बात पर निर्भर करती है कि राष्ट्र की जनसंख्या कितनी शिक्षित, जागरूक एवं अनुशासित है। फ्रांस में प्रजातांत्रिक नियोजन की सफलता का यही रहस्य है। इस प्रकार नियोजन की प्रक्रिया में तथा निजी क्षेत्र के प्रतिद्वन्दी के रूप में कार्य न कर उसके पूरक के रूप मे कार्य करता है।

तानाशाही नियोजन

तानाशाही नियोजन जिसे फासिस्ट नियोजन के नाम से भी जाना जाता है, में उत्पादन के सभी अंगों का राष्ट्रीयकरण हो जाता है तथा निजी क्षेत्र में केवल अधिकृत सीमित सम्पत्ति रह जाती हैं। उत्पादन, उपभोग, विनिमय तथा वितरण सभी पर राज्य का अद्दिकार रहता है। एक केन्द्रीय नियोजन समिति योजना के लक्ष्य निर्धारित करती है। योजना का कार्य काल निश्चित समय के लिए होता है। इस नियोजन में निर्धारित मानदण्डों का दृढ़ता से अनुपालन किया जाता है। आर्थिक क्रिया-कलापों से अर्जित सम्पूर्ण लाभ राज्य को प्राप्त होता है।

9.11. सामाजिक नियोजन के प्रभावपूर्ण कारक (Responsible factors for Social Planning)

सामाजिक नियोजन की प्रभावपूर्णता तथा उपयुक्तता को प्रभावित करने वाले कारक निम्नलिखित हैं:-

राजनीतिक इच्छा

सम्पूर्ण सामाजिक नियोजन अंतिम रूप से राज्य द्वारा किया जाता है। इसलिये राजनीतिक इच्छा का पाया जाना आवश्यक है।

संस्थागत विकास

सामाजिक नियोजन के प्रभावपूर्ण प्रतिपादन एवं कार्यान्वयन के लिए उपयुक्त सामाजिक संस्थाओं का पाया जाना आवश्यक है। इसे भी सामाजिक विकास का अंग माना जाना चाहिए। संस्थाओं का स्वस्थ विकास व्यक्तियों को विकास कार्यक्रमों में भाग लेने तथा लाभ उठाने के अवसर प्रदान करता है।

स्थानीय संसाधनों का उपयोग

स्थानीय संसाधनों को गतिशील बनाकर उनका अधिकतम उपयोग करते हुए ही प्रभावपूर्ण सामाजिक योजना बनायी एवं कार्यान्वित की जा सकती है।

भूमिकाओं एवं प्रविधियों की स्पष्टता

जब तक सामाजिक योजना के निर्माण एवं कार्यान्वयन से सम्बन्धित विभिन्न व्यक्तियों की भूमिकाओं तथा इसमें प्रयोग में लायी जाने वाली प्रविधियाँ स्पष्ट नहीं होगीं तब तक सामाजिक नियोजन प्रभावपूर्ण नहीं होगा।

ऐच्छिक एवं सरकारी संस्थाओं में स्पष्ट विभेद

सामाजिक नियोजन के निर्माण एवं कार्यान्वयन में स्वैच्छिक एवं सरकारी दोनों प्रकार की संस्थायें अपनी-अपनी भूमिका प्रतिपादित करती हैं। इसलिए जनता को इनके द्वारा प्रतिपादित भूमिकाओं एवं प्रयुक्त प्रविधियों की स्पष्ट जानकारी अवश्य होनी चाहिए ताकि इनका समुचित मूल्यांकन किया जा सके।

स्थानीय प्रबन्ध तथा आत्म निपुणतायें

सामाजिक नियोजन के प्रभावपूर्ण प्रतिपादन एवं कार्यान्वयन हेतु यह आवश्यक है कि अपेक्षित विभिन्न प्रकार की सामाजिक संस्थाओं का विकास एवं प्रबन्ध स्थानीय स्तर पर किया जाये और ये सामाजिक संस्थायें ऐसी निपुणताओं का स्वतः विकास कर सकें जो इनकी प्रभावपूर्ण क्रिया में सहायक सिद्ध हो सके ।

जन संवेदनशीलता

यदि समाज में रहने वाले लोग विभिन्न महत्वपूर्ण सामाजिक मुद्दों एवं समस्याओं के प्रति जागरूक हैं तो सामाजिक नियोजन का प्रतिपादन एवं कार्यान्वयन प्रभावपूर्ण होगा।

9.12 सफल सामाजिक नियोजन की आवश्यक शर्तें (Required Conditions of Success Social Planning)

सामाजिक नियोजन की सफलता के लिए निम्नलिखित शर्तें आवश्यक हैं:-

वास्तविक और विस्तृत आँकड़ों की उपलब्धता

योजना बनाने का कार्य आरम्भ करने के पूर्व विभिन्न सामाजिक आर्थिक क्षेत्रों से सम्बन्धित वास्तविक एवं विस्तृत आँकड़े उपलब्ध होने चाहिए। बचत, पूंजी निर्माण, उत्पादन, उत्पादकता, रोजगार, बेरोजगारी, लागत, रहन-सहन, आदतों, स्वास्थ्य-स्तर, शैक्षिक उपलब्द्धियों, मनोवृत्तियों, मूल्यों, विश्वासों इत्यादि से सम्बन्धित विस्तृत एवं यथार्थ सूचना उपलब्ध होनी चाहिए।

नियोजन के क्रमिक चरणों का समुचित उपयोग

नियोजन के 4 चरण हैं: योजना का निर्धारण, योजना का स्वीकृतिकरण, योजना का कार्यान्वयन तथा योजना का मूल्याँकन। इन सभी चरणों का क्रमानुसार अनुपालन किया जाना आवश्यक है।

प्राथमिकताओं का उचित निर्धारण

विकासशील राष्ट्रों में सामान्यतया आवश्यकतायें अधिक तथा संसाधन सीमित होते हैं। अतः लक्ष्यों की प्राप्ति हेतु प्राथमिकताओं का निर्धारण किया जाना आवश्यक होता है।

उचित राजनीतिक निदेशन

किसी भी प्रजातांत्रिक देश में नियोजन की सफलता ईमानदार, कत्र्तव्यनिष्ठ तथा उत्साही राजनेताओं पर निर्भर करती है। अतः यह आवश्यक है कि सामाजिक नियोजन के क्षेत्र में राजनेता समुचित मार्गदर्शन एवं प्रोत्साहन प्रदान करें।

उचित प्रलोभन

योजनाओं के सफल संचालन हेतु सामाजिक तथा आर्थिक दोनों क्षेत्रों में योग्य, कुशल एवं कत्र्तव्यनिष्ठ कार्यकर्ताओं को समय-समय पर उचित पारितोषिक एवं प्रलोभन प्रदान किया जाना चाहिए तथा कार्यान्वयन का दायित्व निर्धारित करने की व्यवस्था का विकास कर अयोग्य, अकुशल एवं भ्रष्ट कार्यकर्ताओं को उदाहरणस्वरूप दण्ड भी दिया जाना चाहिए।

जन सहयोग की प्राप्ति

सामाजिक नियोजन तभी सफल हो सकता है जब जन सहयोग अधिक से अधिक उपलब्ध हो क्योंकि जन सहयोग के उपलब्ध होने पर ही लोगों की अनुभूत आवश्यकताओं का सही पता चल सकता है और इनके कार्यान्वयन में जन सहभागिता हो सकती है।

समानता पर बल

सामाजिक नियोजन का अंतिम उद्देश्य समाज में यथासम्भव अधिक से अधिक सामाजिक तथा आर्थिक समानता उत्पन्न करना है। समानता लाने के लिए निर्बल एवं शोश ण का सरलतापूर्वक शिकार बनने वाले वर्गों के उत्थान पर अधिक बल देने की आवश्यकता होती है और इसके लिए कुछ विशिष्ट प्रकार के कार्यक्रम आयोजित करते हुए इन वर्गों कोविशेष प्रकार की सहायता प्रदान किया जाना आवश्यक होता है।

वैकल्पिक व्यवस्थाओं की अनिवार्यता

सामाजिक नियोजन के अन्तर्गत निर्धारित किये गये उद्देश्यों की प्राप्ति हेतु वैकल्पिक व्यवस्थाओं, रणनीतियों एवं साधनों को उपलब्द्द होना चाहिए ताकि एक के असफल होने पर अन्य विकल्प को प्रयोग में लाया जा सके।

अल्पकालीन तथा दीर्घकालीन लक्ष्यों का निर्धारण

सामाजिक नियोजन के लक्ष्य अल्पकालीन तथा दीर्घकालीन दोनों प्रकार के होने चाहिए। अल्पकालीन लक्ष्य अनुभव की गयी आवश्यक आवश्यकताओं की पूर्ति में सहायक सिद्ध होते हैं तथा दीर्घकालीन लक्ष्य भावी विकास के लिए अपेक्षित संदर्भ प्रदान करते हुये प्रारम्भ की गई क्रिया एवं उपलब्धि की निरन्तरता को बनाये रखते हैं।

योजना का प्रचार एवं प्रसार

योजना के स्वरूप, कार्यान्वयन की रणनीति तथा प्रगति इत्यादि की जानकारी प्रचार-प्रसार के माध्यम से समान्य वर्गों को प्राप्त होती रहनी चाहिए ताकि अपेक्षित जन सहयोग प्राप्त होता रहे और जन सहभागिता के माध्यम से योजना को सफलतापूर्वक कार्यान्वित किया जा सके।

9.13 सफल नियोजन हेतु महत्वपूर्ण तत्व (Important Component for Success Social Planning)

नियोजन की प्रक्रिया एक सम्पूर्ण प्रक्रिया है। इससे सम्बन्धित विभिन्न पहलुओं के नाना प्रकार के तत्वों में आवश्यक अन्तर्सम्बन्ध को ध्यान में रखते हुए एकीकृत योजना बनायी जानी चाहिए। न केवल सामाजिक एवं आर्थिक नियोजन को एक दूसरे के पूरक के रूप में स्वीकार किया जाना चाहिए बल्कि इनके विभिन्न तत्वों को भी एक दूसरे पर निर्भर मानते हुए योजना का निर्माण एवं कार्यान्वयन किया जाना चाहिये। सफल नियोजन के लिए निम्नलिखित महत्वपूर्ण तत्वों को ध्यान में रखा जाना चाहियें:-

1. योजना के कार्यान्वयन सम्बन्धी पहलू पर विशेष ध्यान देते हुए योजना का निर्माण किया जाना चाहिये।
2. योजना का निर्माण गाँव/शहर के मुहल्ले को इकाई मानकर स्थानीय स्तर पर किया जाना चाहिये।
3. योजना के निर्माण तथा कार्यान्वयन में अधिक से अधिक जन सहयोग लिया जाना चाहिये ताकि अनुभूत आवश्यकताओं का परावर्तन हो सके और योजना यथार्थवादी बन सके।
4. योजना के अधीन किसी भी कार्यक्रम को प्रारम्भ करने के पूर्व इससे सम्बन्धित लक्ष्य समूहों को इसकी जानकारी करायी जानी चाहिये।
5. योजना के निर्माण तथा कार्यान्वयन से सम्बन्धित ढंग एवं कार्यरीतियाँ सरल एवं स्पष्ट और अगोपनीय होनी चाहिये।
6. योजना का मसौदा न केवल वर्तमान बल्कि भविष्य की भी आवश्यकताओं एवं समस्याओं से सम्बन्धित होना चाहिये।
7. योजना के लक्ष्यों का निर्धारण यथार्थवादी होना चाहिये। उन लक्ष्यों के सम्बन्ध में इनसे सम्बन्धित कर्मचारियों को छूट प्रदान की जानी चाहिये जो प्रत्यक्ष रूप से लोगों की स्वीकृति से सम्बद्ध हों यथा, परिवार नियोजन के अधीन बन्ध्याकरण सम्बन्धी लक्ष्य। लक्ष्यों को स्वयं में अन्तिम उद्देश्य न मानकर इनके माध्यम से लक्ष्य समूहों को होने वाले लाभों को अन्तिम उद्देश्यों के रूप में स्वीकार किया जाना चाहिये।
8. नियोजन की प्रक्रिया में स्थानीय लोगों, संस्थाओं तथा सम्बन्धित सरकारी तंत्र से सम्बद्ध कर्मचारियों के अतिरिक्तविशेषज्ञों को भी सम्मिलित किया जाना चाहिये।
9. योजना का निर्माण करने तथा इसके कार्यान्वयन के लिये उत्तरदायी सरकारी तंत्र में समय-समय पर सक्रिय रूप से विचार विमर्श होते रहना चाहिये; और कार्यान्वयन से सम्बन्धित कार्यकर्ताओं द्वारा दिये गये परामर्शों को सापेक्षतया अधिक महत्व प्रदान किया जाना चाहिये।
10. योजना का निर्माण करते समय लोगों की सांस्कृतिक, सामाजिक एवं मनोवैज्ञानिक पृष्ठभूमि को ध्यान में रखा जाना चाहिये।
11. योजना में समाहित की जाने वाली प्रविधियों को स्थानीय आवश्यकताओं एवं समस्याओं के अनुरूप होना चाहिये।

12. नियोजन के लिये प्रसार प्रविधि को अपनाते हुयेविशेष प्रकार की शोधशालाओं की स्थापना की जानी चाहिये।

9.14 सारांश (Summary)

सारांश के रूप में सामाजिक नियोजन एक ऐसी प्रक्रिया है जो समाज के मानवीय संसाधनों के समुचित विकास हेतु उनकी विविध प्रकार की अवश्यकताओं एवं समाज में उपलब्ध विविध प्रकार के संसाधनों के बीच प्राथमिकता के आधार पर सामन्जस्य स्थापित करती है।

9.15 अभ्यासार्थ प्रश्न (Questions for Practice)

(1) सामाजिक नियोजन से आप क्या समझते हैं?

(2) सामाजिक नियोजन के महत्व पर प्रकाश डालिए।

(3) सामाजिक नियोजन का अर्थ एवं विशेषताओं का वर्णन कीजिए।

(4) सामाजिक नियोजन के प्रकार्यो से आप क्या समझते हैं?

(5) सामाजिक नियोजन के सिद्धान्तों पर प्रकाश डालिए।

(6) सामाजिक नियोजन के प्रकारो का वर्णन कीजिए।

(7) सामाजिक नियोजन की आवश्यक शर्तो को स्पष्ट कीजिए ।

9.16सन्दर्भ पुस्तकें (Reference Books)

1. Singh, Tarlok, Social Policy, Encyclopaedia of Social Work in India, Vol II Planning commission, GOI, New Delhi, 1968.
2. Singh, S., Mishra, P.k. D.k.and Singh, A.k. N.k. Bharat mein Samajik Niti, Niyojan Evam Vikas, Deva Publications, Lucknow, 2006.
3. Bhartiya, A.k. K.k. and Singh, D.k. K.k. Social Policy in India, NRBC, Lucknow, 2009.
4. Agnihotri, I.k. and Awasthi, A.k. Economic Principles, Alok Prakashan, Allahabad, 1999.
5. Sovani, N.k. V.k. Whither Social Planners and Social Plannig
6. k. Gokhle, S.k. D.k. (ed.) Social Welfare: Legend and Legacy.
7. Kahn, A, J, Studies in Social Policy and Planning, Russel Sage Foundation, 1969.
8. Singh, S.k. P.k. Economic Development and Planning, S.k. Chand and Company Ltd., New Delhi, 2000.

इकाई-10

सामाजिक एवं आर्थिक नियोजन: योजना आयोग एवं पंचवर्षीय योजनाएं

इकाई की रूपरेखा

10.0 उद्देश्य (Objectives)

10.1 प्रस्तावना (Preface)

10.2 भूमिका (Introduction)

10.3 सामाजिक एवं आर्थिक नियोजन (Social and Economic Planning)

10.4 सामाजिक तथा आर्थिक नियोजन में सम्बन्ध (Interrelationship between Social and Economic Planning)

10.5 योजना आयोग (Planning Commission)

10.6 योजनाओं सम्बन्धी प्रस्तावों का निर्माण (Formation of Planning Related Proposals)

10.7 नियोजन में समन्वय की समस्या (Problems of Coordination in Planning)

10.8 योजना सम्बन्धी अनुवर्तन तथा मूल्यांकन (Evaluation and Followup Related to Planning)

10.9 सामाजिक नियोजन एवं पंचवर्षीय योजनाएं (Social Planning & Five Yaer Plan)

10.10 प्रभावपूर्ण सुझाव (effective Suggestions)

10.11 सारांश (Summary)

10.12 अभ्यासार्थ प्रश्न (Questions for Practice)

10.13 सन्दर्भ पुस्तकें (Reference Books)

10.0 उद्देश्य (Objectives)

प्रस्तुत अध्याय के अध्ययन के बाद आप –

1. आर्थिक विकास के अर्थ तथा उद्देश्यों को जान सकेंगे |
2. सामाजिक तथा आर्थिक नियोजन के मध्य सम्बन्धों को समझ सकेंगे |
3. योजना आयोग के संरचना एवं कार्यों को जान सकेंगे |
4. सामाजिक नियोजन के सन्दर्भ में विभिन्न पंचवर्षीय योजनाओं का विश्लेषण कर सकेंगे |

10.1 प्रस्तावना (Preface)

विकासशील देश अपने नागरिकों को एक न्यूनतम इच्छित जीवन का आश्वासन प्रदान करने की दृष्टि से यथा संभव सभी प्रयास करते हैं। वर्तमान समय में सभी समाज वैज्ञानिक इस बात को स्वीकार करते हैं कि विकास का प्रारूप तथा नियोजन के सिद्धान्त चाहे कोई भी हों, इनके द्वारा मौलिक मानवीय आवश्यकताओं की संतुष्टि तथा निर्धन एवं शोषित लोगों की समस्याओं का समाधान होना ही चाहिए।

10.2 भूमिका (Introduction)

वर्तमान समय में सभी समाज वैज्ञानिक इस बात को स्वीकार करते हैं कि विकास का प्रारूप तथा नियोजन के सिद्धान्त चाहे कोई भी हों, इनके द्वारा मौलिक मानवीय आवश्यकताओं की संतुष्टि तथा निर्धन एवं शोषित लोगों की समस्याओं का समाधान होना ही चाहिए। विकासशील देश अपने नागरिकों को एक न्यूनतम इच्छित जीवन का आश्वासन प्रदान करने की दृष्टि से यथा संभव सभी प्रयास करते हैं। क्योंकि जनसंख्या नगरीय तथा ग्रामीण दोनों क्षेत्रों में निवास करती है इसलिए नगरीय विकास के साथ-साथ ग्रामीण विकास पर भी बल दिया जाता है और विकास की प्रक्रिया में अधिक से अधिक जन सहयोग प्राप्त करने की चेष्टा की जाती है। आज यह अनुभव किया जाने लगा कि योजनाओं का निर्माण तथा उनका कार्यान्वयन इस प्रकार किया जाना चाहिए कि इनसे समुदायों में आत्म निर्भरता बढ़ने के साथ-साथ निर्बल, पिछड़े एवं शोश ण का सरलतापूर्वक शिकार बनने वाले वर्गों का अधिकतम कल्याण हो।

10.3 सामाजिक एवं आर्थिक नियोजन (Socio-economic Planning)

नियोजन से तात्पर्य एक ऐसी व्यवस्था से है जिसके माध्यम से लक्ष्य को पूरा किया जा सके और कार्यक्रमों की रूपरेखा का निर्माण समस्या को दृष्टिगत करते हुए किया जा सके। नियोजन एक बौद्धिक प्रक्रिया है जो कि पूर्व निर्धारित होती है। नियोजन की आवश्यकता प्रत्येक समय में रही है, क्योंकि बिना नियोजन के विकास के लक्ष्य को प्राप्त करना असम्भव सा प्रतीत होता है।

वर्तमान समय में विकास शब्द का अर्थ बदलने के कारण उसके क्षेत्र में भी परिवर्तन हुआ है। आज विकास का अर्थ सर्वांगीण विकास है, और इस सम्पूर्णता को ध्यान में रखते हुए ही नियोजन किया जाना चाहिए। क्योंकि नियोजन का लक्ष्य विकास है एवं विकास के अन्तर्गत सम्पूर्णता समाहित है, इसलिए नियोजन की अवधारणा में भी सम्पूर्णता का समावेश होना चाहिए। दुर्भाग्यवश, भौतिक तथा सामाजिक कारकों को अलग-अलग समझने की प्रवृत्ति के कारण नियोजन को भी अलग-अलग भागोंमें देखा जाता है। इसका परिणाम यह होता है कि सामाजिक तथा आर्थिक नियोजन को एक दूसरे से पूरी तरह से अलग देखा जाता है।

वर्तमान भौतिकवादी युग में अर्थ की प्रधानता होने के कारण नियोजन को सामान्यता आर्थिक नियोजन के रूप में देखा जाता है और सामाजिक नियोजन को वह महत्व हीं मिल पाता है जो इसे वास्तव में मिलना चाहिए। वास्तविकता यह है कि आर्थिक नियोजन निःसन्देह महत्वपूर्ण है किन्तु इस नियोजन की सफलता भी सामाजिक नियोजन पर ही निर्भर करती है जिसके अन्तर्गत मानवीय संसाधनों से सम्बन्धित नियोजन किया जाता है।

आर्थिक नियोजन

विश्व के सभी देश अपनी आर्थिक स्थिति को सुदृढ़ बनाने की दिशा में प्रयासरत हैं। आर्थिक नियोजन को जो सफलता सोवियत रूस में मिली है, उसी का अनुकरण करते हुए विश्व के अन्य विकासशील देश आर्थिक लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए योजनाओं का निर्माण कर रहे हैं और आर्थिक नियोजन की प्रक्रिया का सहारा ले रहे हैं।

कृषि में परम्परागत साधनों का प्रयोग करते हुए किया गया खाद्यान्नों का उत्पादन, आर्थिक संसाधनों पर पूंजीपति वर्ग के एकाधिकार, श्रमिकों का उनके द्वारा किया गया शोषण , कारखानों में बनी हुयी वस्तुओं के बाजार में आने के कारण घरेलू उद्योगों का ह्रास, गांवों की समाप्त होती हुयी आत्मनिर्भर, नगरों में कारखानों की स्थापना के परिणामस्वरूप उपलब्ध हुये सेवायोजन के नवीन अवसरों से लाभान्वित होने के लिए ग्रामीण अंचलों से जनसंख्या का बड़े पैमाने पर प्रवसन और इसके परिणामस्वरूप नगरों में उत्पन्न हुयी नाना प्रकार की समस्याएं, बढ़ती हुयी चोर बाजारी, जमाखोरी, आवश्यक वस्तुओं की बाजार में कृत्रिम दुलर्भता, रोजमर्रा के कामों में मशीनों के बढ़ते हुए प्रयोग तथा जनसंख्या की तीव्र दर से वृद्धि के परिणामस्वरूप बेकारी की गंभीर समस्या की उत्पत्ति, विज्ञान तथा प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में विकास की दृष्टि से किये गये विभिन्न अविष्कार इत्यादि अनेकानेक कारणों से यह अनुभव किया गया कि आर्थिक नियोजन ही एक मात्र विकल्प है जो प्रत्येक व्यक्ति को एक न्यूनतम इच्छित जीवन स्तर का आश्वासन प्रदान कर सकता है।

आर्थिक नियोजन की परिभाषा

राबिन्स के मत में आर्थिक नियोजन उत्पादन तथा विनिमय की निजी क्रियाओं का सामूहिक नियंत्रण अथवा दमन हैं।

डिकिन्सन के अनुसार नियोजन का अर्थ ऐसे मुख्य आर्थिक निर्णय लेना है कि किस वस्तु का कितनी मात्रा में उत्पादन किया जाय, कब और कहां उत्पादन किया जाय और सम्पूर्ण अर्थव्यवस्था के व्यापक सर्वेक्षण के आधार पर निर्णय लेने वाले प्राधिकरण के विवेकपूर्ण निर्णय के अनुसार इस उत्पादन को किस प्रकार विभाजित किया जाय।

लेविस के अनुसार आर्थिक नियोजन के निम्नलिखित अर्थ निकाले जा सकते हैं:-

1. अधिकतर साहित्य ऐसा है जिसमें यह शब्द केवल संसाधनों, आवास या भवनों, और सिनेमाघरों तथा ऐसे ही अन्य साधनों के भौगोलिक क्षेत्रीयकरण से सम्बन्ध रखता है। कभी इसे नगर तथा ग्राम्य नियोजन और कभी नियोजन कहते हैं।
2. नियोजन का अर्थ यह निर्णय लेना है कि यदि सरकार के पास व्यय करने के लिए मुद्रा हो तो वह भविष्य में कितनी मुद्रा व्यय करेगी।
3. योजनाबद्ध अर्थव्यवस्था वह है जिसके अन्तर्गत उत्पादन की प्रत्येक इकाई केवल उन व्यक्तियों, वस्तुओं तथा उपकरणों के साधनों का प्रयोग करती है जो उसे कोटा द्वारा इसके लिए निश्चित कर दिये जाते हैं, और अपना उत्पाद केवल उन्हीं व्यक्तियों फर्मों को प्रदान करती है जो केन्द्रीय आदेश द्वारा निर्दिष्ट किये गये हैं।
4. कभी-कभी नियोजन का अर्थ सरकार द्वारा निजी अथवा सार्वजनिक उद्यम के लिए कुछ उत्पादन सम्बन्धी लक्ष्य निर्धारित करना होता है।

5. नियोजन के अन्तर्गत सम्पूर्ण अर्थव्यवस्था के लिए लक्ष्य निर्धारित किए जाते हैं जिनका उद्देश्य अर्थव्यवस्था की विभिन्न शाखाओं में सम्पूर्ण देश के श्रम, विदेशी मुद्रा, कच्चे माल तथा अन्य साधनों का विभाजन करना होता है।
6. कभी-कभी नियोजन शब्द का प्रयोग उन साधनों का वर्णन करने के लिए किया जाता है जिन्हें सरकार इसीलिए प्रयोग में लाती है कि पहले से निर्धारित कर दिये गये लक्ष्यों को निजी क्षेत्र के उद्यम पर लागू किया जा सके।

आर्थिक नियोजन के उद्देश्य

आर्थिक नियोजन का उद्देश्य मनुष्य के रहन-सहन के स्तर को ऊँचा उठाना, आर्थिक संसाधनों का समुचित प्रयोग करते हुए उनका बहुमुखी विकास करना, सुखी एवं समृद्ध जीवन की संभावना को बढ़ाना, देश में यातायात के साधनों का समुचित प्रबन्ध करना, घरेलू उद्योगों का विकास करना, ग्रामीण जीवन को समृद्ध बनाना तथा बाजारों का विस्तार करना है। सामान्यतया, आर्थिक नियोजन के निम्नलिखित उद्देश्य हैः-

1. आर्थिक उन्नति करना तथा आर्थिक संसाधनों में वृद्धि करना
2. कम से कम लागत से अधिक से अधिक उत्पादन करना
3. वस्तुओं, सेवाओं तथा अवसरों की मांग और पूर्ति के बीच समुचित संतुलन स्थापित करना।
4. रहन-सहन के स्तर को ऊँचा उठाना
5. यातायात के साधनों का समुचित विकास करना
6. घरेलू उद्योग धन्धों को प्रोत्साहित करना
7. ग्रामीण जीवन को सुखमय एवं समृद्धिपूर्ण बनाना
8. बाजारों का विस्तार करना।
9. निर्बल तथा शोश ण का सरलतापूर्वक शिकार बनने वाले व्यक्तियों को संरक्षण प्रदान करना।
10. एकाधिकार की प्रवृत्ति को रोकना
11. निर्धारित किये गये लक्ष्य से कम अथवा अधिक उत्पादन पर समुचित नियंत्रण लागू करना तथा
12. प्राकृतिक संसाधनों का विवेकपूर्ण एवं सावधानीपूर्ण समुचित उपयोग करना।

भारत में आर्थिक नियोजन के उद्देश्य

भारतीय संविधान के अन्तर्गत आर्थिक नियोजन के मूल उद्देश्यों का वर्णन राज्य नीति के निदेशक तत्वों के अधीन किया गया है जिनमें निम्नलिखित का उल्लेख है:-

- ऐसी समाजिक व्यवस्था का निर्माण करना जिसमें जीवन की सभी संस्थाओं में समाजिक-आर्थिक तथा राजनीति न्याय व्याप्त है
- स्त्रियों तथा पुरूषों दोनों को ही जीवन निर्वाह के समान अवसरों का आश्वासन प्रदान करना

- सभी लोगों के हितों को ध्यान में रखते हुए समाज के भौतिक संसाधनों के स्वामित्व एवं नियंत्रण का वितरण करना तथा
- अर्थव्यवस्था का निर्माण इस प्रकार करना कि धन तथा उत्पादन के संसाधनों का संकेन्द्रण न हो, तथा जन साधारण के हितों का संरक्षण हो सके।

स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् भारत की आर्थिक स्थिति गंभीर थी। परम्परागत कृषि संरचना के बोझ के नीचे ग्रामवासी दबे हुए थे। चारों ओर निर्धनता और अभाव का बोलबाला था। उस समय एक ही उपाय शेश रह गया था कि आर्थिक नियोजन की प्रक्रिया को अपना कर परम्परागत आर्थिक संरचना में तीव्रता से परिवर्तन किया जाय ताकि लोगों को उन्नत जीवन स्तर प्रदान किया जा सके। इसी पृष्ठभूमि में पंचवर्षीय योजनाओं के माध्यम से कृषि, उद्योग, व्यवसाय, उत्पादन तथा अन्य विविध क्षेत्रो में पहले से चली आ रही परम्परागत पद्धतियों को देश की परिस्थितियों के अनुकूल पद्धतियों द्वारा पुनस्थापित किया गया।

10.4 सामाजिक तथा आर्थिक नियोजन में सम्बन्ध (Interrelationship between Social and Economic Planning)

नियोजन की प्रक्रिया स्वयं में एक सम्पूर्ण प्रक्रिया है जो समाज के विविध पहलुओ में आवश्यक सामंजस्य स्थापित करते हुए उनका सर्वांगीण विकास करती है और इस प्रकार समाज में सुख, समृद्धि एवं शान्ति लाती है। नियोजन की प्रक्रिया प्राथमिकता के आधार पर निर्धारित की गयी आवश्यकताओं और वर्तमान समय में उपलब्ध अथवा भविष्य में उपलब्ध कराये जाने योग्य आन्तरिक तथा वाह्य संसाधनों के बीच सामंजस्य स्थापित करती है। ये संसाधन भौतिक तथा मानवीय दोनों प्रकार के होते हैं। भौतिक संसाधन मात्र साधन होते हैं। किन्तु मानवीय संसाधन प्राथमिक रूप से साध्य और द्वितीयक रूप से साधन होते हैं क्योंकि अन्ततोगत्वा नियोजन का उद्देश्य मानवमात्र को समृद्धि, सुख तथा शान्ति का आश्वासन प्रदान करना ही होता है। नियोजन मानवीय संसाधनों के विकास के लिए ही भौतिक तथा मानवीय दोनों प्रकार के संसाधनों का प्रयोग करता है। यह स्वतः स्पष्ट है कि मानवीय संसाधन भौतिक संसाधनों की तुलना में कहीं अधिक महत्वपूर्ण हैं क्योंकि भौतिक संसाधनों का प्रयोग मानव द्वारा ही मानव कल्याण हेतु किया जाता है। नियोजन की प्रक्रिया में मानवीय विचारों, मूल्यों, मनोवृत्तियों, विश्वासों एवं व्यवहारों तथा सामाजिक संरचना में विभिन्न स्थितियों एवं भूमिकाओं की क्रमबद्ध व्यवस्था भौतिक संसाधनों की तुलना में कहीं अधिक महत्वपूर्ण भूमिका प्रतिपादित करती है। मनुष्यों में पायी जाने वाली चेतना, उनकी सृजनात्मक क्षमता एवं एक सामाजिक संरचनाविशेष के अन्तर्गत निर्धारित मान्यता सम्बन्धी मानदण्डों का अनुपालन करते हुए उनके द्वारा किया गया व्यवहार नियोजन की दृष्टि से अत्यधिक महत्वपूर्ण स्थान रखते हैं।

प्रत्येक सामाजिक संरचना में सांस्कृतिक लक्ष्य और संरचनात्मक मान्यतायें पायी जाती हैं। सांस्कृतिक लक्ष्यों का अभिप्राय ऐसे लक्ष्यों से होता है जिन्हें प्राप्त करना आवश्यक समझा जाता है। संरचनात्मक मान्यताओं से अभिप्राय व्यवहार के उन मानदण्डों से होता है जिनके अनुपालन की अपेक्षा सामाजिक संरचना से सम्बन्धित व्यक्तियों से की जाती है। विभिन्न सांस्कृतिक लक्ष्यों की प्राप्ति संरचनात्मक मान्यताओं द्वारा की जाती है।

10.5 योजना आयोग (Planning)

भारत में योजना आयोग सर्वोच्च संस्था है जो सम्पूर्ण देश में नियोजन के लिए उत्तरदायी है। योजना आयोग का गठन 15 मार्च 1950 को किया गया था। योजना आयोग के अध्यक्ष प्रधानमंत्री होते हैं तथा इसमें 6-7 विभिन्न क्षेत्रों केविशेषज्ञ सदस्य होते हैं। वर्तमान समय मे योजना आयोग के उपाध्यक्ष के पद को पूर्ण कालिक

बनाते हुए इसे केन्द्रीय मंत्री के सामन स्तर पर घोषित किया गया है। वर्तमान समय में योजना आयोग में प्रधानमंत्री ''अध्यक्ष'', उपाध्यक्ष, उप प्रधानमंत्री, वित्तमंत्री तथा तीन मुख्य मंत्री पदेन सदस्य हैं तथा 9 पूर्ण कालिक सदस्य नामांकित किये गये हैं। योजना आयोग को संवैधानिक स्थिति प्रदान करते हुए एक पूर्णरूपेण स्वायत्त संगठन बनाने का प्रस्ताव है।

योजना आयोग प्रभागों तथा अनुभागों के माध्यम से कार्य करता है जिनका अध्यक्ष कोई वरिष्ठ अधिकारी होता है। योजना आयोग के विभिन्न विभागों को दो श्रेणियों में विभाजित किया जा सकता है।

- सामान्य प्रभाव, तथा
- विश म सम्बन्धी प्रभाग।

सामान्य प्रभाग

सामान्य प्रभाग निम्नलिखित हैः 1. आर्थिक प्रभाग, वित्तीय प्रभाग, विकास नीति प्रभाग, अन्तर्राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था सम्बन्धी सामाजिक आर्थिक शोध एककः 2. भावी योजना प्रभाग, 3. श्रम सेवायोजन तथा जन शक्ति प्रभाग, 4. सांख्यिकी तथा सर्वेक्षण प्रभाग, 5. बहुउद्देश्यीय प्रभाग, 6. परियोजनाव मूल्यांकन प्रभाग, 7. प्रबोधन एवं सूचना प्रभाग, 8. योजना समन्वय प्रभाग।

विषय सम्बन्धी प्रभाग

विषय सम्बन्धी प्रभागो के अंतर्गत 1. विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी प्रभाग, 2. कृषि प्रभाग, 3. ग्रामीण विकास प्रभाग, 4. सिंचाई एवं नियंत्रित क्षेत्र विकास प्रभाग, 5. विद्युत उर्जा प्रभाग, 6. उद्योग एवं खनिज प्रभाग, 7. ग्राम एवं लघु उद्योग प्रभाग, 8. परिवहन प्रभाग, 9. शिक्षा प्रभाग, 10. आवास, नगरीय विकास, एवं जल पूर्ति प्रभाग, 11. स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण प्रभाग, इत्यादि।

योजना आयोग के कार्य

योजना आयोग के निम्नलिखित कार्य है:-

1. देश के भौतिक संसाधनों और जनशक्ति ''तकनीकी व्यक्तियों सहित'' का अनुमान लगाना तथा राष्ट्र की आवश्यकताओं के अनुसार इन संसाधनों में होने वाली वृद्धि का पता लगाना।
2. देश के संसाधनों के संतुलित उपयोग के लिए प्रभावपूर्ण योजना बनाना।
3. योजना के कार्यान्वयन के विभिन्न चरणों का निर्धारण करना और तदनुसार संसाधनों का आवंटन करना।
4. आर्थिक विकास में आने वाली बाधाओं का निरूपण करना तथा योजना के सफल कार्यान्वयन हेतु अपेक्षित परिस्थतियों का निर्धारण करना।
5. योजना के प्रत्येक चरण के सफलतापूर्वक कार्यान्वयन के लिए आवश्यक तंत्रों के स्वरूप को निश्चित करना।
6. समय-समय पर योजना की चरणवार प्रगति का पुनरावलोकन करना तथा प्रभावपूर्ण कार्यान्वयन हेतु आवश्यक संस्तुतियां प्रदान करना।

7. आयोग के कार्यकलापों को अधिक प्रभावपूर्ण बनाने हेतु वर्तमान परिस्थितियों और विकास कार्यक्रमों को ध्यान में रखते हुए अन्तिम संस्तुतियां करना तथा केन्द्र एवं राज्यों की समस्याओं के समाधान के लिए आवश्यक परामर्श एवं सुझाव देना।

अन्य संगठन एवं संस्थाएं

योजना आयोग के अतिरिक्त अन्य अनेक संगठन तथा संस्थाएं योजनाओं के निर्माण तथा कार्यान्वयन से सम्बन्धित है जिनमें निम्नलिखित उल्लेखनीय है:-

राष्ट्रीय योजना परिषद

प्रत्येक योजना बनाते समय योजना आयोग एक राष्ट्रीय योजना परिषदका गठन करता है। यह परिषदयोजना सम्बन्धी समस्याओ का अध्ययन कर परामर्श देती है। इस परिषदमें वैज्ञानिक, इन्जीनियर, अर्थशास्त्री तथा अन्यविशेषज्ञ होते हैं जो अपने-अपने क्षेत्रों की समस्याओं का अध्ययन कर योजना आयोग के समझ अपने आलेख प्रस्तुत करते हैं।

राष्ट्रीय विकास परिषद

योजना आयोग और राज्यों के बीच समन्वय स्थापित करने के लिए राष्ट्रीय विकास परिषद का गठन किया गया है। किसी भी योजना को लोक सभा में प्रस्तुत करने के पूर्व राष्ट्रीय विकास परिषद द्वारा इसका अनुमोदन आवश्यक होता है। राष्ट्रीय विकास परिषदमें प्रधानमंत्री, केन्द्रीयमंत्री, सभी राज्यों के मुख्यमंत्री तथा योजना आयोग के सदस्य होते हैं।

शोध कार्यक्रम समिति

पहली पंचवर्षीय योजना के निर्माण के समय योजना आयोग द्वारा गठित यह समिति विभिन्न विश्वविद्यालयों एवं शोध संस्थाओं जैसे भारतीय मानव संस्था, राष्ट्रीय व्यावहारिक अर्थशास्त्र शोध परिषद, भारतीय आर्थिक अभिवृद्धि संस्थान इत्यादि को विकास के प्रशासकीय, सामाजिक एवं आर्थिक पहलुओं पर शोध करने के लिए वित्तीय सहायता प्रदान करती हैं।

परामर्शदात्री दल

योजना आयोग को सलाह देने के लिए परामर्शदात्री दल अथवाविशेषज्ञ दल का गठन किया जाता है जो विभिन्न नीतियों एवं कार्यक्रमों के बारे में सलाह देता है। संसद सदस्यों की सलाहकार समिति भी योजना आयोग को परामर्श देती है। निजी क्षेत्र में फेडरेशन आफ चैम्बर्स ऑफ कामर्स एण्ड इण्डस्ट्रीज, द असोशियेटेड चैम्बर्स ऑफ कामर्स ऑफ इण्डिया, आल इण्डिया मैनुफैक्चरर्स आर्गनाईजेशन से परामर्श किया जाता है।

सम्बद्ध दल

कुछ सम्बद्ध दल भी नियोजन में सहायता प्रदान करते हैं। उदाहरणार्थ, विभिन्न केन्द्रीय मंत्रालय, भारतीय रिजर्व बैंक का अर्थशास्त्र विभाग, केन्द्रीय सांख्यिकीय संगठन। योजना आयोग इन सम्बन्द्ध दलों से विभिन्न विषयों से सम्बन्धित अध्ययन करवाता है। केन्द्रीय सांख्यिकीय संगठन विस्तृत आंकड़े एकत्रित करते हुए योजना के निर्माण में सहायता करता है।

कार्यकारी समूह

योजना आयोग समय-समय पर विभिन्न कार्यकारी समूहों को नियुक्त करता है। ये दल विभिन्न विषयों पर अपनी रिपोर्ट प्रस्तुत करते हैं जिनके आधार पर योजना का निर्माण किया जाता है।

मूल्यांकन समितियां

योजना के कार्यान्वयन का मूल्यांकन करने हेतु योजना आयोग मूल्यांकन समितियों का गठन करता है ताकि की गयी प्रगति तथा मार्ग में आने वाली व्यवधानों की समुचित समीक्षा की जा सके।

10.6 योजनाओं सम्बन्धी प्रस्तावों का निर्माण (Formation of Planning Related Proposals)

योजना आयोग के तकनीकी विभागों में योजनाओं का निर्माण किया जाता है लेकिन ये विभाग स्वयं कोई प्रस्ताव नहीं बनाते। नियोजन की प्रक्रिया में विभिन्न विभागों से सम्बन्धित केन्द्रीय मंत्रालय प्रत्यक्ष रूप से भाग लेते हैं। सामान्यतया, सर्वप्रथम कार्यकारी समूहों का गठन किया जाता है जिसमें सम्बन्धित मंत्रालय के प्रतिनिधि, योजना आयोग का तकनीकी विभाग तथाविशेषज्ञ अवैतनिक सदस्य पाये जाते हैं। ये दल विभिन्न योजनाओं की क्रियाओं का मूल्यांकन करते हैं, पहले से चल रही योजना की कमियों का पता लगाते हैं, राज्य सरकारों से परामर्श लेते हैं, तथा एकत्रित की गयी सूचनाओं के आधार पर प्रस्तावों को तैयार करते हुए प्रस्तुत करते हैं।

विभिन्न कार्यकारी दलों द्वारा तैयार किये गये प्रस्तावों को एकत्रित कर इनमें काट-छांट की जाती है और पूर्व निर्धारित प्राथमिकताओं के आधार पर इनको व्यवस्थित किया जाता है। यह कार्य विभाग के अध्यक्षों, सचिव तथा उपसचिव और योजना आयोग के उच्च अधिकारियों द्वारा विभिन्न स्तरों पर सम्पादित किया जाता है।

10.7 नियोजन में समन्वय की समस्या (Problems of Coordination in Planning)

राष्ट्रीय स्तर पर नियोजन से सम्बन्धित संस्थाओं में समन्वय की समस्या दिन-प्रतिदिन बढ़ती जा रही है। उन संस्थाओं तथा विभागों के बीच जो योजना के कार्यान्वयन के लिए उत्तरदायी है, समन्वय का अभाव है। समान सेवाओं के क्षेत्र में भी कमी स्पष्ट रूप से दिखायी देती है। इसके लिए दो कारण उत्तरदायी है। **1.** समाज सेवाओं के अन्तर्गत सम्मिलित किये जाने वाले अधिकतर विषय राज्य सरकारों के अन्तर्गत आते हैं और कुछ विषय स्थानीय निकायों के अधीन तथा **2.** योजनाओं को कार्यान्वित करने वाली अनेक संस्थायें स्वैच्छिक होने के कारण योजना से सम्बन्धित सरकारी प्रयासों के क्षेत्र में केन्द्र तथा राज्य/संघीय सरकारों के बीच समन्वय की समस्या आती है।

राष्ट्रीय स्तर पर प्राथमिकताओं के सम्बन्ध में सहमति हो जाने पर राज्य सरकारों को सम्पूर्ण साधनों से एक निश्चित अंश आवंटित कर दिया जाता है और इसके आधार पर राज्य सरकारों को अपनी-अपनी योजनाएं बनाने के लिए कहा जाता है।

सरकारी तथा स्वैच्छिक संस्थाओं के बीच समन्वय की समस्या भी गंभीर है। इसके समाधान के लिए योजना आयोग तीन प्रकार के उपाय अपनाता है: 1. नियोजन की प्रक्रिया में स्वैच्छिक संस्थाओं का सहयोग लेना; 2. कुछ कार्यक्रमों को स्वैच्छिक संस्थाओं द्वारा कार्यान्वित किये जाने हेतु आवंटित करना; तथा 3. स्वैच्छिक संस्थाओं को अनुदान देना। योजना निर्माण के स्तर पर स्वैच्छिक संस्थाओं के प्रतिनिधियों को विभिन्न समितियों में कार्य करने के लिए आमंत्रित किया जाता है। इसके अतिरिक्त जन सहयोग सलाहकार समिति में भी स्वैच्छिक संस्थाओं के प्रतिनिधि होते हैं।

10.8 योजना सम्बन्धी अनुवर्तन तथा मूल्यांकन (Evaluation and Followup Related to Planning)

योजना आयोग का कार्यक्रम प्रशासन योजना के लक्ष्यों की प्राप्ति का मूल्यांकन करता है। यह प्रभाग केन्द्रीय सरकार के विभिन्न मंत्रालयों से अनवरत् सम्पर्क बनाये रखते हैं और केन्द्रीय मंत्रालय राज्य मंत्रालयों से निरन्तर सम्पर्क बनाये रखते है। योजना आयोग का तकनीकी प्रभाग भी प्रगति का लेखा-जोखा रखता है तथा उन समस्याओं पर प्रकाश डालता है जो योजना के कार्यान्वयन के मार्ग में अवरोध उत्पन्न करती है। यद्यपि योजना 5 वर्षों के लिए बनायी जाती है किन्तु इससे सम्बन्धित वित्तीय स्वीकृति वार्षिक आधार पर प्रदान की जाती है। केन्द्रीय तथा राज्य सरकारों के प्रतिनिधि एवं योजना आयोग के सदस्य हर साल वार्षिक योजना पर विचार-विमर्श करते हैं और इस बात का मूल्यांकन करते हैं कि विगत वर्ष में प्रदान की गयी वित्तीय स्वीकृति का उपयोग तथा निर्धारित लक्ष्यों की प्राप्ति किस सीमा तक की गयी है।

योजना आयोग समय-समय पर बैठकें बुलाता रहता है ताकि राज्य सरकारों से समुचित विचार विमर्श हो सके। तीसरे वर्ष योजना की उपलब्धियों तथा कमियों काविशेषरूप से मूल्यांकन किया जाता है और तदनुसार वित्तीय सहायता का पुनर्निर्धारण और प्राथमिकताओं में परिवर्तन किया जाता है। इस मध्यावधि मूल्यांकन में योजना आयोग तथा राष्ट्रीय विकास परिषदके सदस्य भाग लेते हैं।

योजना के अन्तर्गत चलायी गयी परियोजनाओं से सम्बन्धित समिति तथा कार्यक्रम मूल्यांकन संगठन भी मूल्यांकन में योजना आयोग की सहायता करते हैं। राष्ट्रीय विकास परिषदद्वारा नियुक्त परियोजना सम्बन्धी समिति में केन्द्रीय मंत्रिमण्डल के प्रतिनिधि, राज्यों के मुख्यमंत्री तथा संसद के प्रतिनिधि पाये जाते हैं। यह समिति अध्ययन समूहों को नियुक्त करते हुये किसी एक क्षेत्रविशेष में किये जा रहे कार्यों की समीक्षा करती है और उन उपायों की संस्तुति करती है जिनके माध्यम से कार्य में संतोश जनक प्रगति की जा सकती है। इस समिति द्वारा प्रस्तुत किये गये प्रतिवेदन पर राष्ट्रीय विकास परिषदतथा योजना आयोग विचार विमर्श करते हैं और आवश्यकता का अनुभव होने पर नीतियों में आवश्यक परिवर्तन भी करते हैं। कार्यक्रम मूल्यांकन संगठन मूलतः शोध कार्य करता है।

10.9 प्रभावपूर्ण सुझाव (effective Suggestions)

सामाजिक नियोजन की प्रचालनात्मक संरचना को प्रभावपूर्ण बनाने हेतु प्रभावपूर्ण सुझाव निम्नलिखित है:-

1. योजना आयोग के संगठन मे परिवर्तन करते हुए इसे पूर्णरूपेण एक गैर राजनीतिक परामर्शदात्री संस्था का स्वरूप प्रदान किया जाय। योजना आयोग में मंत्री नहीं सम्मिलित होने चाहिए। इसके अध्यक्ष, उपाध्यक्ष एवं सभी सदस्य विषयविशेषज्ञ होने चाहिए।
2. केन्द्रीय मंत्रियों द्वारा अपने-अपने विभागों की योजना बनाकर आयोग को प्रस्तुत की जानी चाहिए।
3. योजना का विकेन्द्रीकरण किया जाना चाहिए। गांव तथा मुहल्ले को इकाई मानकर सर्वप्रथम इस इकाई स्तर पर, तत्पश्चात् जिला स्तर पर, तत्पश्चात् राज्य स्तर पर और अन्तिम रूप से केन्द्र स्तर पर योजनाव का निर्माण किया जाना चाहिए।
4. योजना आयोग द्वारा प्रत्येक क्षेत्र तथा स्तर से प्रस्तावित की गयी योजनाओं का अध्ययन करने के पश्चात् समन्वित योजना तैयार की जानी चाहिए और इस पर केन्द्रीय मंत्रिमण्डल में विचार-

विमर्श कराने के उपरान्त अन्तिम निर्णय लिया जाना चाहिए। किसी भी क्षेत्र में किसी भी स्तर से प्रस्तावित योजना में की जाने वाली कटौती के कारण स्पष्ट किये जाने चाहिए।

5. केन्द्र सरकार द्वारा उन विषयों के बारे में जो केन्द्र सूची में उल्लिखित विषय है तथा राज्य सरकारों द्वारा उन विषयों पर जो राज्य सूची में उल्लिखित है तथा केन्द्र तथा राज्य दोनों सरकारों द्वारा सम्मिलित रूप से उन विषयों पर जो समवर्ती सूची में उल्लिखित है, योजना का निर्माण किया जाना चाहिए।

6. योजना निर्माण के प्रत्येक स्तर पर सर्व साधारण से सुझाव मागतें हुए जन प्रतिनिधियों द्वाराविशेषज्ञों के सहयोग से योजना का निर्माण किया जाना चाहिए। योजना का मूल्यांकन करते समय भी जनप्रतिनिधियों को सम्मिलित किया जाना चाहिए।

10.10 सामाजिक नियोजन एवं पंचवर्षीय योजनाएं (Social Planning & Five Year Plan)

महान् अर्थशास्त्री एम. विश्वेश्वरैया ने 1934 में अपनी पुस्तक 'प्लान्ड इकॉनोमी' प्रकाशित करते हुये भारत में नियोजित सामाजिक-आर्थिक विकास की आधार शिला रखी। 1937 में भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस ने भारत की परिस्थितियों के अनुरूप नियोजन के मसले पर विचार-विमर्श किया। 1938 में जब सुभाश चन्द्र बोस भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के अध्यक्ष बने, उन्होंने उपयुक्त नियोजन के माध्यम से सामाजिक-आर्थिक विकास के प्रोत्साहित किये जाने के लिये राष्ट्रीय नियोजन समिति बनाई। 1944 में अंग्रेजी सरकार द्वारा नियोजन तथा विकास विभाग खोला गया। 1945 में औद्योगिक नीति की घोषणा की गयी। 1946 में कांग्रेस-लीग मंत्रालय ने नियोजन तथा विकास विभाग को समाप्त कर सलाहकार नियोजन बोर्ड गठित किया। स्वतंत्रता मिलने पर भारतीय संविधान के लागू किये जाने के बाद भारत एक सम्प्रभुतापूर्ण प्रजातांत्रिक गणतंत्र बना। 1977 में संविधान में आवश्यकसंषोधन करते हुये इसे सम्प्रभुतापूर्ण, समाजवादी, धर्म निरपेक्ष, प्रजातांत्रिक गणतंत्र घोषित किया गया। आर्थिक तथा सामाजिक नियोजन को भारतीय संविधान की सातवीं अनुसूची में केन्द्रीय सूची के अन्तर्गत रखा गया है; और इसके राज्य नीति के निदेश क सिद्धान्तों के अधीन भारतीय समाज के विकास की विस्तृत रूपरेखा प्रस्तुत की गयी जिसका विवरण पहले ही दिया जा चुका है।

भारत में सामाजिक-आर्थिक विकास को प्रोत्साहित करने के लिये पंचवर्षीय योजनाओं का प्रारम्भ 1951 से किया गया। इन पंचवर्षीय योजनाओं का मूल उद्देश्य तीव्र और अनवरत आर्थिक विकास करना तथा आय और सम्पत्ति में पायी जाने वाली विश मताओं को अत्यधिक प्रभावपूर्ण एवं सन्तुलित रूप से कम करते हुये सेवायोजन के अवसरों में वृद्धि करना था ताकि आर्थिक श क्ति पर एकाधिकार में कमीं की जा सके और देश को प्रत्येक दृष्टि से आत्मनिर्भर बनाया जा सके। पंचवर्षीय योजनाओं में मिश्रित अर्थव्यवस्था को अपनाया गया जिसके अधीन सार्वजनिक तथा निजी दोनों क्षेत्रों को एक दूसरे के पूरक के रूप में स्वीकार किया गया। बुनियादी एवं भारी उद्योगों जिनमें अधिक पूँजी निवेश की आवश्यकता है, के प्रोत्साहन का उत्तरदायित्व सार्वजनिक क्षेत्र पर डाला गया और लोगों की आवश्यकताओं एवं आकांक्षाओं की पूर्ति के लिये आवश्यक व्यवस्था करने का उत्तरदायित्व निजी क्षेत्र पर डाला गया। इन पंचवर्षीय योजनाओं के अन्तर्गत सामाजिक एवं निजी हितों के बीच आवश्यकसामंजस्य स्थापित करने का प्रयास किया गया है।

विभिन्न पंचवर्षीय योजनाओं के अन्तर्गत किये गये महत्वपूर्ण प्रावधानों का योजनावार विवरण इस प्रकार है:-

पहली पंचवर्षीय योजना (1951-56)

योजना आयोग के अनुसार पहली पंचवर्षीय योजना के दो प्रमुख उद्देश्य थे:

- युद्ध तथा विभाजन के कारण अर्थव्यवस्था में उत्पन्न हुये असन्तुलन को ठीक करना; एवं
- भावी अर्थव्यवस्था के सर्वतोन्मुखी संतुलित विकास की प्रक्रिया को प्रारम्भ करना। इन मौलिक उद्देष्यों के अतिरिक्त खाद्य एवं कच्चे माल के उत्पादन में वृद्धि करना; ऐसी योजनाओं को कार्यान्वित करना जो आर्थिक स्थिति को सुदृढ़ बनायें तथा सेवायोजन के अवसरों में वृद्धि करें; अधिक बड़े स्तर पर समाज सेवाओं का विस्तार करना; तथा विकास कार्यक्रमों को आयोजित करने के लिये आवश्यकमषीनों की व्यवस्था करना भी योजना का उद्देश्यथा।

प्रारम्भ में सार्वजनिक क्षेत्र के लिये 2069 करोड़ रुपये के परिव्यय की परिकल्पना की गयी थी जिसे अन्ततः बढ़ाकर 2378 करोड़ रुपये कर दिया गया किन्तु वास्तविक व्यय 1960 करोड़ रुपये ही रहा और इस प्रकार यह मौलिक अनुमान से भी कम रहा। इस योजना में कृड्ढि तथा सामुदायिक विकास पर 291 करोड़ (15 प्रतिशत), सिंचाई पर 310 करोड़ (16 प्रतिशत), बिजली पर 260 करोड़ (13 प्रतिशत), ग्रामीण तथा लघु उद्योगों पर 45 करोड़ (2 प्रतिशत), परिवहन तथा संचार पर 523 करोड़ (27 प्रतिशत) तथा समाज सेवाओं पर 459 करोड़ (23 प्रतिशत) रूपये खर्च किये गये।

पहली योजना की अवधि में राष्ट्रीय आय 9110 करोड़ रुपये से बढ़कर 10800 करोड़ रूपये हो गयी; और इस प्रकार राष्ट्रीय आय में इस योजना काल में 18 प्रतिशत की वृद्धि हुयी। इसी योजना काल में 2 अक्टूबर, 1953 को सामुदायिक विकास तथा राष्ट्रीय प्रसार सेवायें प्रारम्भ की गयीं; तथा 1953 में केन्द्रीय समाज कल्याण बोर्ड का गठन किया गया।

यद्यपि इस योजनाकाल में पर्याप्त प्रगति हुयी फिर भी देश की समस्याओं और आवश्यकताओं की दृष्टि में यह कहीं कम थी। केवल 0.45 करोड़ लोगों को ही सेवायोजन मिल सका; भारी उद्योग भी पर्याप्त संख्या में स्थापित नहीं हो पाये; षिक्षा के क्षेत्र में भी प्रगति संतोश जनक नहीं हो सकी; तथा जन सहभागिता प्राप्त नहीं हो पायी।

दूसरी पंचवर्षीय योजना (1956-61)

दूसरी पंचवर्षीय योजना का प्रमुख उद्देश्य समाज के समाजवादी ढाँचे की स्थापना करना और इसके लिये राष्ट्रीय आय में वृद्धि करना; तेजी से औद्योगीकरण करना तथा भारी उद्योगों का विकास करना; रोजगार के अवसरों में वृद्धि करना; आय तथा धन की असमानताओं को कम करना तथा आर्थिक श क्ति का विकेन्द्रीकरण करना था। यह योजना मूलतः 'सिंचाई तथा परिवहन' योजना थी। इसमें प्रारम्भिक विकास सम्बन्धी परिव्यय सार्वजनिक क्षेत्र में 4800 करोड़श्रुपये तथा निजी क्षेत्र में 2400 करोड़ रुपये था। इसमें वास्तविक सार्वजनिक निवेश 4600 करोड़ तथा निजी निवेश 2150 करोड़ (कुल निवेश 6750 करोड़) रुपये रहा।

इस योजना का लक्ष्य 5 प्रतिशत वाड्ढिक वृद्धि करना, 10 करोड़ लोगों को अतिरिक्त रोजगार प्रदान करना तथा औद्योगीकरण को प्रोत्साहित करना था। इस योजना काल में राष्ट्रीय आय में निर्धारित 25 प्रतिशत के स्थान पर केवल 29 प्रतिशत की वृद्धि हुयी। इस योजना की अवधि में पूँजीपति अधिक सुदृढ़ हुये और मूल्यों में पर्याप्त वृद्धि हुयी।

तीसरी पंचवर्षीय योजना (1961-1966)

तीसरी पंचवर्षीय योजना के निम्नलिखित लक्ष्य थे:

5 राष्ट्रीय आय में प्रतिवर्ष 5 प्रतिशत से अधिक वृद्धि करना तथा निवेश की ऐसी संरचना का निर्माण करना जिससे भावी योजनाओं में वृद्धि की दर न गिर सके;

1. खाद्यान्नों के क्षेत्र में आत्मनिर्भर होना तथा कृषि उत्पादन को बढ़ाना;
2. आधारभूत उद्योगों का विस्तार करना तथा मशीनों के निर्माण के लिये आवश्यक दक्षता को उपलब्ध कराना;
3. देश में उपलब्ध जनशक्ति का यथासम्भव अधिक से अधिक उपयोग करना एवं सेवायोजन के अवसरों में वृद्धि करना, तथा
4. अवसरों को और अधिक समानता को लगातार बढ़ाना, आय तथा धन की असमानताओं को कम करना तथा आर्थिक शक्ति का अधिक समानता के साथ वितरण करना।

इन उद्देश्यों की प्राप्ति के लिये अनुमानित 7500 करोड़ रुपये का परिव्यय तथा निजी क्षेत्र के लिये 4100 करोड़ रुपये के निवेश का निर्धारण किया गया। अन्तिम रूप से 10,400 करोड़ रुपये की कुल धनराशि निर्धारित की गयी जो दूसरी पंचवर्षीय योजना की तुलना में 54 प्रतिशत अधिक थी।

इस योजना की अवधि में औद्योगिक क्षेत्र, कृषि,साधारण शिक्षा एवं सेवायोजन के क्षेत्र में कोईविशेष प्रगति नहीं हुई। तकनीकी शिक्षा की प्रगति अवश्य उत्साहवर्द्धक रही। चिकित्सा, जनस्वास्थ्य, परिवार नियोजन, पिछड़े वर्गों अथवा जन जातियों के कल्याण एवं औद्योगिक श्रमिकों और निम्न आय समूहों के लिये आवास का प्रावधान करने में भी कुछ प्रगति हुयी।

तीन वार्षिक योजनायें (1966-67, 1967-68 तथा 1968-69)

तीसरी पंचवर्षीय योजना 31 मार्च,1966 को समाप्त हो गयी किन्तु दुर्भाग्य से चोथीपंचवर्षीय योजना इस क्रम में न बन सकी। आन्तरिक अवधि में वार्षिक योजनायें चलाते हुये योजनाबद्ध विकास को आगे बढ़ाया गया। सितम्बर 1967 में योजना आयोग को पुनर्गठित किया गया जिससे यह निर्णय लिया कि चोथीपंचवर्षीय योजना 1969-70 से प्रारम्भ की जाय। इस प्रकार तीसरी योजना की समाप्ति एवं चोथीयोजना के प्रारम्भ के बीच तीन वार्षिक योजनायें चलायी गयीं। इसका लक्ष्य अर्थव्यवस्था की उन कठिनाइयों को दूर करना था जो तीसरी योजना की अवधि के दौरान कुछ महत्वपूर्ण घटनाओं तथा भारत-पाक युद्ध इत्यादि के परिणामस्वरूप उत्पन्न हो गयी थीं। इन वार्षिक योजनाओं में कृषि तथा इससे सम्बद्ध क्षेत्रों पर 1107.1 करोड़ (16.7 प्रतिशत), सिंचाई तथा बाढ़ नियंत्रण पर 471 करोड़ (7.12 प्रतिशत), बिजली पर 1212.5 करोड़ (18.3 प्रतिशत), खाद्य तथा लघु उद्योग पर 126.1 करोड़ (1.9 प्रतिशत), उद्योग तथा खनिज पर 1510.4 करोड़ (22.8 प्रतिशत), परिवाहन तथा संचार पर 1222.4 करोड़ (18.5 प्रतिशत) तथा समाज सेवाओं एवं अन्य पर 975.9 करोड़ (14.72 प्रतिशत) का परिव्यय निश्चित किया गया था। इस प्रकार इन वार्षिक योजनाओं का कुल परिव्यय 6625.4 करोड़ रुपये था। इन तीनों वार्षिक योजनाओं की अवधि में अर्थव्यवस्था अधिक सुदृढ़ हुयी, कृषि उत्पादन भी बढ़ा और राष्ट्रीय आय में 1.1 प्रतिशत की वृद्धि हुयी।

चौथी पंचवर्षीय योजना (1969-74)

चोथीपंचवर्षीय योजना का उद्देश्य समाजवादी समाज की स्थापना तथा देश को सामाजिक न्याय की ओर अग्रसारित करना था। इसका मूल ध्येय लोगों के जीवन में ऐसे ढंगों के माध्यम से तीव्र गति से वृद्धि करना था जो

सामाजिक समानता तथा न्याय को प्रोत्साहित करें। चोथीयोजना में कुल परिव्यय 16,000 करोड़ रुपये का था। इसके विशिष्ट उद्देश्य निम्नलिखित थे:-

1. कृषि तथा औद्योगिक उत्पादों कोविशेष महत्व प्रदान करना ताकि आयात में कमी हो एवं निर्यात बढ़े और शीघ्रातिशीघ्र आत्म निर्भरता प्राप्त की जा सके।
2. मूल्यों को स्थिर रखना, घाटे की व्यवस्था को समाप्त करना तथा दबावों से बचना।
3. कृषि के क्षेत्र में उत्पादन को बढ़ाना ताकि ग्रामीण जनता की आय में वृद्धि हो तथा खाद्यान्न और कच्चे माल की कमी न रह सके।
4. जनसाधारण के उपभोग की वस्तुओं के उत्पादन में वृद्धि करना ताकि कपड़ा, चीनी, दवायें, मिट्टी का तेल, कागज इत्यादि जैसी आवश्यक वस्तुओं की कमी न रहे।
5. पहले से ही चल रही धातु, मशीनों, साधनों, शक्ति एवं यातायात संबंधी योजनाओं को समय से पूरा करना तथा ऐसी योजनाओं को प्रारम्भ करना जो आम समुदाय के जीवन स्तर को ऊँचा उठा सकें, आत्मनिर्भर बना सकें तथा तीव्र गति से आर्थिक वृद्धि करा सकें।
6. सम्पूर्ण देश में परिवार नियोजन का विस्तार करना ताकि जनसंख्या वृद्धि में कमी हो सके और जनता का जीवन स्तर भी ऊँचा उठ सके तथा बच्चों की शिक्षा-दीक्षा एवं लालन-पालन ठीक से हो सके।
7. रासायनिक खादों, कीटनाशकों तथा कृषि में प्रयोग में लाये जाने वाले यंत्रों तथा पम्प सेटों, डीजल इन्जनों, टैक्टरों इत्यादि की व्यवस्था करना।
8. मानव संसाधनों के विकास के लिये आवश्यक अतिरिक्त सुविधायें प्रदान करना।

इन उद्देश्यों की प्राप्ति के लिये यह निश्चित किया गया कि:-

(1) 5 प्रतिशत प्रति वर्ष वृद्धि दर हो ;

(2) कृषि में 5.6 प्रतिशत की वार्षिक वृद्धि दर हो ;

(3) 1970-71 के पश्चात् पी. एल. 480 के अन्तर्गत खाद्यान्नों का आयात न किया जाय; तथा

(4) उद्योग में 8 से 10 प्रतिशत वार्षिक वृद्धि दर हो तथा निर्यातों को 7 प्रतिशत प्रतिवर्ष की दर से बढ़ाया जाय और अखाद्य सामग्री के आयात को 5 प्रतिशत की दर से घटाया जाय।

इस योजना की अवधि में कृषि की वार्षिक वृद्धि दर 2.8 प्रतिशत ही हो पायी। उद्योग की वार्षिक वृद्धि दर भी 3.9 प्रतिशत ही हो पायी। अर्थव्यवस्था की वार्षिक वृद्धि दर 3.3 प्रतिशत तथा प्रति व्यक्ति आय की वार्षिक वृद्धि दर 1.2 प्रतिशत तक ही पहुँच पायी। इस योजना की उपलब्धियाँ निर्धारित किये गये लक्ष्यों की प्राप्ति की दृष्टि से प्रत्येक क्षेत्र में कम रहीं।

पाँचवी पंचवर्षीय योजना (1974-78)

पाँचवी पंचवर्षीय योजना के दो प्रमुख उद्देश्य निर्धनता को दूर करना तथा आत्मनिर्भरता को प्राप्त करने थे।विशेष रूप से इसका उद्देश्य कृषि तथा उद्योग के क्षेत्र में उत्पादकता में वृद्धि करना तथा सार्वजनिक क्षेत्र को सुदृढ़ बनाते हुये आर्थिक शक्ति के संकेन्द्रण को कम करना; तथा निर्धनता को कम करने के लिये न्यूनतम

आवश्यकता कार्यक्रम के माध्यम से समाज के विभिन्न क्षेत्रों एवं श्रेणियों के व्यक्तियों के लिये उपभोग के एक न्यूनतम स्तर का आश्वासन प्रदान करना था। इस योजना काल में चलाये गये न्यूनतम आवश्यकता कार्यक्रम के अधीन 14 वर्ष तक की आयु के बच्चों को उनके घरों के पास प्राथमिक शिक्षा की सुविधायें प्रदान करने, सभी क्षेत्रों में एक न्यूनतम स्तर की समान सामुदायिक स्वास्थ्य सेवाओं को प्रदान करने, अत्यधिक कमी वाले गाँवों में पेयजल की पूर्ति करने, 1500 अथवा उससे अधिक की जनसंख्या वाले गाँवों में सड़कों का निर्माण करने, भूमिहीन श्रमिकों को आवास के लिये विकसित भूखण्ड प्रदान करने, मलिन बस्तियों के पर्यावरण में सुधार करने तथा ग्रामीण विद्युतीकरण का प्रसार करने का प्रावधान किया गया। इस योजना में कुल परिव्यय 37250 करोड़ रुपये का था।

इस योजना की अवधि में औसत वार्षिक वृद्धिदर 5.2 प्रतिशत आयी जो पहले की सभी योजनाओं से अधिक थी। किन्तु जनसंख्या वृद्धि की दर अधिक होने के कारण प्रति व्यक्ति आय की वृद्धि दर 2.29 प्रतिशत ही रही। कृषि उत्पादन में वृद्धि की दर 4.58 प्रतिशत रही जो 6.2 प्रतिशत के निर्धारित लक्ष्य से कम थी। औद्योगिक उत्पादन की वृद्धि दर 6.2 प्रतिशत के निर्धारित लक्ष्य के बराबर रही। यद्यपि इस योजना काल में सम्पूर्ण अर्थव्यवस्था की निष्पत्ति सन्तोश जनक थी, फिर भी निर्धनता और बेकारी की महत्वपूर्ण समस्याओं के समाधान की दिशा में सन्तोश जनक प्रगति नहीं हो पायी। पाँचवी पंचवर्षीय योजना का कार्यकाल 1974 से 1978 के मध्य रहा।

छठीं पंचवर्षीय योजना (1980-85)

छठीं पंचवर्षीय योजना फरवरी 1981 में प्रकाशित हुयी इसके अन्तर्गत कुल 172210 करोड़ रुपये का परिव्यय रखा गया जिसमें सार्वजनिक क्षेत्र में परिव्यय की धनराशि 97500 करोड़ रुपये तथा निजी क्षेत्र में 74710 करोड़ रुपये थी। आर्थिक वृद्धि दर का लक्ष्य 5.2 प्रतिशत तथा प्रति व्यक्ति आय में वृद्धि दर का लक्ष्य 3.3 प्रतिशत रखा गया।

इस योजना के निम्नलिखित उद्देश्य थे:-

1. निर्धनता तथा बेकारी को कम करना;
2. अर्थव्यवस्था की वृद्धि दर को बढ़ाना तथा संसाधनों के उपयोग में दक्षता लाना और उत्पादकता में सुधार करना;
3. आर्थिक तथा प्रौद्योगिक आत्मनिर्भरता प्राप्त करने के लिये आद्दुनिकीकरण को और अधिक प्रोत्साहन प्रदान करना;
4. ऊर्जा के गैर-परम्परागत स्त्रोतों का तीव्रगति से विकास करना;
5. आर्थिक तथा सामाजिक दृष्टि से अक्षम जनसंख्या कोविशेष रुप से ध्यान में रखते हुये न्यूनतम आवश्यकता कार्यक्रम के माध्यम से लोगों के जीवन स्तर में सुधार करना;
6. निर्धनों के पक्ष में सार्वजनिक नीतियों एवं सेवाओं को पुनर्वितरण की दृष्टि से सुदृढ़ करना ताकि आय तथा धन की असमानतायें दूर हो सकें;
7. विकास की प्रगति एवं प्रौद्योगिक उपलब्धियों के प्रसार के क्षेत्र में प्रादेशिक असमानताओं को अनवरत रुप से कम करना;

8. जनसंख्या वृद्धि को नियंत्रित करने के लिये ऐसी नीतियों को प्रोत्साहित करना जिनके परिणामस्वरूप लोग स्वेच्छापूर्वक छोटे परिवार के आदर्श को स्वतः अपना लें;

9. पारिस्थितिकी एवं पर्यावरणात्मक परिसम्पत्ति के संरक्षण तथा विकास को प्रोत्साहित करना; तथा

10. समुचित शिक्षा, संचार तथा संस्थागत नीतियों के माध्यम से सभी वर्गों के लोगों को विकास की प्रक्रिया में सक्रिय रूप से सम्मिलित कराना।

इसी योजनाकाल में ग्रामीण अंचलों में निर्धनता को दूर करने के लिये समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम तथा राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार प्रारम्भ किये गये। इस योजना काल में आशातीत सफलता प्राप्त हुयी। आर्थिक स्थायित्व आया तथा वृद्धि एवं विकास की गति तीव्र हुयी। कृषि के क्षेत्र में 3.8 प्रतिशत प्रतिवर्ष की दर से तथा कुल मिलाकर 5.2 प्रतिशत की दर से वृद्धि हुयी।

सातवीं पंचवर्षीय योजना (1985-1990)

सातवीं पंचवर्षीय योजना तैयार करने से पहले योजना आयोग ने इससे सम्बन्धित नीति पत्र तैयार किया था जिसमें यह स्पष्ट कर दिया गया था कि इस योजना में आर्थिक-सामाजिक आत्मनिर्भरता पर सबसे अधिक बल दिया जायेगा। इस योजना में लक्ष्य के रूप में विकास की दर 5.00 प्रतिशत, औद्योगिक विकास की दर 7.00 प्रतिशत तथा कृषि सम्बन्धी विकास दर 4.00 प्रतिशत रखी गयी थी। इस योजना में तीन प्रमुख उद्देश्य रखे गये: (1) खाद्यान्न उत्पादन में वृद्धि करना; (2) सेवायोजन के अवसरों को बढ़ाना; तथा (3) उत्पादकता में वृद्धि करना। खाद्यान्न उत्पादन बढ़ाने के लिये 'सघन खेती' पर बल दिया गया और इसे सफल बनाने के लिये अधिक से अधिक सिंचाई सुविधायें प्रदान करने तथा छोटे किसानों को कृषि सम्बन्धी नई प्रौद्योगिकी से लाभ पहुँचाने की व्यवस्था की गयी। सेवायोजन के अवसर बढ़ाने के लिये राष्ट्रीय ग्रामीण सेवायोजन कार्यक्रम तथा ग्रामीण भूमिहीन श्रमिक सेवायोजन गारण्टी कार्यक्रम का प्रावधान किया गया। उत्पादकता को बढ़ाने के लिये विभिन्न परिसम्पत्तियों से उत्पादन करने तथा सिंचाई, बिजली, परिवहन में वृद्धि करने की बात कही गयी। इस योजना में 3,38,148 करोड़ रुपये का कुल परिव्यय रखा गया जिसमें 1,80,000 करोड़ रुपये सार्वजनिक क्षेत्र तथा 1,58,148 करोड़ रुपये निजी क्षेत्र से सम्बन्धित थे। इस योजना के अन्तर्गत निम्नलिखित पर विशेष ध्यान देने की बात कही गयी:-

1. नियोजन का विकेन्द्रीकरण तथा विकास सम्बन्धी कार्यों में जनता की पूर्ण सहभागिता;

2. अधिक से अधिक मात्रा में 'उत्पादक सेवायोजन' ;च्तवकनबजपअम म्उचसवलउमदजद्ध उत्पन्न करना;

3. निर्धनता को दूर करना तथा विभिन्न प्रदेशों, शहरों तथा गाँवों के बीच असमानता को कम करना;

4. उपभोग के उच्च स्तरों पर खाद्यान्नों में आत्मनिर्भरता प्राप्त करना;

5. विशेष रूप से शिक्षा, स्वास्थ्य, पोषाहार, स्वच्छता एवं आवास के क्षेत्रों में सामाजिक उपभोग के उच्च स्तर को प्राप्त करना;

6. निर्यात सम्वर्द्धन एवं आयात प्रतिस्थापन के माध्यम से आत्मनिर्भरता में आँशिक वृद्धि करना;

7. छोटे परिवार की मान्यता का स्वेच्छापूर्वक अपनाया जाना तथा आर्थिक एवं सामाजिक क्रिया में महिलाओं को उचित स्थान दिलाना;
8. अवस्थापनात्मक बाधाओं एवं अभावों को कम करना तथा अर्थव्यवस्था में उत्पादन क्षमता का सर्वत्र अधिक से अधिक उपयोग करना और उत्पादकता में वृद्धि करना;
9. उद्योग में प्रतिस्पद्र्धा, कार्यकुशलता एवं आधुनिकीकरण में वृद्धि करना;
10. ऊर्जा संरक्षण तथा ऊर्जा के गैर-परम्परागत स्रोतों का विकास करना;
11. विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी का एकीकरण करना; तथा
12. पर्यावरण तथा परिवेश की रक्षा करना।

आठवीं पंचवर्षीय योजना (1992-1997)

योजनावधि (1992-1997) के दौरान 798,000 करोड़ रुपये के राष्ट्रीय पूंजीनिवेश तथा सार्वजनिक क्षेत्र के लिए 4,34,100 करोड़ रुपये के व्यय का प्रस्ताव किया गया। संसाधनों की स्थिति को देखते हुए राज्यों तथा केन्द्र शासित प्रदेशों की योजनाओं के लिए 1,86,235 करोड़ रुपये तथा केन्द्रीय योजना के लिए 2,47,865 करोड़ रुपये रखे गये। आठवीं योजना में नियोजन के प्रकार में महत्वपूर्ण परिवर्तन किये गये नियोजन की दिशा को आदेशात्मक के स्थान पर सांकेतिक की ओर मोड़ा गया। इस योजना में मानव विकास पर बहुत अधिक बल दिया गया। इस योजना में कुल परिव्यय 4,34,100 करोड़ का था। इसके लिए योजना में निम्नलिखित क्षेत्रों को प्राथमिकता दी गई:-

1. सन् 2000 तक पूर्ण रोजगार के स्तर को प्राप्त करने की दृष्टि से रोजगार के पर्याप्त अवसर उपलब्ध करना।
2. जनता की भागीदारी से जनसंख्या वृद्धि पर नियन्त्रण करना।
3. प्राथमिक शिक्षा को सर्वसुलभ बनाना और 15 से 35 वर्ष के आयु वर्ग के लोगों की निरक्षरता को पूर्णतः समाप्त करना।
4. सभी के लिए स्वच्छ पेयजल की व्यवस्था करना।
5. स्थायी विकास के लिए आधारभूत ढाँचे (ऊर्जा, परिवहन, संचार व सिंचाई) को विकसित करना।
6. खाद्य पदार्थों में आत्म निर्भरता के साथ निर्यात के लिए भी प्रयास करना।

आठवीं योजनावधि के दौरान आर्थिक सुधार प्रक्रिया प्रारम्भ की गई। आर्थिक सुधारों की वजह से अर्थव्यवस्था (या सकल घरेलू उत्पाद) की औसत वृद्धि दर में बढ़ोत्तरी हुई। आठवीं योजनावधि के दौरान यह औसत वृद्धि दर 6.8 प्रतिशत रही जबकि सातवीं योजना काल में यह 6 प्रतिशत थी। कृषि एवं सम्बद्ध क्षेत्र की औसत वृद्धि दर 3.9 प्रतिशत रही, जबकि सातवीं योजना में यह 3.4 प्रतिशत थी। इसी प्रकार उद्योग क्षेत्र में वृद्धि सातवीं योजना के 7.5 प्रतिशत की अपेक्षा आठवीं योजना के दौरान 8.0 प्रतिशत की दर से हुई। सेवा क्षेत्र में सातवीं योजना के 7.4 प्रतिशत की अपेक्षा आठवीं योजना में 7.9 प्रतिशत की दर रही थी। इस योजनावधि के दौरान सकल घरेलू उत्पाद के प्रतिशत के रूप में 24.3 प्रतिशत की दर सकल घरेलू बचत में तथा 25.7 प्रतिशत की दर से घरेलू निवेश में बढ़ोत्तरी हुई।

नौवीं पंचवर्षीय योजना (1997-2002)

नौवीं पंचवर्षीय योजना का लक्ष्य ''वृद्धि के साथ सामाजिक न्याय और समानता था'' नौवीं योजना के विशिष्ट लक्ष्य जो बाजार शक्तियों पर अधिक विश्वास और सार्वजनिक नीति की अनिवार्यताओं से उत्पन्न होते हैं। इस योजना में कुल परिव्यय 8,59,200 करोड़ का था। इस योजना में निम्नलिखित क्षेत्रों को प्राथमिकता दी गई:-

1. कृषि और ग्राम विकास को प्राथमिकता देना ताकि पर्याप्त उत्पादक रोजगार कायम हो सकें और गरीबी दूर हो सके;
2. कीमतों में स्थिरता के साथ अर्थव्यवस्था की वृद्धि दर को त्वरित करना;
3. सभी के लिए खाद्य और पौष्टिक सुरक्षा उपलब्ध कराना और ऐसा करते हुए समाज के कमजोर वर्ग का पूरा ध्यान रखना;
4. सभी को समयबद्ध रूप में बुनियादी न्यूनतम सेवाएं (Basic Minimum Services) उपलब्द्ध कराना, इनमें प्राथमिक शिक्षा, प्राथमिक स्वास्थ्य रक्षा सुविधाएं, पीने का सुरक्षित पानी, आवास और यातायात एवं परिवहन द्वारा सभी से सम्बन्ध स्थापित करना;
5. जनसंख्या की वृद्धि पर नियन्त्रण प्राप्त करना;
6. विकास प्रक्रिया, पर्यावरण पोश्नीयता के आश्वासन के लिए सामाजिक गतिशीलता और सभी स्तरों पर जनसहभागिता को बढ़ाना;
7. स्त्रियों और सामाजिक रूप से निर्बल वर्ग के लोगों को अधिक सम्पन्न बनाकर समाजार्थिक परिवर्तन एवं विकास का एजेन्ट बनाना;
8. जनसहभागिता को प्रोन्नत एवं विकसित करना और इसके लिए सहभागी संस्थानों, सहकारिताओं और अन्य स्वतः सहायता समूहों को बढ़ावा देना;
9. आत्मनिर्भरता के निर्माण के साधनों को सबल बनाना।

आठवीं योजना के दौरान 6.5 प्रतिशत की वार्षिक वृद्धि दर के विरूद्ध नौवीं योजना द्वारा प्राप्ति वृद्धि दर कम होकर 5.35 प्रतिशत हो गयी। नौवीं योजना के दौरान कृषि की वृद्धि दर जो कि आठवीं योजना के दौरान 4.7 प्रतिशत रही, गिरकर 2.1 प्रतिशत हो गयी। इसी प्रकार विनिर्माण की वृद्धिदर आठवीं योजना के लगभग 7.6 प्रतिशत के विरूद्ध गिर कर 4.5 प्रतिशत हो गयी।

दसवीं पंचवर्षीय योजना (2002-2007)

इस योजना के अधिकतर अनुवीक्षणीय लक्ष्य विशेषकर शिक्षा, स्वास्थ्य तथा परिवार कल्याण के क्षेत्र में सामाजिक संकेतकों में महत्वपूर्ण सुधारों से सम्बन्धित हैं जिनका विकास तथा रोजगार सम्बन्धी लक्ष्यों की प्राप्ति से महत्वपूर्ण सम्बन्ध है। इस योजना में निम्नलिखित कार्य प्रस्तावित किये गये:

1. महिलाओं के सशक्तीकरण की नीति को लागू करने के लिए राष्ट्रीय कार्य योजना
2. बच्चों के लिए राष्ट्रीय नीति तथा चार्टर
3. बच्चों के अधिकारों की सुरक्षा को सुनिश्चित करने के लिए राष्ट्रीय बाल आयोग

4. दसवीं योजना में 8 प्रतिशत वार्षिक वृद्धि दर प्राप्त करने का प्रावधान किया गया।

दसवीं योजना में सार्वजनिक क्षेत्र के लिए 15,25,639 करोड़ रुपये का वित्तीय प्रावधान सुनिश्चित किया गया तथा 2001-2002 में कीमतों पर निम्नलिखित मदों पर आवंटन किया गया।

ग्यारहवीं पंचवर्षीय योजना (2002-2007)

ग्यारहवीं पंचवर्षीय योजना में समेकित विकास के सिद्धान्त को स्वीकार करते हुए निम्नलिखित लक्ष्यों का निर्धारण किया गया:-

1. पांच प्रतिशत तक शिक्षित बेरोजगारी में कमी लाना तथा सत्तर लाख रोजगार के अवसरों का सृजन करना।
2. अनिपूर्ण श्रमिकों की वास्तविक मजदूरी दरों में वृद्धि लाना।
3. प्राथमिक विद्यालय स्तर पर न्यूनतम शैक्षिक मानकों को विकसित करना तथा उसकी प्रभाविकता को सुनिश्चित करना।
4. उच्च शिक्षा के स्तर पर 10-15 प्रतिशत की वृद्धि करना।
5. शिशु मृत्यु दर में कमी लाना।
6. प्रत्यक्ष तथा अप्रत्यक्ष रूप से सरकारी योजनाओं में महिलाएं अथवा बालिकाओं को लगभग 33 प्रतिशत का लाभ प्रदान करने को सुनिश्चित करना।

बारहवीं पंचवर्षीय योजना का कार्यकाल 2012 से 2017 के मध्य है तथा इस योजना में स्थायित्व के साथ समेकित विकास के सिद्धान्त को अंगीकार किया है।

10.11 सारांश (Summary)

सारांश के रूप में इस अध्याय में सामाजिक आर्थिक नियोजन एवं योजना आयोग के कार्यो तथा संरचना का विश्लेषण किया गया है। इस अध्याय में आर्थिक नियोजन के अर्थ, उद्देश्यों एवं सामाजिक आर्थिक नियोजन के सम्बन्धों तथा योजना आयोग के कार्यो एवं संरचना की भूमिका को स्पष्ट किया गया है।

10.12 अभ्यासार्थ प्रश्न (Questions for Practice)

(1) सामाजिक एवं आर्थिक नियोजन के प्रकार्यो से आप क्या समझते हैं?

(2) आर्थिक नियोजन के उद्देश्यों पर प्रकाश डालिए।

(3) योजना आयोग के कार्यो का वर्णन कीजिए।

(4) सामाजिक आर्थिक नियोजन के सम्बन्धों को स्पष्ट कीजिए।

(5) सामाजिक नियोजन एवं पंचवर्षीय योजनाओं पर प्रकाश डालिए।

(6) निम्नलिखित पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए।

(अ) योजना सम्बन्धी अनुवर्तन तथा मूल्यांकन

(ब) राष्ट्रीय विकास परिषद

(स) लेविस के अनुसार आर्थिक नियोजन का अर्थ

(द) भारत में आर्थिक नियोजन के उद्देश्य

10.13 सन्दर्भ पुस्तकें (reference Books)

1. Singh, Tarlok, Social Policy, Encyclopaedia of Social Work in India, Vol II-Planning commission, GOI, New Delhi, 1968.
2. Singh, S., Mishra, P.k. D.k. and Singh, A.k. N.k.Bharat mein Samajik

   Niti, Niyojan Evam Vikas, Deva Publications, Lucknow, 2006.
3. Bhartiya, A.k. K.k. and Singh, D.k. K.k. Social Policy in India, NRBC, Lucknow, 2009.
4. Agnihotri, I.k. and Awasthi, A.k. Economic Principles, Alok Prakashan, Allahabad, 1999.
5. Sovani, N.k. V.k. Whither Social Planners and Social Plannig? k. Gokhle, S.k. D.k. (ed.) Social Welfare: Legend and Legacy.
6. Kahn, A, J, Studies in Social Policy and Planning, Russel Sage Foundation, 1969.
7. Singh, S.k. P.k. Economic Development and Planning, S.k. Chand and Company Ltd., New Delhi, 2000.

इकाई-11

आर्थिक तथा समाजिक विकास

इकाई की रूपरेखा

11.0 उद्देश्य (Objectives)

11.1 प्रस्तावना (Preface)

11.2 भूमिका (Introduction)

11.3 आर्थिक विकास की अवधारणा (Concept of Economic Development)

11.4 आर्थिक संवृद्धि और विकास (Economic Growth & Development)

11.5 आर्थिक विकास के निर्धारक तथा रुकावटें (Determinants and Barriers to Economic Development)

11.6 भारत में आर्थिक विकास, योजना और सामाजिक परिवर्तन

11.7 भारत में आर्थिक विकास में बाधाएँ

11.8 आर्थिक विकास की सामाजिक समस्याएँ

11.9 सामाजिक विकास की अवधारणा (Concept of Social Development)

11.10 सामाजिक विकास का अर्थ एवं परिभाषा (Meaning and Definition of Social Development)

11.11 सारांश (Summary)

11.12 अभ्यासार्थ प्रश्न (Questions for Practice)

11.13 सन्दर्भ पुस्तकें (reference Books)

11.0 उद्देश्य (Objectives)

प्रस्तुत अध्याय के अध्ययन के पश्चात आप –

1. आर्थिक विकास की अवधारणा तथा आर्थिक संवृद्धि एवं विकास के विषय में समझ सकेंगे।
2. आर्थिक विकास के निर्धारक तथा रुकावटें को जान सकेंगे |
3. भारत में आर्थिक विकास, योजना और सामाजिक परिवर्तन से अवगत हो जायेंगे |
4. भारत में आर्थिक विकास के मार्ग में आने वाली बाधाओं को जान सकेंगे |
5. सामाजिक विकास के अर्थ ,विशेषता एवं कारकों का विश्लेषण कर सकेंगे |

11.1 प्रस्तावना (Preface)

आर्थिक विकास का होना उस दशा में निश्चित है जबकि अर्थव्यवस्था में ऐसे तीव्र परिवर्तन हो जिससे वास्तविक प्रति व्यक्ति आय में दीर्घकालीन बढ़ोत्तरी होती रहे। ऐसी अवस्था में देश का सम्पूर्ण विकास सम्भव हो पायेगा। अर्थव्यवस्था के सुदृढ़ होने से निर्धनता में कमी आयेगी और देश का विकास सम्भव हो सकेगा।

11.2 भूमिका (Introduction)

आर्थिक विकास एक प्रक्रिया है जिसमें पूंजी, श्रम, तकनीक आदि उत्पादन के कारक एक दूसरे पर इस प्रकार से अनुकूल प्रभाव डालते हैं कि उनकी पारस्परिक क्रिया प्रतिक्रिया के फलस्वरूप आय-वृद्धि का क्रम आगे बढ़ता रहता है। सामाजिक विकास में प्रमुख रूप से सामाजिक पर्यावरण, आवास, स्वास्थ्य, एवं पोषाहार, शिक्षा एवं प्रशिक्षण, रोजगार एवं कार्य की परिस्थितियों, सामाजिक सुरक्षा, सामाजिक स्थायित्व एवं समाज कल्याण से सम्बन्धित सामाजिक परिस्थिति में सुधार लाने वाले प्रयास पाये जाते है। इस प्रकार सामाजिक विकास समाज के सदस्यों को इस प्रकार विकसित करने की प्रक्रिया है कि उनके व्यक्तित्व का समुचित विकास हो सके।

11.3 आर्थिक विकास की अवधारणा (Concepts of Economic development)

अल्पविकसित देशों की समस्या का स्थायी समाधान उनके समुचित विकास में निहित है। विकास चाहे सामाजिक हो या आर्थिक, राजनैतिक या सांस्कृतिक सभी का उद्देश्य सम्पूर्ण विकास होता है। लेकिन इस सम्बन्ध में आवश्यक व सहायक उपाय प्रस्तुत करने के लिए आर्थिक विकास की अवधारणा का स्पष्टीकरण एवं उसे प्रभावित करने वाले कारकों की जानकारी आवश्यक है। इस जानकारी के सहारे विकास के लिए उपयुक्त नीतियों के निर्धारण अथवा सहायक कार्यक्रमों को अपनाने में मदद मिलेगी।

विकास को समझने के लिए हमें यह स्पष्ट रूप से देखना होगा कि इसका वास्तविक रूप से अर्थ किस बात से है और उपयुक्त सूचक सही रूप से क्या होगा।अत्यधिक निर्धनता के कारण अल्पविकसित देशों के परिपेक्ष्य में विकास का मूल उद्देश्य लोगों की आय मे वृद्धि लाना होना चाहिए। इसलिए हम विकास की ऐसी परिभाषा को प्राथमिकता देंगे जिसका केन्द्र बिन्दु आय-वृद्धि हो। हम यह स्पष्ट रूप से कह सकते हैं कि विकास के लिए आय-वृद्धि अत्यन्त आवश्यक है। इसी परिपेक्ष्य में जी. एम. मायर की परिभाषा को उचित कहा जा सकता है। मायर के अनुसार ''आर्थिक विकास ऐसी प्रक्रिया है जिससे किसी देश की वास्तविक प्रति व्यक्ति आय में दीर्घकालिक वृद्धि होती है बशर्ते कि निरपेक्ष निर्धनता रेखा के नीचे के लोगों की संख्या न बढ़े तथा आय के वितरण में और अधिक असमानता न आने पाये।'' उपर्युक्त परिभाषा में निम्न बातों पर ध्यान देना आवश्यक है तभी हम विकास की अवधारणा को स्पष्ट रूप से समझने में सफल हो पायंगे।

एक तो आर्थिक विकास एक प्रक्रिया है जिसमें पूंजी, श्रम, तकनीक आदि उत्पादन के कारक एक दूसरे पर इस प्रकार से अनुकूल प्रभाव डालते हैं कि उनकी पारस्परिक क्रिया प्रतिक्रिया के फलस्वरूप आय-वृद्धि का क्रम आगे बढ़ता रहता है। इस तरह यह स्पष्ट है कि आय में वृद्धि आकस्मिक घटनाओं की देन न होकर सामान्य प्रक्रिया का परिणाम होना चाहिए। दूसरे इस तथ्य को भी इस परिभाषा में स्पष्ट किया गया है कि वास्तविक प्रति व्यक्ति आय में वृद्धि आवश्यक है। इससे यह अर्थ लगाया जा सकता है कि कीमत परिवर्तनों का हिसाब करने पर वस्तुओं और सेवाओं के रूप में राष्ट्रीय आय में वृद्धि होगी या हम कह सकते हैं कि वास्तविक अथवा वस्तुगत रूप में राष्ट्रीय आय बढ़े साथ ही यह भी आवश्यक है कि जनसंख्या वृद्धि की तुलना में वास्तविक राष्ट्रीय आय में तीव्र गति से वृद्धि हो। तभी प्रति व्यक्ति आय में वृद्धि हो पायेगी। इस परिभाषा में एक बात और स्पष्ट होती है कि

आय में वृद्धि दीर्घकालीन हो। या कहा जा सकता है कि आय में वृद्धि लम्बे समय तक चलती रहे न कि अल्प समय तक। यहाँ पर यह स्पष्ट करना आवश्यक है कि यदि वर्षविशेष या कम समय में अनुकूल परिस्थितियों के कारण प्रति व्यक्ति आय बढ़ती है, लेकिन आगे चलकर फिर घट जाती है या बढ़ती नहीं रहती तो इसे आर्थिक विकास की संज्ञा नहीं दी जा सकती। आर्थिक विकास का होना उस दशा में निश्चित है जबकि अर्थव्यवस्था में ऐसे तीव्र परिवर्तन हो जिससे वास्तविक प्रति व्यक्ति आय में दीर्घकालीन बढ़ोत्तरी होती रहे। ऐसी अवस्था में देश का सम्पूर्ण विकास सम्भव हो पायेगा। अर्थव्यवस्था के सुदृढ़ होने से निर्धनता में कमी आयेगी और देश का विकास सम्भव हो सकेगा। जब किसी देश में विकास होता है तो उस देश में गरीबी धीरे-धीरे कम होने लगती है। प्रतिव्यक्ति उत्पादन बढ़ने लगता है। राष्ट्रीय आय में वृद्धि होती है। प्रति व्यक्ति आय में वृद्धि होती है इसलिए यह कहना कोई अतिशयोक्ति न होगा कि गरीबी और विकास एक दूसरे से सम्बन्धित हैं।

आर्थिक विकास का अर्थ एवं परिभाषा

विस्तृत अर्थों में आर्थिक विकास को ''किसी भी स्रोत से वास्तविक आय में प्रति व्यक्ति वृद्धि के रूप में देखा जा सकता है।''

Bach (1960) ने इसका वर्णन इस प्रकार किया हैः ''अर्थव्यवस्था में वस्तुओं और सेवाओं के कुल उत्पादन में वृद्धि ही आर्थिक विकास है।''

डेविड नोवाक(1964) ने आर्थिक विकास को एक पुरानी परिभाषा के संदर्भ में समझाया हैः ''यह प्रति व्यक्ति वस्तुओं और सेवाओं के उपभोग में निरन्तर ठोस वृद्धि है वस्तुओं का ठोस रूप में उत्पादन हो और ठोस उत्पादन आजकल अधिक तकनीकी उपयोग पर निर्भर करता है।

संकुचित अर्थ में, यह कहा जा सकता है कि आर्थिक विकास का अर्थ हैः आर्थिक वस्तुओं के उत्पादन और वितरण में निर्जीव शक्ति व अन्य तकनीकियों का विस्तृत प्रयोग। इस अर्थ में व्यवहारिक दृष्टि से आर्थिक विकास केवल औद्योगीकरण ही है, सही नहीं होगा क्योंकि उत्पादन में शक्ति और तकनीकियों के प्रयोग के साथ-साथ इसमें श्रम गतिशीलता, विस्तृत शिक्षा पद्धति आदि भी शामिल हैं।

जेफ और स्टूवर्ट जिन्होंने विकास को आर्थिक उत्पादन के युक्तीकरण के रूप में वर्णित किया है, उन्होंने विकसित और कम विकसित देशों में द्विभाजन किया है, जिसका आधार है प्रति व्यक्ति आय तथा कुछ अन्य कारक जैसे उच्च शिक्षा स्तर, लम्बी अवधि के जीवन की जन्म के समय आकांक्षा, निम्न उर्वरता, कृषि में संलग्नता, श्रम शक्ति का अनुपात, और प्रति व्यक्ति बिजली का उच्च उत्पादन, आदि।

इसके अतिरिक्त इस वर्गीकरण में हम एक तीसरी श्रेणी भी जोड़ सकते हैं- वे देश जो विकसित और कम विकसित देशों के बीच हैं अर्थात् विकासशील देश। प्रति व्यक्ति आय की दृष्टि से अमेरिका, कनाडा, आस्ट्रेलिया, और पश्चिमी यूरोप के देश (इटली, फ्रांस, जर्मनी, इंग्लैंण्ड) विकसित देश माने जा सकते हैं। दूसरी ओर, दक्षिण अफ्रीका, मेक्सिको और दक्षिणी तथा पूर्वी यूरोप के अधिकतर देश विकासशील देश हैं। भारत भी प्रति व्यक्ति आय की दृष्टि से विकासशील देश है।

जेफ और स्टूवर्ट ने कहा है कि उपरोक्त सभीविशेषताओं (विकसित देशों की) को प्राप्त करने के लिए आर्थिक विकास के लिए हर क्षेत्र में परिवर्तन आवश्यक है। परन्तु राबर्ट फैरिस का विश्वास है कि यह निष्कर्ष (कि आर्थिक विकास के लिए हर चीज को तुरन्त प्राप्त करना) न्याय संगत नहीं है। उसका मानना है कि यद्यपि इसका (आर्थिक विकास का) निकटतम माप प्रति व्यक्ति की वास्तविक आय में वृद्धि से लिया जा सकता है, लेकिन अन्य परिवर्तन आवश्यकता के स्तर पर निर्भर करेंगे।

विकास का अर्थशास्त्र अल्पविकसित देशों के आर्थिक विकास की समस्याओं से सम्बन्ध रखता है। जबकि आर्थिक विकास के अध्ययन ने वाणिज्यवादियों तथा एडम स्मिथ से लेकर मार्क्स और केन्ज तक सभी अर्थशास्त्रियों का ध्यान आकर्षित किया था, फिर भी उनकी दिलचस्पी प्रमुख रूप से ऐसी समस्याओं में रही जिनकी प्रकृतिविशेषतया स्थैतिक थी और जो अधिकांश सांस्कृतिक और सामाजिक संस्थाओं के पश्चिम यूरोपीय ढाँचे से सम्बन्ध रखती थी। उन्नीसवीं शताब्दी के पांचवें दशक मेंविशेष रूप से द्वितीय विश्व युद्ध के बाद ही अर्थशास्त्रियों ने अल्पविकसित देशों की समस्याओं के विश्लेषण की तरफ ध्यान देना शुरू किया। अर्थशास्त्रियों का रूझान, विकास के अर्थशास्त्र में राजनैतिक पुनरूत्थान की उस लहर के द्वारा और तीव्र हुआ, जो द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद एशिया तथ अफ्रीका के राष्ट्रों में फैल गया था। इन देशों के अनुयायी (नेता) तीव्र गति से आर्थिक विकास को बढ़ावा देना चाहते थे और इसके साथ ही विकसित राष्ट्र यह महसूस करने लगे थे कि ''किसी एक स्थान की निर्धनता अन्य साधनों के लिए खतरा है।'' इस तरह की बातों से अर्थशास्त्रियों का रूझान इस विषय की तरफ और तीव्र हुआ। मायर तथा बाल्डविन ने अपनी पुस्तक "Economic Development, Theory, History, Policy" में यह स्पष्ट किया है कि ''देशों के धन के अध्ययन की अपेक्षा देशों की निर्धनता के अध्ययन कीविशेष आवश्यकता है।

हम यह स्पष्ट रूप से कह सकते हैं कि अल्पविकसित देशों की विशाल निर्धनता को दूर करने में विकसित देशों की रूचि किसी मानव हितवादी उद्देश्य को लेकर नहीं उपजी है जबकि इसका कारण मुख्य रूप से रूस और पश्चिम के बीच शीत युद्ध रहा है। अल्पविकसित देशों का समर्थन तथा वफादारी प्राप्त करने के प्रयत्न से विकसित देश अल्पविकसित देशों को सहायता प्रदान करते आये हैं। प्रो. लाइफ. डब्लू. रौनन ने इस विषय में कहा है कि ''भविष्य में कई वर्षों तक अल्पविकसित देशों का विकास अमेरिका और रूस के बीच गहन प्रतियोगिता का क्षेत्र रहेगा। विश्व की समस्याओं में अपनी महत्वपूर्ण स्थिति के कारण ऐसे अल्पविकसित क्षेत्रविशेष रूचि का विषय बने रहेंगे, जो या तो ऐसे विशाल प्राकृतिक साधनों से युक्त हों जिनकी आवश्यकता विश्व की शक्तियों को हो या जो सैनिक दृष्टि से युद्ध के अवसर की स्थिति रखते हों।3 सहायता देने और सहायता लेने वाले देशों के लिए विकास का निर्यात मूल्य भी अधिक है।

विकास की परिभाषा के सन्दर्भ में वर्तमान समय में एक बात पर अधिक जोर दिया जा रहा है जिसे हम वहनीय विकास (Sustainable Development) के नाम से जान सकते हैं। वहनीय विकास (Sustainable Development) को कई नामों से जाना जाता है जैसे निर्वाह योग्य विकास, अक्षय विकास, सतत् विकास, धारणीय विकास आदि। इसका आशय ऐसे विकास से है जिसमें वर्तमान पीढ़ी की आवश्यकताओं को पूरा करते समय आगे आने वाली पीढियों की आवश्यकताओं या हितों पर समुचित ध्यान दिया जाता है। विकास कार्यक्रम अपनाते समय यह सुनिश्चित करना आवश्यक है कि इसका भावी पीढ़ी की अपनी आवश्यकताओं को पूरा करने की क्षमता पर प्रतिकूल प्रभाव न पड़े। यह क्षमता मुख्य रूप से मानव पूंजी एवं मनुष्यकृत भौतिक पूंजी के संचयन द्वारा निर्धारित होती है। अतः इस सम्बन्ध में महत्वपूर्ण बात यह है कि संचित पूंजी की समग्र उत्पादिता (जन-स्वास्थ्य, सुख, आय आदि पर पड़ने वाले प्रभाव को शामिल करते हुए) प्राकृतिक पूंजी के रिक्तीकरण से होने वाली हानि की क्षतिपूर्ति से अधिक हो। भावी पीढ़ियों के हितों पर ध्यान देने की आवश्यकता इस कारण उठी कि अतीत में विकास की लागतों,विशेष रूप से पर्यावरण सम्बन्धी क्षति की लागत की उपेक्षा करते हुए विकास के सुलाभों पर प्रायः कहीं अधिक बल दिया जाता रहा। इस कारण विकास के सन्दर्भ में अब यह आवश्यक हो गया है कि वर्तमान आवश्यकताओं को पूरा करते समय आगे आने वाली पीढ़ियों की आवश्यकतापूरक क्षमता को ध्यान में रखा जाय।

उपर्युक्त विवेचन से विकास का अर्थ स्पष्ट है। सारांश के तौर पर इसका आशय उस प्रक्रिया से है, जिसके संचालन के फलस्वरूप किसी देश की वास्तविक प्रति व्यक्ति आय लम्बी अवधि तक बढ़ती रहती है। सही अर्थ में विकास का होना तभी सम्भव है जबकि न्यूनतम स्तर पर ये तीन बातें पूरी हों (1) गरीबों की संख्या मे वृद्धि न हो, (2) आय वितरण में गिरावट न हो तथा (3) वर्तमान आवश्यकताएं पूरी करने का भावी पीढ़ी की क्षमता पर प्रतिकूल प्रभाव न पड़े।

11.4 आर्थिक संवृद्धि और विकास (Economic Growth and Development)

आर्थिक विकास शब्द का प्रयोग आर्थिक वृद्धि, आर्थिक कल्याण, आर्थिक प्रगति तथा दीर्घकालीन परिवर्तन जैसे शब्दों के साथ परस्पर विनिमयशीलता से किया जाता है। सामान्यतः आर्थिक वृद्धि व आर्थिक विकास में कोई अन्तर नहीं माना जाता है और दोनों शब्दों को एक दूसरे के पर्यायवाची शब्द के रूप में प्रयोग किया जाता है, लेकिन कुछ विद्वानों ने इसमें अन्तर स्पष्ट किया है जिनमें शुम्पीटर, एल्फ्रेड बोन, श्रीमती हिक्स व डा. ब्राइट सिंह मुख्य हैं।

प्रो. शुम्पीटर ने अपनी पुस्तक "Economic Development" में स्पष्ट किया है कि आर्थिक वृद्धि का अर्थ परम्परागत, स्वचालित एवं नियमित विकास से है, जबकि आर्थिक विकास का अर्थ नियोजित एवं नवीन तकनीकी के आधार पर होने वाले विकास से है। इसी तरह श्रीमती हिक्स ने स्पष्ट किया है कि वृद्धि शब्द का प्रयोग आर्थिक दृष्टि से विकसित राष्ट्रों के सम्बन्धों में किया जाता है जहाँ पर साधन ज्ञात और विकसित हैं, जबकि विकास शब्द का प्रयोग उन अविकसित देशों के सम्बन्ध में होना चाहिए। जहाँ पर अब तक प्रयोग किये गये साधनों का उपयोग एवं विकास करने की सम्भावना हो। डा. ब्राइट सिंह ने भी अपनी पुस्तक "Economic Development" में लिखा है कि वृद्धि शब्द का उपयोग विकसित देशों के लिए किया जा सकता हैं।

प्रो. किण्डलबर्जर के अनुसार, वृद्धि एवं विकास दोनों को ही पर्यायवाची शब्दों के रूप में प्रयोग किया जाता है और यह प्रयोग प्रायः सर्वमान्य है, लेकिन चूंकि यह दो शब्द हैं, अतः इनमें अन्तर खोजना नितान्त आवश्यक है। इस आधार पर ''आर्थिक वृद्धि से अर्थ केवल उत्पादन से है, जबकि आर्थिक विकास से अर्थ अधिक उत्पादन, नवीन तकनीक एवं संस्थागत सुधारों के समन्वय से है।''

प्रस्तुत संदर्भ मे आर्थिक वृद्धि और आर्थिक विकास की अवधारणाओं का स्पष्टीकरण अत्यन्त उपयोगी होगा। अक्सर आर्थिक वृद्धि और आर्थिक विकास को एक ही अर्थ में प्रयोग किया जाता रहा है। यदि दोनों ही हमारे केन्द्र बिन्दु हों, तो ऐसा कहने में कोई अतिशयोक्ति नहीं है। इसके बावजूद भी दोनों की अलग-अलग जानकारी सहायक होगी क्योकि विश यवस्तु की दृष्टि से दोनो में काफी विभिन्नता है।

आर्थिक वृद्धि

आर्थिक वृद्धि की अवधारणा का सम्बन्ध हम दीर्घकालीन अवधि के दौरान किसी अर्थव्यवस्था में वस्तुओं और सेवाओं की कुल उत्पादन मात्रा में हुई वृद्धि से मान सकते हैं। उत्पादन को आय के रूप मे भी स्वीकार किया जा सकता है आय उत्पादन के साधनों को किए गए भुगतान (ब्याज, लाभ और मजदूरी) का योग है, यह राशि उत्पादन के मूल्य के बराबर हो सकती है। इस तरह उत्पादन और आय में वृद्धि से एक बात यह तो स्पष्ट होती है कि उत्पादन में वृद्धि लेकिन इसका अर्थ यह नहीं है कि उस समय अवधि में उत्पादन कभी कम न हो या किसी वर्ष वह स्थिर न रहे अथवा उस दौरान उत्पादन एक निश्चित दर से बराबर बढ़ता रहे।

संवृद्धि को दो तरह से व्यक्त किया जा सकता है। पहला तो, प्रति व्यक्ति उत्पादन के रूप में संवृद्धि को निरूपित किया जा सकता है। दूसरा, कुल उत्पादन के रूप में जिसको ऊपर स्पष्ट किया गया है। कुल उत्पादन केा देश की जनसंख्या से भाग देकर प्रति व्यक्ति उत्पादन ज्ञात किया जा सकता है। प्रति व्यक्ति उत्पादन में वृद्धि आर्थिक संवृद्धि का संकेतक है। स्पष्ट होता है कि यह वृद्धि तभी सम्भव है जबकि जनसंख्या की वृद्धि की तुलना में कुल उत्पादन की वृद्धि हो। आर्थिक संवृद्धि के सूचक के रूप में अल्पविकसित देशों के सन्दर्भ में प्रति व्यक्ति उत्पादन की अवधारणा को दो कारणों से अधिक उपयुक्त माना जाता है। एक बात यह है कि अल्पविकसित देशों में जनसंख्या की वृद्धि दर की तुलना में कुल उत्पादन में अधिक तेजी से वृद्धि होनी चाहिए। ऐसी स्थिति में वस्तुओं और सेवाओं की प्रति व्यक्ति उपलब्धता बढ़ सकेगी और लोगों के जीवन स्तर मे सुधार लाना सम्भव हो सकेगा। दूसरी बात, प्रति व्यक्ति उत्पादन की स्थिति में ही कुछ लोग कुछ बचत और निवेश करने में समर्थ हो सकेंगे, ऐसा उत्पादन क्षमताओं में वृद्धि के अलावा उत्पादन वृद्धि के लिए अत्यन्त आवश्यक है।

पृथक्करण और अंतर

कई विद्वानों ने यह स्पष्ट रूप से कहा है कि आर्थिक संवृद्धि और आर्थिक विकास की अवधारणाओं में अनेक बातों में भिन्नता है, तात्पर्य यह है कि आर्थिक संवृद्धि आर्थिक विकास से भिन्न है। विषय वस्तु की दृष्टि से विकास का क्षेत्र विस्तृत है जबकि संवृद्धि का क्षेत्र सीमित या संकुचित है। विकास का क्षेत्र व्यापक है जबकि इसके विपरीत संवृद्धि की अवधारणा का सम्बन्ध केवल उत्पादन में परिवर्तनों के साथ है। इसका केन्द्र-बिन्दु उत्पादन-मात्रा और उसकी वृद्धि दर है। आर्थिक विकास में आर्थिक जीवन सम्बन्धी अनेक पहलुओं का समावेश है, जैसे कि रोजगार, वितरण, संस्थाएं, जीवन-स्तर आदि।

अर्थव्यवस्था के लिए प्रासंगिकता की दृष्टि से भी ये दोनों अवधारणाएं एक दूसरें से भिन्न हैं। विकसित देशों के लिए संवृद्धि की अवधारणा अधिक उपयुक्त या सुसंगत प्रतीत होती है। यहां आर्थिक जीवन के विभिन्न आयाम पहले से ही विकसित अवस्था में हैं, लोगों के समृद्ध आर्थिक जीवन को और अच्छा बनाने के लिए यहां जो आवश्यक है वह है उत्पादन मात्रा में वृद्धि लाना और उसे बनाये रखना। इस कारण इन देशों के लिए संवृद्धि की अवधारणा को स्पष्ट रूप से स्वीकार किया जाता है। इसके विपरीत अल्पविकसित देशों की स्थिति भिन्न है। यहाँ संवृद्धि अत्यन्त आवश्यक है, लेकिन यह अपने आप में उपयुक्त नहीं है। इन देशों को विकास पथ पर आगे बढ़ाने के लिए, उत्पादन में वृद्धि लाने के अतिरिक्त यहां आवश्यकता इन अनेक बातों की है कि आर्थिक संरचना में अनुकूल परिवर्तन, संस्थागत सुधार, तकनीक के स्तर को ऊपर उठाना, वितरण को न्याय संगत बनाना आदि। इन अल्पविकसित देशों के लिए आर्थिक विकास की अवधारणा अधिक प्रासंगिक है। विकसित और अल्पविकसित देशों में अनेक तरह की विभिन्नताएं हैं।

विकसित और अल्पविकसित देशों की समस्याओं और उनके निराकरण के दृष्टिकोण से भी दोनों अवधारणाएं एक दूसरे से अलग हैं। विकसित देशों के परिपेक्ष्य में संवृद्धि के सम्बन्ध में मुख्य रूप से इन जैसे कारकों पर ध्यान केन्द्रित करना होता है- व्यापार चक्र, बाजार, मांग, विज्ञान और प्रौद्योगिकी, इसके विपरीत अल्पविकसित देशों में समस्याओं का स्वरूप केवल आर्थिक ही नहीं होता, बल्कि समस्याएं सामाजिक और राजनैतिक भी होती हैं। इस कारण यहां संवृद्धि की समस्या और उसके समाधान को अधिक व्यापक रूप में और आधार पर देखना होता है। नीति-रीति में भिन्नता होती है। उदाहरण के लिए, विकसित देशों मंे समस्या प्रमुख रूप से माँग पक्ष से जुड़ी होती है, इससे अलग अल्पविकसित देशों में मुख्यतः आपूर्ति पक्ष पर ध्यान केन्द्रित करना होता है। इसी प्रकार जहां विकसित देशों में अर्थव्यवस्था के कार्य संचालन में सरकार का भाग नहीं के बराबर होता है, वहां अल्पविकसित देशों के सम्बन्ध में सरकार का सक्रिय योगदान महत्वपूर्ण भूमिका अदा करता है।

आर्थिक विकास या आर्थिक वृद्धि की माप

आर्थिक विकास और आर्थिक संवृद्धि की अवधारणाओं को अनेक विद्वानों ने एक दूसरे के पर्यायवाची के रूप में स्वीकार किया है। लेकिन इससे अलग कई विद्वानों ने इन अवधारणाओं में अन्तर बताया है। आर्थिक विकास और संवृद्धि की माप के विषय में हम बात करें तो इसे तीन तरह से मापा जाता हैः

राष्ट्रीय आय में वृद्धि

राष्ट्रीय आय में वृद्धि के लिए वर्तमान समय में एक परिभाषा दी जा रही है, आर्थिक विकास को समय की किसी दीर्घ अवधि में एक अर्थव्यवस्था की वास्तविक राष्ट्रीय आय में वृद्धि के रूप में मापा जाए। लेकिन यह परिभाषा उपयुक्त प्रतीत नहीं होती। पहली बात तो राष्ट्रीय आय का सम्बन्ध मुद्रा की अपेक्षा वास्तविक रूप में देश की अन्तिम वस्तुओं और सेवाओं के कुल उत्पादन से है। इसलिए वास्तविक राष्ट्रीय आय का आगणन करते हुए कीमत परिवर्तनों को नहीं लेना होगा। लेकिन एक विकासशील अर्थव्यवस्था मंे यह अवास्तविक हो जाता है, जहां कीमत परिवर्तन होना स्वाभाविक होता है। दूसरी बात इस परिभाषा में समय की दीर्घअवधि से तात्पर्य है वास्तविक आय में लगातार वृद्धि को आर्थिक विकास नहीं माना जा सकता। तीसरी बात यदि वास्तविक राष्ट्रीय आय में वृद्धि के साथ ही जनसंख्या में भी अपेक्षाकृत अधिक तीव्र वृद्धि हो जाती है, तो आर्थिक विकास नहीं बल्कि गतिरोध ;तमजंतकंजपवदद्ध होगा।

प्रति व्यक्ति आय में वृद्धि

दूसरी परिभाषा का प्रत्यक्ष रूप से सम्बन्ध लम्बी अवधि में प्रति व्यक्ति वास्तविक आय में वृद्धि से है। प्रति व्यक्ति आय या उत्पादन में वृद्धि के रूप में आर्थिक विकास की परिभाषा करने में अनेक अर्थशास्त्रियों के मत एक समान हैं। प्रो. मायर ने आर्थिक विकास को एक प्रक्रिया के रूप में परिभाषित किया है, जिसमें समय की दीर्घ अवधि में एक देश की वास्तविक आय में वृद्धि होती हैं। बुकैनन तथा एलिस के अनुसार, ''विकास का अर्थ पूंजी निवेश के उपयोग द्वारा अल्पविकसित क्षेत्रों की वास्तविक आय सम्भाव्यताओं का विकास करने के लिए ऐसे परिवर्तन लाना और ऐसे उत्पादक स्रोतों को बढ़ाना है, जो प्रति व्यक्ति वास्तविक आय बढाने की सम्भावना प्रकट करते हैं।''

"Development means developing the real income potentialities व the underdeveloped areas by using investment to ffeect those changes and to angment those productive resources which promise to raise real income per person." प्रो. वरन का विचार है कि ''भौतिक वस्तुओं के प्रति व्यक्ति उत्पादन में निश्चितकालीन वृद्धि के रूप में आर्थिक वृद्धि या विकास की परिभाषा दी जानी चाहिए।''

"Let economic growth (or development) be defined as an increase in over time of percapita output of material goods." इन परिभाषाओं से एक बात स्पष्ट होती है कि आर्थिक विकास के लिए वास्तविक आय में वृद्धि की दर से प्रति व्यक्ति आय में वृद्धि अधिक होनी चाहिए। इस सबके बावजूद अनेक तरह की कठिनाइयां रह जाती हैं। ऐसा सम्भव है कि प्रति व्यक्ति आय में वृद्धि के फलस्वरूप नागरिकों के वास्तविक जीवन स्तर में सुधार न हो। और यह भी सम्भव है कि जब प्रति व्यक्ति वास्तविक आय बढ़ रही हो, तो प्रति व्यक्ति उपभोग की मात्रा कम होती जा रही हो। ऐसा भी हो सकता है कि लोग बचत की दर पर ध्यान दे रहे हों, या फिर सरकार स्वयं इस बढ़ी हुई आय को सैनिक अथवा अन्य उद्देश्यों के लिए इस्तेमाल कर रही हो।

आर्थिक कल्याण में वृद्धि

अधिकांशतः आर्थिक कल्याण के दृष्टिकोण से आर्थिक विकास की परिभाषा दी गई है। आर्थिक विकास को ऐसी प्रक्रिया के रूप में स्वीकार किया जा सकता है जिसमें प्रति व्यक्ति वास्तविक आय में वृद्धि होती है और उसके साथ-साथ आय की असमानताओं का अन्तर कम होता है तथा समस्त जनसाधारण अधिमान से संतुष्ट होते हैं। रिचड्रसन और ओकन के अनुसार ''आर्थिक विकास भौतिक समृद्धि में ऐसा अनवरत दीर्घकालीन सुधार है जोकि वस्तुओं और सेवाओं के बढ़ते हुए प्रवाह में प्रतिबिम्बित समझा जा सकता है।''

"Economic development is a sustained, secular improvement in material well-being, which we may consider to be reflected in an increasing flow of goods and services."

उपर्युक्त परिभाषा भी सीमाओं से मुक्त नहीं मानी जा सकती है। पहली बात तो यह आवश्यक नहीं है कि वास्तविक राष्ट्रीय आय में वृद्धि का अर्थ, आर्थिक कल्याण, में सुधार ही हो सकता है कि प्रति व्यक्ति आय या वास्तविक राष्ट्रीय आय के बढ़ने से पूँजीपति और अधिक अमीर होते जा रहे हों और गरीब और अधिक गरीबी का सामना कर रहे हैं । इस तरह मात्र आर्थिक कल्याण में वृद्धि से ही आर्थिक विकास नहीं होता, जब तक कि राष्ट्रीय आय का वितरण सही रूप से या न्यायोचित न हो। दूसरी बात आर्थिक कल्णाण की माप करते हुए कुल उत्पादन की संरचना का मुख्यतः ध्यान रखना पड़ता है जिसके फलस्वरूप प्रति व्यक्ति आय में वृद्धि होती है, और उत्पादन का कैसे मूल्यांकन हो रहा है। जितना कुल उत्पादन बढ़ा है वह पूँजी पदार्थों से मिलकर बना हो सकता है और ऐसा भी उपभोक्ता वस्तुओं के कम उत्पादन के फलस्वरूप, लेकिन वास्तविक समस्या इस उत्पादन के मूल्यांकन में होती है। उत्पादन तो बाजार मूल्यों पर मूल्यांकित होता है, जबकि आर्थिक कल्याण वास्तविक राष्ट्रीय उत्पादन या आय में वृद्धि से मापा जाता है। कल्याण को दृष्टिगत करते हुए हमें मात्र इस बात पर ध्यान देना चाहिए कि क्या उत्पादित किया जाता है और उत्पादन कैसे होता है।

11.5 आर्थिक विकास के निर्धारक तथा रुकावटें (Determinants and Barriers to Economic Development)

किसी समाज की आर्थिक प्रगति में योगदान देने वाले कारक जो आमतौर पर माने जाते हैं, वे हैं | प्राकृतिक संसाधन, पूँजी संग्रह, प्रौद्योगिकी, ऊर्जा के साधन, मानव शक्ति, श्रम शक्ति, जनसंख्या कीविशेषताएँ और इसके आर्थिक संगठन, और सामाजिक वातावरण। राबर्ट फैरिस, 1964 ने कहा है कि आर्थिक विकास की पूर्वापेक्षाएं इस प्रकार हैं:-

1. मूल्य या विचारधारा।
2. संस्थाएं अथवा नियामक ग्रन्थिया यानी एक मत से व्यवहार सम्बन्धी नियमों को स्वीकारना या व्यवहार के सामान्य रूप से अनुमोदित प्रचलन का पालन करना।
3. संगठन, इसका तात्पर्य है क्या सरकार निजी या सार्वजनिक क्षेत्र को या दोनों को आगे बढ़ाना चाहती है।
4. लाभ और प्रतिष्ठा सम्बन्धी प्रेरक (प्रोत्साहन)।
5. अन्य तथ्यों पर गौर करें तो गुन्नार मिरडल ने विकास को प्रभावित करने वाले छः कारक बताएँ हैं:

6. पैदावार व आय,
7. उत्पादन की दशाएं,
8. जीवन के स्तर,
9. कार्य के प्रति दृष्टिकोण,
10. संस्थाए, व
11. राजनीत

प्रथम तीन आर्थिक क्रियाओं के संदर्भ में हैं, अगले दो गैर आर्थिक, और अन्तिम मिश्रित श्रेणी के सन्दर्भ में हैं। मिरडल का मानना है कि आर्थिक कारक निर्णायक व महत्वपूर्ण हैं।

जेकव वाइनर ने आर्थिक विकास की छः रुकावटों को चिन्हित किया है जो हैं - प्रतिकूल भौतिक वातावरण, कार्यरत जनसंख्या की निम्न गुणवत्ता, तकनीकी ज्ञान की कमी, जनसंख्या की वृद्धि, कृषि, भूमि संरचना में दोश।

यूरोप में प्रोटेस्टेन्ट सुधारों के कारण पूँजीवाद के उदय एवं विकास का रास्ता, समाज और उसकी संस्थाओं के दृष्टिकोण में आये परिवर्तनों के कारण खुल गया है। इसी आधार पर प्रोटेस्टेन्ट नैतिकता का विकास हुआ जो कि आर्थिक विकास के लिए अनुकूल था। यूरोप की इस घटना के विषय में लिखते हुए मैक्स वेबर ने पूँजीवादी समाज की उन संस्थाओं पर बल दिया है जो पश्चिम में आर्थिक विकास से जुड़ी हुई हैं। ये निम्न हैं:-

1. निजी स्वामित्व और उत्पादन के साधनों का नियंत्रण
2. रुकावटें तथा सरकार द्वारा मूल्य निर्धारण,
3. गणनीय कानूनों का शासन जो लोगों को पूर्व में ही जानकारी देते हैं कि आर्थिक जीवन में किन नियमों के अन्तर्गत वे कार्य करें।
4. मजदूरी व काम करने के लिए लोगों को आजादी,
5. पारिश्रमिक और मूल्यों की बाजार व्यवस्था के माध्यम से आर्थिक जीवन का व्यापारीकरण ताकि उत्पादन साधनों को क्रियाशील बनाया जा सके और उन्हें ठीक से बाँटा जा सके।
6. पूर्वानुमान और जोखिम उठाना ; जो पहले के सामंती समाजों में काफी प्रतिरोधी थे।

11.6 भारत में आर्थिक विकास, योजना और सामाजिक परिवर्तन (Economic development, Plan and Social Change in India)

स्वतंत्रता के पश्चात् भारत में आर्थिक विकास को वास्तविक क्रान्तिकारी परिवर्तन कहा जा सकता है। यह तब होगा जब हम अंग्रेजी शासन की अवधि के आर्थिक विकास की तुलना दो दशकों के नेहरू युग, इन्दिरा गाँधी व राजीव गाँधी के दो दशकों, लगभग साढ़े छः वर्ष के वी. पी. सिंह, चन्द्रशेखर और नरसिंहराव की सरकारों, संयुक्त मोर्चे की लगभग दो वर्ष की सरकार और भारतीय जनता पार्टी और उसके घटक साझेदारों की लगभग दो वर्ष की सरकार के समयावधि में हुए आर्थिक विकास से करें। 1747 और 1947 के मध्य के दो सौ वर्षों के ब्रिटिश शासन काल में आर्थिक विकास एक प्रतिशत से भी कम हुआ। विकास की यह दर इतनी कम थी कि इसने भारत को मात्र कच्चे माल की आपूर्ति करने वाला तथा पश्चिमी निर्यातों के लिए अच्छा बाजार बनाकर रख दिया। भारतीय लोगों

के स्वामित्व वाले औद्योगिक क्षेत्र का एक छोटा भाग ब्रिटिश एजेन्सियों द्वारा ही प्रतिबन्धित था। कृषि अर्थव्यवस्था में किसान, जमींदार, साहूकार व जागीरदारों के चंगुल में फँसा हुआ था। बचत और निवेश बहुत कम थे। तकनीकी निम्न स्तर की थी। पिछड़े क्षेत्र के विकास के क्षेत्रीय सन्तुलन की अवधारणा ही नहीं थी। भारत के निर्माण के लिए विदेशी पूंजी भी उपलब्ध नहीं थी। कम आय से कम बचत होती है, जिससे निवेश भी कम होता है, जिससे कम वृद्धि और फिर वही कम आमदनी होती है। उपनिवेशवादी युग में गरीबी के कुचक्र तथा अनन्त चक्र का सिद्धान्त बिल्कुल उपयुक्त प्रतीप होता था।

स्वतंत्रता के पश्चात् नयी सरकार का दोहरा कार्य हो गया, उपनिवेशवादी अर्थव्यवस्था को खत्म करना और इसके स्थान पर आधुनिक, स्वाधीन और आत्मनिर्भर आर्थिक व्यवस्था का आधार खड़ा करना। देश की आधुनिक अर्थव्यवस्था और राष्ट्रीय स्वरूप-समाज का समाजवादी स्वरूप-1955 में कांग्रेस के अवाड़ी अधिवेशन के (नेहरू युग में) और 1969 में बंगलौर अधिवेशन (इन्दिरा गाँधी समय में) के घोषणा पत्र द्वारा प्रदान किया गया। इससे इन्कार नहीं किया जा सकता कि 1950, 1960, 1970 और 1980 के चार दशकों में नेहरू के समाजवादी आदर्शों ने हमारी अर्थव्यवस्था को सुधारा, यद्यपि एक ऐसी विचारधारा के लोग भी हैं जो नेहरू आदर्शों की ताइवान, हांगकांग, सिंगापुर, दक्षिण कोरिया के आर्थिक विकास से तुलना करते हैं और अब इसमें दोष बताते हैं। अब हमारे देश में लाखों की संख्या में आधुनिक औद्योगिक उद्यम हैं जबकि पहले मुट्ठीभर ही थे। हमारे पास तकनीकी और उद्यमी कुशलताओं का भण्डार है, हमारे पास भिलाई और राउरकेला जैसी भव्य योजनाएं हैं, और हीराकुन्ड जैसे बड़े बाँध हैं, विकासशील विश्व में हमारी बचत की दर ऊँची है, (1999-2000 में हमारी विकास की दर 5.8 प्रतिशत वार्षिक थी जोकि अब लगभग 8 प्रतिशत वार्षिक है), निर्यात में निरन्तर वृद्धि हो रही है, अप्रवासी भारतीयों (NRI)की जमा राशियों में बीस गुणा वृद्धि हुई हैः अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा बाजार में अद्वितीय विश्वसनीयता में वृद्धि हुई है, और गरीबी रेखा से नीचे की जनसंख्या में कमी आयी है।

नरसिंहराव की सरकार ने 1991-92 में समाजवादी स्वरूप की अवहेलना की और उदारीकरण, बाजारीकरण तथा निजीकरण के दर्शन पर आधारित पुनर्गठित नीति प्रारम्भ की (जो अब नेहरूवादी पूंजीवाद कहा जाता है) जिसके विषय में कांग्रेस सरकार ने दावा किया कि इस नीति ने हमारे आर्थिक विकास में वृद्धि की है। उस समय की सरकार मानती थी कि इस नये प्रतिदर्श का मूल तत्व यह था कि यह राज्यों और निजी उद्यमियों दोनों को भरोसा दिलाता था और बहु प्रजातंत्र तथा मिश्रित अर्थव्यवस्था दोनों के प्रति अटूट विश्वास को दृढ़ बनाता था। संयुक्त मोर्चा सरकारों तथा भारतीय जनता पार्टी ने इस नीति को जारी रखा।

ऐसे विद्वान् भी हैं जो यह विश्वास नहीं करते कि नव-उदारवादी आर्थिक नीति वास्तव में भारतीय अर्थव्यवस्था को पुनर्जीवन प्रदान करेगी। उनकी मान्यता है कि हमारी अर्थव्यवस्था में आयात को नियंत्रित करके, निर्यात को प्रोत्साहन देकर, कर तन्त्र को विस्तृत करके, सार्वजनिक क्षेत्र को नौकरशाही से मुक्त करा कर, काले धन को उजागर करके, रक्षाखर्चों में कटौती करके, प्राकृतिक संसाधनों के दोहन की ओर अधिक ध्यान देकर वस्तुओं के लिए वृहद् बाजार सृजित करके, भूमि सुधारों में क्रान्तिकारी सुधार करके, पुनर्जीवित किया जा सकता है। ये विद्वान् यह भी मानते हैं कि देश को वाह्य की बजाय आन्तरिक उपायों पर निर्भर रहना चाहिए।

समाजशास्त्रीय दृष्टि से यह माना जा सकता है कि आर्थिक विकास (नेहरू आदर्शों एवं उदारवादी आदर्शों दोनों से) ने हमारी सामाजिक संरचना को वांच्छित दिशा में प्रभावित किया है। अपने समाज के मूल्यांकन के लिए भले ही हम कोई प्रारूप अपना लें, विकासात्मक प्रारूप (विभिन्न अवस्थाओं में समाज के उद्विकास का आंकलन करके) संघर्ष प्रारूप (प्रतिस्पर्घा और शक्ति के लिए निरन्तर संघर्ष पर बल देकर), कार्यात्मक प्रारूप (सामाजिक ढांचे में प्रत्येक संस्थात्मक प्रचलन का सभी अन्य तत्वों पर परिणाम का विश्लेषण करके) आदि, यह तो स्पष्ट

रहेगा कि सामाजिक सम्बन्धों के तन्त्र में, सामाजिक संस्थाओं में, सामाजिक व्यवस्थाओं में, सामाजिक ढांचे में, और सामाजिक प्रतिमानों में परिवर्तन हुआ है। अब भारत के लोग उतने रूढ़िवादी नहीं हैं जितने कि अर्ध शताब्दी पूर्व हुआ करते थे। वे उन नैतिक आदर्शों और सामाजिक मूल्यों से दृढ़ता से चिपके हुए नहीं हैं जो अतीत से उनको प्राप्त हुए हैं। लोग व्यक्तिगत रूप से वैयक्तिक स्वतंत्रता और सामूहिक सुरक्षा के लिए प्रयत्नशील हैं। उनके विचारों और दृष्टिकोणों में परिवर्तन आया है। वे नये अनुभवों को प्राप्त करने की इच्छा रखते हैं। उनमें न केवल प्रौद्योगिकी ज्ञान का अनुकरण करने की उत्सुकता है बल्कि अन्य समाजों से सांस्कृतिक तत्वों के अनुकरण की भी है। उनमें नवाचारों के प्रति भी रचनात्मक जिज्ञासा है। वे नवाचारों को स्वीकार करने और सामाजिक परिवर्तन के परिणामों से नहीं डरते हैं। वे गरीबी, बेकारी, भ्रष्टाचार, मुद्रास्फीति, भाई-भतीजावाद, आतंकवाद, जातिवाद और क्षेत्रवाद की समस्याओं के समाधान में असफल होने के लिए उत्तरदायी शक्ति सम्पन्न अभिजात वर्ग का विरोध कर सकते हैं और उनके विरुद्ध आन्दोलित भी हो सकते हैं, तथापि वे जानते हैं कि भारत में सामाजिक व्यवस्था कभी भी असन्तुलित नहीं होगी। भारतीय संस्कृति जिसमें विविधता है, न केवल जीवित रहेगी बल्कि विकसित भी होगी। आर्थिक विकास के माध्यम से सामाजिक परिवर्तन, सामाजिक संरचना और सामाजिक व्यवहार को विकास के बिन्दु एवं निर्देश प्रदान करता रहेगा (परम्परागत एवं संक्रमणकालीन)।

11.7 भारत में आर्थिक विकास में बाधाएँ (Obstacles to Economic Development in India)

भारत में आर्थिक विकास में आने वाली रुकावटों को समझने में सहायक है। थामस सी के अनुसार, ''भारत में चार प्रमुख बाधाएं आर्थिक विकास को प्रभावित करती हैं, जाति, भूमि पट्टेदारी ; का तरीका, जनसंख्या वृद्धि, और सम्पत्ति कानून (जिसमें भूमि के अधिक टुकड़े होते हैं)।

यद्यपि भारत में जाति प्रथा सिद्धान्त रूप में तथा संवैधानिक रूप से समाप्त कर दी गयी है लेकिन वास्तविक जीवन में इसका महत्व, आर्थिक विकास पर इसका प्रभाव, सम्पत्ति सम्बन्धों के आदर्शों और उपभोग के तरीकों पर इसका प्रभाव तथा सामाजिक, राजनैतिक, सांस्कृतिक, और आर्थिक क्षेत्रों के शक्ति के ढाँचे की संस्थिति पर प्रभाव आज भी अच्छी तरह नहीं समझा गया है, इसलिए इसको गम्भीर रूप से नजरअन्दाज किया गया है। गतिशील आर्थिक विकास के लिए अतिआवश्यक लोगों की गतिशीलता को जाति रोकती है यह कुछ समूहों को कुछ पेशे अपनाने से रोकती है। यह देखा गया है कि अर्थतंत्र प्रशासन और सांस्कृतिक कार्यों में अधिकतर नियंत्रण करने वाले पदों पर सम्पूर्ण भारत में कुछ जातियों द्वारा ही एकाधिकार कर लिया गया है। वास्तव में सम्पूर्ण देश के लोगों के भाग्य का नियंत्रण कुछ जाति के लोग ही करते हैं। जिससे जाति संघर्ष, क्षेत्रीय तनाव, व सामाजिक अशान्ति उत्पन्न होती है। यह अशान्ति विशेषाधिकार प्राप्त समूहों के मध्य तथा विशेषाधिकार से वंचित लोगों और विशेषाधिकार प्राप्त लोगों के मध्य संघर्ष का कारण होती है और कटु प्रतियोगितात्मक संघर्ष को बनाये रखती है। स्वस्थ राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था के विकास पर इसका विपरीत प्रभाव पड़ता है।

संयुक्त परिवार व्यवस्था, जाति (जो सामाजिक तथा पेशेवर गतिशीलता को रोकती है), साम्प्रदायिकता, क्षेत्रवाद, और भाषावाद भारत में आर्थिक विकास में बाधा उत्पन्न करने वाले कारकों के रूप में पहचाने गए हैं। यह भी माना जाने लगा है कि जाति प्रथा में परिवर्तनों से ही विकास सम्भव हुआ है। क्योंकि गुन्नार मिरडल ने जाति और परिवार जैसी संस्थाओं और उनके कार्यात्मक पक्ष को विकास के अपने विश्लेषण में महत्व नहीं दिया, अतः आर्थिक विकास के उनके विश्लेषण को नकारात्मक, बिखरा हुआ और पेबनदार (Patchy) ; कहा गया है।

ए. आर. देसाई (1959) का यह भी मानना है कि पुरानी संस्थाओं के साथ-साथ यह संकुचित मानसिकता निम्न कई प्रकार से उपयुक्त आर्थिक विकास को बाधित करती हैः

- इससे भाई भतीजावाद पनपता है;
- इससे अनुत्पादक विनियोजन के तरीकों और गलत उपभोग के तरीकों जैसे हानिकारक प्रचलनों का विकास होता है;
- इससे कार्य कुशलता, पेशे और साधनों के जुटाने के प्रति गलत दृष्टिकोण पैदा होता है;\
- यह उन लोकरीतियों और मान्यताओं के विकास में बाधा उत्पन्न करती है, जो आधुनिक समय में विकासशील अर्थव्यवस्था का मूल है, जैसे कानून पर आधारित लोकरीतियाँ और मान्यताएं, व्यक्तित्व के प्रति सम्मान, और समान नागरिकता की अवधारणा।

योगेन्द्र सिंह (1973) के अनुसार भारत में आर्थिक विकास में बाधक कारण निम्न हैं:-

1. सर्वोत्कृष्टता (जिसके अनुसार परम्परागत मूल्यों की वैधता को चुनौती नहीं दी जा सकती);
2. पूर्णतावाद;
3. श्रेणीक्रम (जाति पेशा और सामाजिक स्थिति का वर्गीकरण); तथा
4. निरन्तरता (पुनर्जन्म और कर्म में विश्वास)।

11.8 आर्थिक विकास की सामाजिक समस्याएँ (Social Problems of Economic Development)

संरचनात्मक परिवर्तन के बिना आर्थिक विकास सम्भव नहीं है। एच.डब्लू.सिंगर. जैसे विद्वानों ने इस तथ्य को स्वीकार किया है कि कम विकसित देशों के आर्थिक विकास के लिए औद्योगीकरण अति आवश्यक है। निर्धन व कम विकसित देशों में 60 प्रतिशत से 80 प्रतिशत तक जनसंख्या कृषि पर निर्भर है। उनकी राष्ट्रीय आय तथा प्रति व्यक्ति आय बहुत कम है। ऐसे में इन देशों के आर्थिक विकास के लिए दो विकल्प हैं:-

- मौजूदा प्रबल कृषि संरचना के सुधार से (अर्थात् कम उत्पादकता को मौजूदा ढाँचे के अन्दर ही परिवर्तन द्वारा)।
- समूचे ढाँचे को ही बदलकर (अर्थात कृषि हटाकर औद्योगिक विकास द्वारा)।

उपरोक्त दो विकल्पों के बीच चुनाव इससे निश्चित होता है कि दोनों में से कौन सा रास्ता चुनौतीपूर्ण है। दोनों पर ही बल देना सही रास्ता है। इस प्रकार दो तरह के प्रश्न उठते हैं:-

- कृषि सुधार किस प्रकार सस्ते ढंग से किए जा सकते हैं?
- मौजूदा उद्योगों को कैसे सुधारा जा सकता है?

कृषि सुधार, भूमि स्वामित्व व्यवस्था में परिवर्तन द्वारा सिंचाई की अधिक सुविधाएं उपलब्ध कराकर सम्भव है। औद्योगिक आन्दोलन विस्तृत, पुनः उपकरण और पुनः अवस्थान करके सम्भव है।

ए. आर. देसाई (1959) ने भारत में आर्थिक विकास की चार समाजशास्त्रीय समस्याएं बतायी हैं:-

1. पुराने सामाजिक संगठनों का बदला जाना और सामाजिक सम्बन्धों के नये ताने-बाने का उदय;

2. पुरानी सामाजिक संस्थाओं में सुधार या तिलांजलि और नयी प्रकार की सामाजिक संस्थाओं का विकास करना;
3. सामाजिक नियन्त्रण के पुराने स्वरूप को बदलना या हटाना और नये प्रकार की सामाजिक शक्ति का सृजन होना; और
4. सामाजिक परिवर्तन के पुराने स्रोतों का समापन या उन पर पुनर्विचार और सामाजिक परिवर्तन के नये उपायों और कारकों का निर्धारण।

11.9 सामाजिक विकास की अवधारणा (Concept of Social Development)

सामाजिक विकास की अवधारणा सामाजिक न्याय पर आधारित है। वर्तमान समय में सामाजिक विकास पर अत्यधिक बल दिया जा रहा है क्योंकि अब तक यह बात भलीभांति सिद्ध हो गया है कि सामाजिक विकास सम्पूर्ण विकास की धुरी है। सामाजिक विकास के केन्द्रीय महत्व को इसीलिए स्वीकार किया गया है क्योंकि यह मानवीय संसाधनों के विकास से सम्बन्धित है और अन्य विविध प्रकार के विकास मानवीय संसाधनों पर ही आधारित है।

सामाजिक विकास की महत्ता की सार्वभौमिक स्वीकृति के बावजूद इसके सम्बन्ध में अनेक प्रकार के भ्रम पाये जाते हैं। कभी इसे सामाजिक परिवर्तन, कभी सामाजिक उद्विकास और कभी सामाजिक प्रगति के पर्यायवाची के रूप में प्रयोग किया जाता है। सामाजिक विकास इन सबसे भिन्न है।

सामाजिक उद्विकास तथा सामाजिक विकास

सामाजिक उद्विकास शब्द म्अवसनजपवद का हिन्दी रूपान्तर है जिसकी व्युत्पत्ति लैटिन शब्द Evolvere से हुयी है। श्म्श् का अर्थ है 'बाहर की ओर' (Out) और (Volvere)का अभिप्राय 'फैलने' से है। इस प्रकार शाब्दिक दृष्टि से Elovere अथवा Evolution का अर्थ किसी वस्तु के 'बाहर की ओर फैलने' से है। किन्तु किसी वस्तु का बाहर की ओर फैलना अथवा बढ़ना मात्र उद्विकास नहीं है। जैसे मिटटी के बढ़ते हुए ढेर को हम उद्विकास नहीं कह सकते।

उद्विकास का अर्थ ऐसे फैलाव से है जिसके परिणामस्वरूप एक सरल वस्तु परिवर्तित होकर जटिल अवस्था में आ जाय। इस आशय को स्पष्ट करते हुए **हर्बर्ट स्पेंसर** ने कहा हैः 'उद्विकास पदार्थ का एकीकरण तथा उससे सम्बन्धित गति का विसरण है जिसके दौरान पदार्थ अनिश्चित तालमेल रहित समानता से निश्चित तालमेल युक्त विविधता में आता है।

मैकाइवर तथा पेज के मत में, ''परिवर्तन में केवल निरन्तरता होती है बल्कि परिवर्तन की दिशा भी होती है, से अभिप्राय उद्विकास से है।

इस प्रकार सामाजिक उद्विकास एक दिशाविशेष में होने वाला वह सामाजिक परिवर्तन है जो आन्तरिक शक्तियों के परिणामस्वरूप उत्पन्न होता है और जिसके फलस्वरूप समाज सरलता से जटिलता की ओर अग्रसित होता है।

स्पेंसर के मत में प्रारम्भ में सामज अत्यधिक सादा एवं सरल था। सामाजिक सम्बन्ध प्रत्यक्ष थे। परिवार ही सभी प्रकार के कार्यों का स्थल था। इस समाज में कुछ भी निश्चित नहीं था न तो जीवन, न ही सामाजिक संगठन, और न ही संस्कृति। किन्तु धीरे -धीरे अनुभवों एवं नवीन प्रयोगों के आधार पर ज्ञान में वृद्धि होती गयी

और सामाजिक संगठन तथा संस्कृति का विकास होता गया। सामाजिक उद्विकास प्रक्रिया जैविक उद्विकास की भांति कुछ निश्चित स्तरों से होकर गुजरी है।

मोर्गन के अनुसार विकास की अवस्थाएं : मोर्गन ने अनेक अवस्थाओं का उल्लेख किया है जिनमें से गुजरने के पश्चात् ही समाज वर्तमान अवस्था तक पहुंच पाया है। मारगन के मत में प्रथम अवस्था जंगली अवस्था थी, इसके बाद बर्बरता अवस्था तथा उसके बाद सभ्यता की अवस्था आयी है।

जंगली जीवन का निम्न स्तर : जिसे प्राचीन प्रस्तर युग कहा जाता है। इस स्तर पर मनुष्य मांस, पेड़ों की जड़े और छालें खाता था; स्वच्छन्द रूप से यौन सम्बन्ध स्थापित करता था; वृक्षों पर अथवा गुफाओं में अस्थायी रूप से रहता था; और प्रत्येक व्यक्ति एक दूसरे के लिए खतरे का स्रोत बना रहता था।

जंगली जीवन का मध्य स्तर : इस स्तर पर प्रारम्भ आग जलाने की कला और मछली मारकर खाने के ज्ञान से हुआ। इस स्तर पर किये गये शिकार को आग से भूनकर खाया जाने लगा। इस स्तर पर मनुष्य छोटे-छोटे समूहों में पृथ्वी के विभिन्न स्थानों पर फैलने लगे। मारगन ने कुछ अस्ट्रेलियाई तथा पालीनेशियाई जनजातियों को इस स्तर का प्रतिनिधि करने वाला माना है।

जंगली जीवन का उच्च स्तर : इस स्तर का प्रारम्भ धनुश बाण के अविष्कार के साथ हुआ। इस स्तर में पारिवारिक जीवन का आरम्भ हो गया था लेकिन यौन सम्बन्ध बहुत ढीले थे। इस स्तर में समूहों के आकार में वृद्धि हुयी और संघर्ष व्यक्तिगत न रहकर सामूहिक हो गये। क्योंकि इस स्तर में अधिकांश संघर्ष पत्थर के सामान्य हथियारों की सहायता से किये जाते थे इसीलिए इस काल को नूतन प्रस्तर युग भी कहा जाता है।

बर्बरता का निम्न स्तर : इस स्तर का प्रारम्भ बर्तन बनाने की कला और उसके प्रयोग की विधि सीखने के समय से माना जाता है। इस स्तर में यद्यपि व्यक्ति का जीवन पहले से ही अधिक स्थायी बन चुका था, फिर भी मनुष्य एक स्थान से दूसरे स्थान पर जाता रहता था। इसी स्तर से सम्पत्ति की भावना का प्रादर्भाव हुआ। इस स्तर में दूसरे समूहों पर इसलिए आक्रमण किये जाते थे ताकि उनके हथियार, स्त्रियां एवं बर्तन छिने जा सके। इस स्तर पर परिवार का स्वरूप कुछ सीमा तक विकसित हो चुका था किन्तु स्वच्छन्द यौन सम्बन्धों पर नियंत्रण न हो पाने के कारण पितृत्व का निर्धारण अनिश्चित था।

बर्बरता का मध्य स्तर : इस स्तर पर प्रारम्भ पूर्वी गोलार्द्ध में पशुपालन एवं पश्चिमी गोलार्द्ध में सिंचाई द्वारा खेती करने तथा ईंट बनाने की कला के साथ हुआ। इस काल में कृषि का आरम्भ हो जाने के कारण घुमक्कड़ जीवन में काफी कमी हुई। परिवार का स्वरूप बहुत स्पष्ट हो गया था और अधिकतर परिवारों में स्त्रियों की शक्ति को मान्यता दी जाने लगी। सम्पत्ति की अवधारणा का और अधिक विकास हुआ तथा वस्तुओं के विनिमय का प्रचलन प्रारम्भ हो गया।

बर्बरता का उच्च स्तर : इस स्तर का प्रारम्भ लोहा गलाने और उससे विभिन्न वस्तुएं बनाने की कला के अविष्कार से हुआ। इस स्तर में पुरुष एवं स्त्रियों के कार्यों में स्पष्ट विभाजन हो गया था। लोहे के नोकदार तथा तेज हथियारों का निर्माण होने लगा था। व्यक्तिगत सम्पत्ति में स्त्रियों की साझेदारी प्रारम्भ हो गयी थी। छोटे-छोटे गणराज्यों की स्थापना भी होने लगी थी। इस स्तर पर 'धातु युग' के नाम से जाना जाता है।

सभ्यता के अवस्था में भी तीन स्तर रहे हैं:-

निम्न सभ्यताओं का स्तर : इसका प्रारम्भ वर्णाक्षर के प्रयोग एवं एकविशेष भाषा से हुआ। सांस्कृतिक परम्पराओं का प्रारम्भ इसी स्तर से हुआ माना जाता है। इस स्तर में नगरों का विकास हो गया था। व्यापार किये जाने लगा था; तथा कला और शिल्पकला में भी उन्नति हो गयी थी।

मध्य सभ्यताओं का स्तर: इस स्तर में आर्थिक संगठन अत्यधिक व्यवस्थित हो चुका था। श्रम विभाजन तथा विशेषीकरण द्वारा आर्थिक क्रियाएं की जाने लगी थी। सामाजिक जीवन को व्यवस्थित बनाने के लिए नियमों का निर्माण किया जाने लगा था। लोगो का जीवन पर्याप्त स्तर तक सुरक्षित हो गया था और एक सुसंगठित राजनीतिक व्यवस्था का निर्माण हो चुका था।

उच्च सभ्यताओं का स्तर : इस स्तर का प्रारम्भ 19वीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध से माना जाता था। इस स्तर में समाज आधुनिक जटिल स्थिति में आ गया था। इस स्तर में बड़े पैमाने पर उत्पादन होना प्रारम्भ हुआ। व्यक्तिगत सम्पत्ति की भावना में वृद्धि होने के कारण पूंजीवादी आर्थिक संगठनों का विकास हुआ। कुछ स्थानों पर वर्ग संघर्ष के कारण सामाजिक और आर्थिक क्रान्ति हुयी जिसके परिणामस्वरूप साम्यवाद का विकास हुआ। जन सामान्य को पूंजीवादी दुष्परिणाम से संरक्षण प्रदान कर एक न्यूनतम इच्छित जीवन स्तर का आश्वासन प्रदान करने हेतु कल्याणकारी राज्य का विकास हुआ।

इस प्रकार मानव समाज प्रारम्भिक शिकार करने की स्थिति से जानवर पालने की स्थिति तदुपरान्त खेती करने की स्थिति से गुजरता हुआ वर्तमान में औद्योगिक स्थिति में पहुंचा है। उद्विकास के प्रत्येक युग के प्रत्येक चरण में सामाजिक संगठन, संस्कृति तथा धार्मिक विश्वासों में महत्वपूर्ण परिवर्तन हुए है।

सामाजिक उद्विकास और सामाजिक विकास में अन्तर: सामाजिक उद्विकास और सामाजिक विकास दोनों में निम्नलिखित अन्तर है:-

1. विकास सदैव उध्र्वगामी होता है जबकि उद्विकास उध्र्वगामी अथवा अधोगामी किसी भी प्रकार का हो सकता है।
2. विकास की प्रक्रिया में नियोजित ढंग से परिवर्तन किये जाते हैं जबकि उद्विकास की प्रक्रिया में परिवर्तन स्वतः होता है।
3. विकास का सम्बन्ध सामाजिक जीवन के कुछ पहलुओं में इच्छित परिवर्तन करने से होता है जबकि उद्विकास का सम्बन्ध सम्पूर्ण सामाजिक जीवन से होता है।
4. विकास की अवधारणा मूल्यों से सम्बद्ध है, उद्विकास की अवधारणा मूल्यरहित एवं तटस्थ है।
5. विकास की प्रक्रिया एक चेतन एवं संगठित प्रक्रिया है जबकि उद्विकास एक स्वतः चालित एवं अचेतन प्रक्रिया है।
6. विकास की प्रक्रिया के नियम एवं क्रम विभिन्न समाजों में भिन्न-भिन्न होते हैं जबकि उद्विकास की प्रक्रिया के नियम तथा क्रम सभी समाजों में समान एवं सुनिश्चित होते हैं।

सामाजिक प्रगति एवं सामाजिक विकास : प्रगति शब्द अंग्रेजी के 'Progress' का हिन्दी रूपान्तर है जिसकी व्युत्पत्ति लैटिन शब्द 'Progredior' से हुयी है जिसका अर्थ 'To Step forword' अथवा आगे बढ़ना है इस प्रकार प्रगति का अर्थ आगे बढ़ना है।

आगे बढ़ना का प्रत्येक काल, स्थान एवं समूह में भिन्न-भिन्न अर्थ लगाया जाता रहा है। उदाहरणार्थ, राजतंत्र एवं सामन्तवादी व्यवस्था मे प्रगति का अर्थ जनता से अधिक से अधिक करों की वसूली करना और बेगार लेना समझा जाता था। 18वीं शताब्दी से 20वीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध तक प्रगति का अर्थ प्राकृतिक संतुलन को बनाये रखते हुए मानव मात्र को सुख एवं शान्ति का अनुभव कराना समझा जाता है। इस प्रकार प्रगति की अवधारणा एक सापेक्ष अवधारणा है। जो विकासशील देशों के लिए प्रगति है वही विकसित देशों के लिए पिछड़ापन हो सकता है।

प्रगति की अवधारणा की इसी सापेक्षता के कारण मैकाइवर ने इसे 'गिरगिट' की तरह रंग बदलने वाला तथ्य कहा है।

प्रगति की अवधारणा मूल्यों से सम्बन्धित है। इसका परिमापन उन कसौटियों की पृष्ठभूमि में किया जाता है जिन्हें समाज अपनी योजना में मूल्यवान समझता है। सामाजिक प्रगति के सम्बन्ध में लमले ने यह विचार व्यक्त किया है'' यह परिवर्तन है किन्तु यह एक इच्छित अथवा अनुमोदित दिशा न कि किसी दिशा में परिवर्तन लाता है।

आगबर्न तथा निमफाक के मत में, ''प्रगति का अर्थ अधिक अच्छाई के लिए परिवर्तन है और इसीलिए इसके अन्तर्गत मूल्य सम्बन्धी निर्णय आवश्यक रूप से सन्निहित है।''

गिन्सबर्ग के मत में, ''प्रगति का अर्थ अधिक अच्छाई के लिए परिवर्तन है और इसलिए इसके अन्तर्गत मूल्य सम्बन्धी निर्णय आवश्यक रूप से सन्निहित हैं।''

हाबहाउस के विचार में, ''सामाजिक प्रगति का अर्थ उन गुणों के सम्बन्ध में सामाजिक जीवन में अभिवृद्धि है जिनके साथ मनुष्य मूल्यों को सम्बन्धित अथवा विवेकपूर्ण रूप से सम्बन्धित कर सकते है।''

इस प्रकार सामाजिक प्रगति से हमारा अभिप्राय समाज द्वारा मान्यता प्राप्त उद्देश्यों की दिशा में होने वाला इच्छित परिवर्तन है जो मानव कल्याण में अभिवृद्धि करता है।

सामाजिक प्रगति तथा सामाजिक विकास अन्तर: सामाजिक प्रगति तथा सामाजिक विकास में निम्नलिखित अन्तर है:-

1. विकास साधन है जबकि प्रगति साध्य। बिना विकास के प्रगति नहीं हो सकती किन्तु प्रगति के बिना भी विकास हो सकता है
2. विकास का अधिकतर सम्बन्ध भौतिक संस्कृति से है जबकि प्रगति का सम्बन्ध अभौतिक संस्कृति से।
3. विकास का परिमापन प्रगति की तुलना में सरल है।
4. विकास सार्वभौमिक और सार्वकालिक है जबकि प्रगति सापेक्ष।
5. विकास में परिवर्तन का क्षेत्र प्रगति में होने वाले परिवर्तन की अपेक्षा अधिक व्यापक है।
6. विकास की अवधारणा प्रगति की अवधरणा की तुलना में सापेक्षतया अधिक स्थायी है।

11.10 सामाजिक विकास का अर्थ एवं परिभाषा (Meaning and definition of Social development)

विकास की अवधारणा के सम्बन्ध में पर्याप्त भ्रम रहा है। पाठक के मत में विकास की अवधारणा में स्पष्टता की कमी, ''विकास शब्द में सन्निहित विभिन्न अर्थों को अंग्रेजी में व्यक्त करने में शाब्दिक कठिनाई के कारण रही है। वैन न्यूवेनहाइजे के अनुसार विकास या तो साधित अथवा संसिद्धित होता है। विकास की प्रक्रिया से उत्पन्न होने वाली क्रिया सहित प्रक्रिया है। विकास एक कार्य अथवा एक साधित परिस्थिति हो सकती है। शंकर पाठक का यह मत है कि ''यह एक उद्देश्य अर्थात् प्राप्त किये जाने वाली एक स्थिति भी हो सकती है। नियोजन से सम्बन्धित साहित्य में विकास को प्रायः एक उद्देश्य के रूप में देखा जाता है तथा राष्ट्रीय नियोजन को इसकी प्राप्ति हेतु एक क्रिया अथवा उपकरण के रूप में समझा जाता है।'' विकास, परिवर्तन की एक ऐसी प्रक्रिया है जिसमें विभेदीकरण की वृद्धि होती है और इस प्रक्रिया के दौरान मानव जीवन में उत्तरोत्तर वृद्धि होती है।

हाबहाउस ने सामाजिक विकास को परिभाषित करते हुए कहा है किः ''एक समुदाय उस समय विकसित होता है जबकि यह मापक्रम कुशलता, स्वतंत्रता तथा सेवाओं की पारस्परिकता में आगे बढ़ता है।''

एम.वी. एस. राव के अनुसार, ''सामाजिक विकास में प्रमुख रूप से सामाजिक पर्यावरण, आवास, स्वास्थ्य, एवं पोषाहार, शिक्षा एवं प्रशिक्षण, रोजगार एवं कार्य की परिस्थितियों, सामाजिक सुरक्षा, सामाजिक स्थायित्व एवं समाज कल्याण से सम्बन्धित सामाजिक परिस्थिति में सुधार लाने वाले प्रयास पाये जाते हैं।''

शंकर पाठक के मत में ''सामाजिक विकास एक व्यापक अवधारणा है जिसमें महत्वपूर्ण संरचनात्मक परिवर्तन राजनैतिक, आर्थिक एवं सांस्कृतिक, जिन्हें समाज को परिवर्तित करने के लिए सोद्देश्यपूर्ण क्रिया के एक अंश के रूप में लागू किया जाता है, सन्निहित होते है।''

सामाजिक विकास समाज के सदस्यों को इस प्रकार विकसित करने की प्रक्रिया है कि उनके व्यक्तित्व का समुचित विकास हो सके। सेवायोजन योग्य व्यक्तियों को सेवायोजन कार्य के उपयुक्त अवसर उपलब्ध हो सकें। वे कार्य की न्यायोचित एवं मानवीय परिस्थितियों में अपने समाज के उद्देश्यों की प्राप्ति में अपना पूर्ण योगदान दे सके, और वे अपने द्वारा किये गये अंशदान तथा सामाजिक न्याय की आवश्यकताओं के अनुसार अपने श्रम के लाभों में साम्यपूर्ण अंश प्राप्त करने में समर्थ हो सकें।

सामाजिक विकास की विशेषताएं (Characteristics of Social development)

सामाजिक विकास के अन्तर्गत समाज और व्यक्ति दोनों का सर्वांगीण विकास सन्निहित होने के कारण इसके लिए अपेक्षित विभिन्न पहलुओं यथा स्वच्छ पेयजल, पोषाहार, स्वास्थ्य, शिक्षा, आवास, रोजगार, कार्य की उपयुक्त शर्तें एवं परिस्थितियां, मनोरंजन तथा खेलकूद इत्यादि में चेतन, संगठित एवं नियोजित रूप से वांछित दिशा में परिवर्तन किये जाने आवश्यक है। सामाजिक विकास की निम्नलिखित प्रमुखविशेषताएं है:-

- समाज द्वारा व्यक्तित्व के विकास के लिए अपेक्षित विभिन्न प्रकार की सेवाओं का प्रावधान करते हुए मानव संसाधनों का समुचित विकास।
- समाज द्वारा विकसित किये गये मानव संसाधनों द्वारा उन्हें निर्धारित किये गये उत्तरदायित्वों को प्रभावपूर्ण रूप से निभाते हुए सामजिक क्रिया में अधिकतम योगदान।
- सामाजिक क्रिया से होने वाले लाभो में दिये गये अंशदान तथा किसी भी प्रकार की बाधिता के शिकार व्यक्तियों को सामाजिक न्याय के आधार पर साम्यपूर्ण वितरण ।

सामाजिक विकास के प्रकार्य (Functions of Social development)

सम्पूर्ण सामाजिक एवं आर्थिक व्यवस्था को एक ऐसी निश्चित दिशा की ओर ले जाना जिसमें मानवीय संसाधनों का सर्वांगीण विकास हो, उन्हें कार्य के उपयुक्त अवसर मिल सकें, वे सुरक्षित एवं स्वस्थ परिस्थितियों में संतोश जनक कार्य की शर्तों पर कार्य कर सकें और उन्हें सामाजिक सुरक्षा का समुचित आभास हो, सामाजिक विकास के प्रमुख प्रकार्य हैं। विशिष्ट रूप से सामाजिक विकास की प्रक्रिया के दौरान निम्नलिखित प्रकार्य सम्पादित किये जाते हैं।

1. सामाजिक न्याय का आश्वासन
2. आर्थिक विश मताओं की रोकथाम
3. सामाजिक असमानताओ का उन्मूलन

4. पिछड़े वर्गो का कल्याण एवं विकास
5. जीवन स्तर का उन्नयन
6. सामाजिक लाभों का साम्यपूर्ण वितरण
7. सेवायोजन के उपयुक्त अवसरों का निर्माण जनसंख्या वृद्धि पर रोक।

सामाजिक विकास के महत्वपूर्ण कारक (Chief Factors of Social development)

जो सामाजिक कारक सामाजिक विकास में महत्वपूर्ण योगदान देते हैं ,उनमे से प्रमुख हैं- पोषाहार, स्वच्छ पेयजल,आवास, शिक्षा, कार्य/सेवा योजन; स्वास्थ्य, पर्यावरण की स्वच्छता, अनुरक्षण एवं विकास, मनोरंजन एवं खेलकूद; तथा सांस्कृतिक विरासत का अनुरक्षण एवं विकास।

सामाजिक विकास में बाधाएं (Obstacles of Social Development)

सामाजिक विकास की प्रक्रिया व्यक्तित्व विकास व सम्पूर्ण समाज के निर्माण से सम्बन्धित होती है। इसलिए इसके मार्ग में अनेक बाधाएं आती हैं जिनमें से प्रमुख हैं-

1. उत्पादन के साधना में असमानता
2. जनसंख्या में तीव्र वृद्धि
3. निर्धनता
4. निरक्षरता
5. परम्परागत सांसकृतिक मानसिकता
6. धर्म एवं जाति के कठोर बंधन
7. पोषाहार एवं सवास्थ्य सेवाओं में कमी
8. कार्य के अधिकार का आश्वासन न होना
9. दोषपूर्ण नियोजन
10. अपर्याप्त एवं भ्रष्ट सरकारी तंत्र
11. प्राकृतिक संसाधनों का अविवेकपूर्ण दोहन
12. दोषपूर्ण औद्योगिकीकरण
13. नगरीकरण में तीव्र वृद्धि
14. महिलाओं की निम्न स्थिति
15. जनसहभागिता में कमी

सामाजिक विकास के प्रारूप (Models of Social development)

सामाजिक विकास के प्रारूप समय, स्थान एवं स्थिति पर निर्भर करता है अतः सामाजिक विकास के प्रारूप सार्वभौमिक नहीं हो सकते है। पी0 के0 बाजपेई ने सामाजिक विकास के प्रारूपों का उल्लेख (Encyclopaedia of Social Work, third Edition) निम्नवत् रूप में किया है:-

1. सामर्थ्य प्रारूप
2. आत्मचेतनात्मक प्रारूप
3. सशक्तीकरण प्रारूप
4. सहभागिता प्रारूप
5. सामाजिक विधान प्रारूप
6. प्रजातात्रिंक प्रारूप
7. आर्थिक प्रारूप
8. मानव विकास प्रारूप
9. पारिस्थितिकी प्रारूप

11.11 सारांश (Summary)

सारांश के रूप में इस अध्याय में आर्थिक विकास से आशय उस प्रक्रिया से है, जिसके संचालन के फलस्वरूप किसी देश की वास्तविक प्रति व्यक्ति आय लम्बी अवधि तक बढ़ती रहती है। सही अर्थ में विकास का होना तभी सम्भव है जबकि न्यूनतम स्तर पर ये तीन बातें पूरी हों (1) गरीबों की संख्या मे वृद्धि न हो, (2) आय वितरण में गिरावट न हो तथा (3) वर्तमान आवश्यकताएं पूरी करने का भावी पीढ़ी की क्षमता पर प्रतिकूल प्रभाव न पड़े।

11.12 अभ्यासार्थ प्रश्न (Questions for Practice)

(1) आर्थिक विकास की अवधारणा से आप क्या समझते हैं?

(2) आर्थिक विकास का अर्थ एवं परिभाषा पर प्रकाश डालिए।

(3) आर्थिक संवृद्धि और आर्थिक विकास में अन्तर कीजिए।

(4) आर्थिक विकास के निर्धारक को स्पष्ट कीजिए।

(5) सामाजिक विकास की अवधारणा से आप क्या समझते हैं?

(6) निम्नलिखित पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए।

(अ) आर्थिक वृद्धि

(ब) विकास

(स) आर्थिक विकास की सामाजिक समस्याएँ

(द) भारत में आर्थिक विकास

11.13 सन्दर्भ पुस्तकें (reference Books)

1 . Singh, Tarlok, Social Policy, Encyclopaedia of Social Work in India, Vol II-Planning commission, GOI, New Delhi, 1968.

2. Singh, S., Mishra, P.k. D.k. and Singh, A.k.N.k.Bharat mein Samajik Niti, Niyojan Evam Vikas, Deva Publications, Lucknow, 2006.

3. Bhartiya, A.k., K.k. and Singh, D.k., K.k. Social Policy in India, NRBC, Lucknow, 2009.

4. Agnihotri, I.k. and Awasthi, A.k. Economic Principles, Alok Prakashan, Allahabad, 1999.

5. Sovani, N.k. V.k. Whither Social Planners and Social Plannig? K. Gokhle, S.k.,D.k. (ed.) Social Welfare: Legend and Legacy.

6. Kahn, A, J, Studies in Social Policy and Planning, Russel Sage Foundation, 1969.

7. Singh, S.k. P.k.Economic Development and Planning, S.k. Chand and Company Ltd., New Delhi, 2000.

8. Economic Development-Principles and Patterns (ed.k.by H.F.k. Williamson and C.k. A.k.Buttrick)

9. G.k. M.k. Meier and R.k. E.k. Baldwin, Economic Development Theory, History, Policy.

इकाई-12

अक्षय विकास

इकाई की रूपरेखा

12.0 उद्देश्य (Objectives)

12.1 प्रस्तावना (Preface)

12.2 भूमिका (Introduction)

12.3 वहनीय विकास की अवधारणा (Concept of Sustainable Development)

12.4 वहनीय विकास की समस्याएं (Problems of Sustainable Development)

12.5 वहनीय विकास हेतु वैश्विक प्रयास (Sustainable Development & Global Efferts)

12.6 वहनीय विकास की आवश्यकताएं (Importance of Sustainable Development)

12.7 वहनीय विकास के लक्ष्य एवं उद्देश्य (Goals & Objectives of Sustainable Development)

12.8 वहनीय विकास एवं आर्थिक विकास (Sustainable Development & Economic development)

12.9 वहनीय विकास तथा पर्यावरण (Sustainable Development & Enviornment)

12.10 अक्षय विकास की रणनीतियां एवं उपागम (Stratigies & Approaches of Sustainable Development)

12.11 वहनीय विकास के लिए सुझाव (Suggestions regarding Sustainable Development)

12.12 सारांश (Summary)

12.13 अभ्यासार्थ प्रश्न (Questions for Practice)

12.14 सन्दर्भ पुस्तकें (reference Books)

12.0 उद्देश्य (Objectives)

प्रस्तुत अध्याय के पश्चात आप –

1. वहनीय या अक्षय विकास की अवधारणा, अर्थ तथा इससे सम्बंधित समस्याओं को जान सकेंगे।
2. वहनीय या अक्षय विकास के लिय किये गए वैश्विक प्रयासों को समझ सकेंगे |
3. वहनीय या अक्षय विकास की आवश्यकता , लक्ष्य एवं उद्देश्य से अवगत हो जायेंगे |
4. वहनीय या अक्षय विकास का आर्थिक विकास तथा पर्यावरण के साथ संबंधों का विश्लेषण करने में सक्षम हो जायेंगे |
5. अक्षय विकास की रणनीतियां एवं उपागम को जान सकेंगे |

12.1 प्रस्तावना (Preface)

मानव जीवन में तरह-तरह की आवश्यकता होती है जिसकी पूर्ति उपलब्ध संसाधनों को उपयोग में लाने से पूर्ण होती है। जिस संसाधनों को सामान्यतः वनस्पति, खनिज, आदि। समाज के विकास की आरंभिक अवस्था में जनसंख्या की अपेक्षा संसाधनों की अधिकता पायी जाती थी किन्तु वर्तमान समय में स्थिति बिल्कुल विपरित हो गयी है जिसका कारण जनसंख्या का तीव्र गति से बढ़ना है। जिस अनुपात में जनसंख्या की वृद्धि हुयी है, उस अनुपात में संसाधनों में कोई विशेष वृद्धि नहीं हुयी है। इस सम्बन्ध में भारत जैसे विकासशील देशों की स्थिति अत्यधिक गंभीर है यहां जिस अनुपात में जनसंख्या में वृद्धि हो रही है उस अनुपात में संसाधनों में वृद्धि वृद्धि नहीं हो रही हैं। इसके परिणामस्वरूप लोगों को जिन समस्याओं का सामना करना पड़ रहा है। जैसे- प्रदूश ण की समस्या, पानी की समस्या, गरीबी की समस्या तथा बेरोजगारी आदि।

12.2 भूमिका (Introduction)

वहनीय विकास, विकास की ऐसी प्रक्रिया है जो न केवल हमारे प्राकृतिक संसाधनों का संरक्षण करने पर बल देती है वरन् उनकी बर्बादी पर रोक लगाती है साथ ही यह विकास की ऐसी अवधारणा है जो मात्र कुछ लोगों के लिए ही नहीं बल्कि सम्पूर्ण लोगो के लिए है।

12.3 वहनीय या अक्षय विकास की अवधारणा (Concept of Sustainable development)

आज हम जिन समस्याओं के परिपेक्ष में बात करते हैं। जनसंख्या की तीव्र वृद्धि के कारण हमारे संसाधनों का बहुत अधिक अंधाधुन्द दोहन किया जा रहा है। जिसके कारण अनेक प्रकार की समस्याएं उत्पन्न हो गयी है। यह दोहन विकसित और विकासशील देशों में अधिक विकास के अवसरों को ध्यान में रखकर किया जा रहा है। विकास की प्रगति से अभिप्राय यह हुआ कि अर्थव्यवस्था की वृद्धि दर संसाधनों के दोहन पर निर्भर करेगी परन्तु प्राकृतिक संसाधनोंविशेष रूप से खनिज/भूमि से निकलने वार्ला इंधन जिस पर वर्तमान औद्योगिकी निर्भर है। वे निश्चित रूप से सीमित हैं अतः विकासशील एवं विकसित देशों द्वारा यह ध्यान दिया गया कि भावी पीढ़ियों को भी इन संसाधनों कीआवश्यक होगी। इस प्रकार आर्थिक विकास जहां एक ओर प्राकृतिक संसाधनों का गंभीर नुकसान हुआ है, वहीं दूसरी ओर यह स्थिति असन्तुलन में परिणत हुयी है। परिणाम स्वरूप विकास सम्बन्धीविशेषज्ञों ने भावी पीढ़ियों की आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुए विकास सम्बन्धी एक नवीन अवधारणा अपनाने की आवश्यकता पर बल दिया जिसे वहनीय (अक्षय) विकास के नाम से जाना जाता है। वहनीय विकास का अर्थ यह है कि आर्थिक विकास की विकास दर को बढ़ाने के लिए प्राकृतिक संसाधनों और परिस्थितिकि के बचाव को ध्यान में रखकर प्राकृति संसाधनों को उत्पादन शक्ति को बनाए रखा जा सके।

वहनीय विकास का अर्थ

वहनीय विकास लिए धारणीय, संपोश णीय, निर्वहनीय, टिकाऊ, शाश्वत या सतत् विकास आदि शब्द भी प्रयोग में लाए जाते हैं। इसका तात्पर्य विकास के उस अनुकूलतम स्तर से है जो पर्यावरण को क्षति पहुंचाए बिना संसाधनों के अनुकूलतम उपयोग से प्राप्त होता है। इसके पश्चात् पूंजी, कुशल, श्रम तकनीक आदि का प्रयोग के बावजूद यदि अधिकतम विकास का प्रयास किया जाये तो पर्यावरण को स्थायी रूप से क्षति पहुंचने लगी है। इसी प्रकार विकास का यह स्तर लंबे समय तक नहीं चल सकता। सतत् विकास की इस अवधारणा में पर्यावरण के अनुरूप विकास के साथ ही संसाधनों को भावी पीढ़ियों के लिए बचाए रखने पर ही ध्यान रखा जाता है। इस शब्द का प्रयोग पहली

बार IUCN (International Union for Conservation of Nature and Natural Composition) ने अपनी रिपोर्ट 'विश्व संरक्षण रणनीति' में किया। परन्तु 1987 ई. में WCEd. (World Commission on Environment and Development) Common Future',नामक रिपोर्ट में इस शब्द की परिभाषा और कार्य पद्धति की व्याख्या की। इस व्याख्या को न्छण्व्ण् ने भी स्वीकार कर लिया है। इस रिपोर्ट के अनुसार टिकाऊ विकास वह विकास है जिसके अंतर्गत भावी पीढ़ियों के लिए आवश्यकताओं की पूर्ति करने की क्षमताओं में समझौता किए बिना वर्तमान पीढ़ी की आवश्यकताओं को पूरा किया जाता है। अतः पर्यावरण के सुरक्षा के बिना विकास को पूरा किया जाता है। अतः पर्यावरण के सुरक्षा के बिना विकास को निर्वहनीय नहीं बनाया जा सकता है। आर्थिक विकास और पर्यावरण सुरक्षा के मध्य एक वांछित संतुलन बनाए रखना ही निर्वहनीय या टिकाऊ विकास है। वर्तमान में यह विकास का एक भूमंडलीय दृष्टिकोण बन गया है। 1992 ई. के पृथ्वी सम्मेलन में घोषित एजेंडा-21 (रियो घोषणा) में इसके प्रति पूर्ण समर्थन व्यक्त किया गया। 2002 ई. के जोहांसबर्ग सम्मेलन का मूल मुद्दा ही शाश्वत विकास था।

वहनीय विकास का अर्थ यह है कि आर्थिक विकास की विकास दर को बढ़ाने के लिए प्राकृतिक संसाधनों का अत्यधिक उपयोग न करके, पर्यावरण और पारिस्थितिकी के बचाव को ध्यान में रखकर प्राकृतिक संसाधनों का उपयोग किया जाना चाहिए, जिससे आगे आने वाली पीढ़ी के लिए प्राकृतिक संसाधनों की उत्पादन शक्ति को दुरूस्त रखा जा सके। यह एक महत्वपूर्ण तथ्य है कि प्राकृतिक संसाधनों का उपयोग न करके विकास कैसे हो सकता है। मानव की आधारभूत आवश्यकताओं के लिए प्राकृतिक संसाधनों के संरक्षण के लिए बहस हुई जिसमें यह निर्णय लिया गया कि प्राकृतिक संसाधन मानवजाति को समकालीन समाज में चुनौतियों का सामना करने के लिए सहायक हैं। विकास के साथ-साथ जनसंख्या, आर्थिक वृद्धि, पूँजी तथा प्रौद्योगिकी उत्पादन में वृद्धि होती है, लेकिन इनकी माँगों में बढ़ोत्तरी का आधार प्राकृतिक संसाधन हैं और प्राकृतिक संसाधन पर्यावरण पर आधारित हैं जोकि विकास में सहायक हैं। अतिप्राचीन काल में मनुष्य ने अपने आराम (विलासिता) के लिए प्राकृतिक संसाधनों का अत्यधिक दुरुपयोग किया, मनुष्य की इस प्रक्रिया से प्राकृतिक सन्तुलन बिगड़ गया। जनसंख्या का दबाव बढ़ने पर मानव जाति ने अपनी समस्याओं को दूर करने के लिए अधिक से अधिक प्राकृतिक संसाधनों का क्षरण किया। विज्ञान और प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में प्रगति के लिए इन प्राकृतिक संसाधनों का क्षरण किया जा रहा है जिसके परिणामस्वरूप पर्यावरण का सीमित उपयोग नहीं हो पा रहा है और गम्भीर समस्याएं उत्पन्न हो रही हैं जो मानव जीवन के आस्तित्व के लिए गम्भीर चुनौती हैं। आज वर्तमान समय में मानव जाति ने पर्यावरण को स्वयं नष्ट किया है जिससे आज वह संकटों के चक्रव्यूह से घिरा है और इस स्थिति में वह बिना चेतना, बिना विचारपूर्वक और बिना संगठन के पर्यावरण का अधिक से अधिक दोहन कर रहा है।

नीति एवं कार्यक्रम बनाने के उद्देश्य हेतु विकास अर्थशास्त्रियों ने वहनीय विकास की अवधारणा को विभिन्न अन्तर्सम्बद्ध घटकों में विभाजित किया है। विकास पूर्ण रूप से नीति और कार्यक्रम का परिणाम होता है अतः यह कहना अतिशयोक्ति न होगा कि उद्देश्यपूर्ण नीति विकास में सहायक होती है। जब हम वहनीय विकास के परिपेक्ष्य में बात करते हैं तो इस बात से कोई परहेज नहीं करेंगे कि वहनीय विकास ऐसा विकास है जिसमें संसाधनों के उचित प्रयोग पर बल दिया जाता है। इसके अन्तर्गत पर्यावरण संरक्षण परविशेष रूप से ध्यान दिया जाता है। वहनीय विकास की अवधारणा में निम्नलिखित अन्तर्सम्बद्ध घटकों को शामिल किया गया है -

- स्वस्थ वृद्धि मूलक अर्थव्यवस्था
- सामाजिक समानता के प्रति वचनबद्धता
- पर्यावरण संरक्षण

12.4 वहनीय विकास की समस्याएं (Problems of Sustainable development)

स्वच्छ पर्यावरण और स्वस्थ्य जीवन एक दूसरे के पर्याय है। किन्तु विकास की अन्धी ओर के पर्यावरणीय समस्याओं के रूप में भुगतना पड़ रहा है। प्रदुषण पुर्न स्टजिक (दुबारा पैदा न होने) न कि है। ग्रामीण कृषकों को खास बीमा पूंजी तकनीकी इत्यादि की सीमित सुविधाएं ही उपलब्ध है। इनकी पहुंच भूमि बाजार तक नहीं होती है। बैंकों के लिए वे संदिग्ध ग्राहक होते हैं। अतः घरेलू जानवर गाय, भैंस, भेड़ इत्यादि उनके लिए पूंजी के स्रोत हैं। अफ्रीका महाद्वीप के सारे क्षेत्रों में कृषक सूखा सरी (तरह) विपदाओं में बीमा के रूप में अत्यधिक पशु पालते हैं यद्यपि पशुपालन से भूमि परती (बेकार) पड़ जाती है खुरों से मुद्रा अपरहन होता है। इस प्रकार पृथ्वी दिन-प्रतिदिन हालत खराब होती जा रही है।

एक महत्वपूर्ण तथ्य यह है कि प्राकृतिक संसाधनों का विरोध न करके विकास कैसे हो सकता है। मानव की आधारभूत आवश्यकताओं के लिए प्राकृतिक संसाधनों के संरक्षण के लिए बहस हुयी जिससे यह निर्णयलिया गया कि प्राकृतिक संसाधन मानव जाति को समकालीन समाज में चुनौतियों का सामना करने के लिए सहायक है। विकास के साथ जनसंख्या आर्थिक वृद्धि पूंजी तथा प्रौद्योगिकी उत्पादन में वृद्धि होती है लेकिन इसकी मांगों में बढ़ोत्तरी का आधार प्राकृतिक संसाधन है और प्राकृतिक संसाधन पर्यावरण पर आधारित है जो विकास में सहायक, है। प्राचीन काल में मनुष्य ने अपने आराम विलासिता के लिए प्राकृतिक संसाधनों का अत्यधिक सहयोग लिया। मनुष्य की इस प्रक्रिया से प्राकृतिक संतुलन बिगड़ गया जनसंख्या का दबाव बढ़ने से मानव जाति में अपनी संमस्या को दूर करने के लिए अत्यधिक प्राकृतिक संसाधनों का प्रयोग किया जिससे प्राकृतिक संसाधन उपयोग की गति दिन-प्रतिदिन बढ़ती गयी। आज भी विकास और प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में प्राकृतिक संसाधनों का क्षरण किया जा रहा है जिसके परिणामस्वरूप पर्यावरण का सही उपयोग नहीं हो पा रहा है।

पोषणीय विकास पर दस 10 दिवसीय विश्व सम्मेलजन 26/08/2002 से 04/09/02 तक जोहान्बर्ग में हुआ। सम्मेलन में भारतीय टीम की अगुवाई पर्यावरण मंत्री टी.आर.बाल. ने की तथा अन्तिम चार दिनों तक अगुवाई वित्त मंत्री यशवन्त सिन्हा ने किया। इस सम्मेलन में 185 देशों के प्रतिनिधि ने भाग लिया। इसके पूर्व ही 1983 में पर्यावरण एवं विकास पर विश्व आयोग की स्थापना संयुक्त राष्ट्र संघ की सामान्य सभा द्वारा की गयी थी। उसी के पश्चात् यह आयोग ने सम्मेलनों एवं वार्ताओं का आयोजन विश्व स्तर पर करने लगा। इन सम्मेलनों से यह बात उभर कर सामने आयी कि विकास ने लोगों को गरीब बनाया और बिमारियों के प्रति उनमें सहनशक्ति या उनसे लड़ने की क्षमता समाप्त कर दी और विश्व के पर्यावरण का दोहन बिना सोचे समझे विकास के के लिए किया गया जिससे अनेक प्रकार की बीमारियों का जन्म हुआ और प्राकृतिक विपदाओं ने अपना भयानक रूप धारण कर लिया। सुनामी जैसी घटनायें एवं विश्व के प्रत्येक भाग में आरंभ हुए भूचाल की घटनाएं आम बात हो गयी हैं और मनुष्य में प्रतिरोधक क्षमता का विनाश होता जा रहा हैं। यहीं नहीं लोग विकास के नाम पर विनाश में अधिक पैसा लगा रहे हैं उदाहरण - विश्व का प्रत्येक राष्ट्र अपनी राष्ट्रीय आय का एक बड़ा भाग सैन्य शक्ति की वृद्धि में लगा रहा है क्योंकि उसको इस बात का भय है कि कहीं पड़ोसी देश की सीमा का अतिक्रमण न कर ले। इस प्रकार पूरे विश्व में एक दूसरे से अनिवाश का वातावरण बना हुआ है।

पिछलों तीन दशकों में आर्थिक समृद्धि, मानव विकास तथा पर्यावरण संरक्षण विश्व स्तर पर महत्वपूर्ण रूप दे रहे हैं जिनके सम्बन्ध में अनेक सम्मेलन बुलाये गये। 1972 में मानवीय पर्यावरण पर ये ऐतिहासिक सम्मेलन हुआ जिसका प्रभुत्व मुद्दा बाजार प्रेरित आर्थिक विकास के आंख मूंद कर अनुकरण से उत्पन्न मानवीय पर्यावरण को खतरा रहा है। विकासशील देशों का ध्यान संभवतः इस ओर उतना नहीं गया जितना पर्यावरण के खतरे के रूप में गरीबी और सामाजिक, आर्थिक विषमता पर गया। विस्तारपूर्ण सम्मेलन उल्लेखनीय परिणाम एक तो 'यूनाइटेड

नेशन्स इन्वायरमेन्ट' को है जिसका प्रमुख उद्देश्य अन्तर्राष्ट्रीय पर्यावरणीय सहयोग को परिवर्तित करना था। दूसरे इनके परिणामस्वरूप आर्थिक विकास तथा मानव पर्यावरण के बीच मांगे जाने वाले परस्पर विरोध के सम्बन्ध में समन्वय या समाशोधन की एक नयी सोच शुरू हुयी। 1987 में पर्यावरण तथा विकास सम्मेलन ने अपनी बहुचर्चित रिपोर्ट ;व्नत ब्वउउवद थ्नजनतमद्ध में जिनमें ब्रण्ट लैण्ड रिपोर्ट के नाम से जाना जाता है। पोश णीय विकास की धारणा परिवर्तित कि तथा पोश णीय विकास को परिभाषित करते हुएकहा 'पोश णीय विकास को परिभाषित करते हुए कहा ''पोश णीय विकास से आशय ऐसे विकास के स्वरूप में है जो वर्तमान पीढ़ी की आवश्यकताओं की पूर्ति की क्षमता बिना भावी पीढ़ी की (उनकी) आवश्यकताओं की पूर्ति की क्षमता को प्रतिकूल रूप से प्रभावित करता है।''

पर्यावरण और विकास को ध्यान में रखते हुए वहनीय विकास की अवधारणा 1983 में ब्रण्टलैण्ड फ्रांस कमिशन में उत्पन्न हुयी। इसीलिए वहनीय विकास की अवधारणा को लोकप्रिय बनाने का श्रेय ब्रण्टलैण्ड कमिशन को जाता है हलांकि ये एक विवादित मुद्दा हैं पर विकास की दिशा क्या होनी चाहिए? इस संदर्भ में इन दिनों बहस का केन्द्रिय मुद्दा है। कुछ भी हो वहनीय विकास की अवधारण का जन्म पर्यावरण नीति, कार्यक्रम तथा परियोजनाओं पर चल रहे बहस तथा इस अध्ययन के बाद ये तय हुआ कि आर्थिक विकास, गरीबी और पर्यावरण इन सभी के बीच गहरा रिश्ता है। सच कहा जाये तो गरीबी और पर्यावरण तथा निम्न आर्थिक प्रदर्शन के साथ गरीबी में वृद्धि के कारण पर्यावरण क्षरण इत्यादि के अध्ययन में वहनीय विकास की संकल्पना को जन्म दिया। ब्रण्टलैण्ड की रिपोर्ट में आर्थिक विकास के उस मॉडल पर जोर दिया गया जो विकासशील देशों की मूल आवश्यकताओं को पूरा कर सके। साथ ही साथ इस क्रम में उन देशों के बीच प्राकृतिक साधनों को भविष्य की पीढ़ी के प्रयोग के लिए भी सुरक्षित व सुनिश्चित कर सके।

उल्लेखनीय है कि वहनीय विकास, विकास की ऐसी प्रक्रिया है जो न केवल हमारे प्राकृतिक संसाधनों का संरक्षण करने पर बल देती है वरन् उनकी बर्बादी पर राक लगाती है साथ ही यह विकास की ऐसी अवधारणा है जो मात्र कुछ लोगों के लिए ही नहीं बल्कि जहां तक वहनीय विकास की नीतियों के व्यवहार क्रियान्वयन या उससे अमल करने का सवाल है तो इस नीतियों के व्यावहारिक क्रियान्वयन में निम्नलिखित बातों पर विरोध बल दिया जाता है।

- संसाधनों के कम या बिना आयोग के विकास के नीति।
- संसाधनों की कम बर्बादी या नुकसान पर बल।
- ऐसी विकास नीतियों का निर्माण जिनसे संसाधनों का संरक्षण संभव हो सके।
- किसी भी प्रकार आर्थिक या विकास की गतिविधियों के परिणामस्वरूप पर्यावरण को होने वाले नुकसान प्रदुषण पर रोक लगाने वाली विकास की नीतियों का निर्माण।

12.5 वहनीय विकास हेतु वैश्विक प्रयास (Global efferts for Sustainable developmet)

वहनीय विकास हेतु वैश्विक स्तर पर किये गये प्रयास निम्न प्रकार से हैं -

1. सन 1972 में स्वीडन की राजधानी स्टाकहोम में मानवीय पर्यावरण संयुक्त राष्ट्र सम्मेलन का आयोजन किया गया।

2. इस सम्मेलन में आम राय के आधार पर संयुक्त राष्ट्र संघ के अधीन संयुक्त राष्ट्र पर्यावरण कार्यक्रम हुआ।

3. 1982 में स्टाकहोम में ही पर्यावरण की बिगड़ती हालत को देखते हुए पर्यावरण एवं विकास पर विश्व आयोग 'WCED'की स्थापना की गयी।

4. पृथ्वी सम्मेलन 1992 में अपनायी गयी नीति के अनुरूप हुई प्रगति को आकलन के लिए 1997 में न्यूयार्क में संयुक्त राष्ट्र महासभा का अधिवेशन जारी किया गया।

5. 1997 के इस अधिवेशन में किये गये निर्णय के आधार पर 2002 में दक्षिण अफ्रीका में जोहन्सवर्ग शहर में वहनीय विकास पर विश्व शिखर सम्मेलन किया गया।

पृथ्वी सम्मेलन-2002 : पृथ्वी सम्मेलन-2002 में आम सहमति के प्रमुख मुद्दे निम्नलिखित हैः-

1. स्वच्छता सम्बन्धी सुविधाओं से वंचित लोगों की संख्या में 2015 तक 50 फीसदी तक कमी लाना।

2. ईंधन, पेट्रोल, डीजल, कोयला के विकास के रूप में सौर ऊर्जा एवं पवन ऊर्जा के स्रोतों के इस्तेमाल को बढ़ाना क्योंकि ये स्रोत पुनः प्रयोग योग्य हैं तथा पर्यावरण को क्षति भी नहीं पहुँचाते हैं।

3. समुद्र के पारिस्थितिकी तंत्र के सन्तुलन के लिए महत्वपूर्ण तत्वविशेष तौर पर निर्धन देशों में भोजन के प्रमुख स्रोत के रूप में स्वीकार करते हुए मछलियों के स्टाक में आयी कमी को पूरा करना।

4. खतरनाक कचरे को स्वच्छ तरीके से निस्तारण हेतु उचित प्रबन्धन को बढ़ावा देना।

5. सन् 2020 तक रसायनों के उत्पादन एवं प्रयोग को मानव एवं पर्यावरण के लिए सुरक्षित बनाने का लक्ष्य निर्धारित करना।

6. पट्टे सम्बन्धी विश्व व्यापार संगठन का समझौता निर्धन देशों को दवाएं उपलब्ध कराने से नहीं रोकेगा, जिससे निर्धन देश अपने देशवासियों को गंभीर रोगों की सस्ती दवाएं उपलब्ध करा सकता है।

7. विकास के निर्धारित लक्ष्य की पूर्ति के लिए निर्धन देशों की आर्थिक सहायता बढ़ायी जाय।

8. वैश्वीकरण, अच्छे तथा बुरे दोनों ही प्रकार के प्रभावों को ध्यान में रखते हुए इसे विश्व अर्थव्यवस्था के विकास एवं जीवन स्थितियों में सुधार के लिए अवसर सुलभ कराने के संयन्त्र के रूप में स्वीकार किया जाना चाहिए।

9. व्यापार एवं पर्यावरण के सम्बन्धों को बढ़ावा देने पर सहमति, धनी देशों में व्यापार संतुलन बिगाड़ने वाली सब्सिडियों को कम करने की इच्छा व्यक्त की जाय।

10. प्राणियों तथा वनस्पतियों के दुर्लभ प्रजाति के विलुप्त होने के दर में 2010 तक कमी लाना।

11. पृथ्वी को बचाने का उत्तरदायित्व सभी राष्ट्रों का है परन्तु इस पर होने वाले व्यय का बोझ धनी देशों को उठाना चाहिए।

12.6 वहनीय विकास की आवश्यकताएं (Needs of Sustainable Development)

पर्यावरण एवं विकास (1933) पर विश्व आयोग की स्थापना सभी विकास संघ की समान सभा द्वारा हुयी और इस आयोग के अनेक सम्मेलनवार्ताओं का आयोजन विश्व स्तर पर किया। विश्व में ये उभरकर सामने आया। विकास ने लोगों को गरीब बनाया और उनमें असमानता विकसित की तथा बीमारियों के प्रारम्भ में उनमें सहन शक्ति तथा उनसे लड़ने की क्षमता समाप्त कर दी और विश्व के पर्यावरण का दोहन विकासके लिए बिना सोचे समझे किया गया। इससे अनेक बीमारियों का व्यंग्य हुआ। इनका भी इलाज डाक्टरों द्वारा संभव नहीं हो सका। यहीं प्राकृतिक में अपना एक रूप धारण कर लिया। सुनामी जैसी घटनाएं घटने लगी। विश्व के प्रत्येक भाग में आये हुए भूचाल आदि में और मनुष्यों में प्रतिरोधक क्षमताएं समाप्त हो गयी। यहीं नहीं मौसम में भी तेजी से परिवर्तन हो रहा है। जिससे सारी परिस्थिति को प्रभावित हो रही है। इन विकास के नाम पर विनाश ने अधिक राष्ट्रीय ढंग को लगा रहे। विश्व कारण प्रत्येक राष्ट्र अपनी आय का एक बड़ा भाग सैन्य शक्ति की वृद्धि में लगा रहा है। क्योंकि उसको इस बात का भय सता रहा है कि कहीं पड़ोसी देश हमारे देश की सीमाओं का अतिक्रमण न कर ले। इस प्रकार पूरे विश्व के देशों में एक-दूसरे पर अविश्वास का वातावरण बना हुआ है। ऐसी स्थिति में जबकि सम्पूर्ण विश्व गरीबी, बेकारी, बीमारी आदि दिन-प्रतिदिन बढ़ती जा रही है। लोगों की आर्थिक स्थिति में दिन-प्रतिदिन विश मताएं बढ़ती जा रही है। इस प्रकार अमीरी, गरीबी प्रथाएं ये ऐसी स्थिति एक निराकरण एक ही विकल्प बचता है, वह है अच्छे विकास की विचारिता। वहनीय विकास की आवश्यकताएं निम्नलिखित हैः-

1. गरीबी उन्मूलन के लिए
2. जनसंख्या वृद्धि पर रोक के लिए
3. संसाधनों के समान वितरण के लिए
4. अधिक स्वस्थ, सक्षम व प्रशिक्षित मानव संसाधन के लिए
5. केन्द्रीकृत एवं अधिक भागीदारी वाली सरकार के लिए
6. विभिन्न देशों में अधिक समानता मूलक व उदार आर्थिक व्यवस्था के लिए ताकि उत्पादन में वृद्धि हो सके और स्थानीय स्तर पर उपभोग या खपत में भी वृद्धि हो सके
7. जैव तंत्र की विभिन्नता की बेहतर समझ हेतु ताकि पर्यावरण समस्याओं को ध्यान में रखते हुए विकास की नीतियां बनायी जा सकें। साथ ही स्थानीय स्तर पर पर्यावरण समस्याओं के उपाय ढूंढें जा सकें व पर्यावरण प्रभावों को बेहतर ढंग से नियंत्रित किया जा सके।

12.7 वहनीय विकास के लक्ष्य एवं उद्देश्य (Goals & Objectives of Sustainable Development)

वहनीय विकास को ध्यान में रखते हुए इसके लक्ष्यों को निम्नलिखित रूप से स्पष्ट किया जा सकता है:-

1. अतीत में हुए पर्यावरण व जैविक नुकसान की भरपाई
2. भविष्य में विकास के कारण होने वाले नुकसानों से देश की रक्षा
3. मानव की परिवर्तनशील आवश्यकताओं को संतुष्ट करने के क्रम में संसाधनों का सफल प्रबन्धन
4. प्रदूश ण पर नियंत्रण तथा पर्यावरण क्षति पर नियंत्रण

5. सामाजिक समानता और न्याय के प्रति बचनवद्धता
6. जैविक सहअस्तित्व की रचना
7. विकास के अवसरों में वृद्धि मात्र कुछ लोगों के लिए नहीं वरन् सभी के लिए

12.8 वहनीय विकास एवं आर्थिक विकास (Sustainable Development & Economic development)

वहनीय विकास का तात्पर्य केवल पर्यावरण संरक्षण नहीं होता है। यह अपने में अधिक वृद्धि की एक नवीन अवधारणा को अन्तर्निहित करता है। जो कि विश्व के सीमिति प्राकृतिक संसाधनों को नष्ट किये बिना तथा विश्व की धारण करने की क्षमता के साथ समझौता किये बिना केवल कुछ विशेषाधिकार प्राप्त लोगों के लिए नहीं बल्कि सभी के लिए निष्पक्ष एवं समान अवसर प्रदान करता है। यह हमारा नैतिक कर्तव्य है कि हम अपनी भावी पीढ़ी के लिए कम से कम वैसा ही कल्याण का कार्य करें जैसा कि हमारे पूर्वजों ने हमारे लिए किया था। अक्षय एक प्रक्रिया है जिसमें आर्थिक, राजस्व सम्बन्धी, व्यवसाय, कृषि तथा औद्योगिक नीतियों द्वारा ऐसे विकास को उन्नत करने के लिए निर्मित करना जो आर्थिक सामाजिक तथा पारिस्थितिक से अक्षय होता है। इसका यह भी अर्थ है कि वर्तमान जनसंख्या की शिक्षा तथा स्वास्थ्य के लिए पर्याप्त निवेश किया जाना चाहिए। इसके अतिरिक्त इसका तात्पर्य यह भी है कि संसाधनों का ऐसे ढंग से प्रयोग किया जाना चाहिए कि पृथ्वी की धारण करने तथा उत्पादक क्षमता के अत्यधिक दोहन द्वारा पारिस्थितिक असंतुलन न हो।

12.9 वहनीय विकास तथा पर्यावरण (Sustainable development and Enviornment)

वहनीय विकास सम्पन्नतर विकासशील देशों के लिए अत्यधिक बाध्यता है। इसे विकास की एक गतिशील प्रक्रिया के रूप में देखा जाता है। एक अर्थ में यह प्रकृति में तटस्थ तथा स्वप्रेरित होता है। वहनीय विकास को और अधिक समुचित रूप से आर्थिक वृद्धि को प्राप्त करते हुए संरक्षण से युक्त एक प्रगति के रूप में देखा जा सकता है। पर्यावरण के अर्थशास्त्र को एक ऐसे अध्ययन के रूप में पारिभाषित किया जा सकता है जो संसाधनों को उनके एक-एक के बाद उपयोग के मध्य इस ढंग से बँटवारे/स्थान निर्धारण से सम्बन्धित होता है कि उनमें पर्यावरण के प्रति प्राकृतिक संसाधनों के अवशिष्ट पदार्थों के विसर्जन करने में प्रभावी रूप से कमी आती है तथा परिणामस्वरूप कल्याण में वृद्धि होती है।

पर्यावरण विकास अथवा वृद्धि को प्रभावित करने वाली चारों ओर की दशाओं से सम्बन्धित होता है। इसे पृथ्वी की सजीव वस्तुओं तथा वायु की सार्वभौमिक विश्वव्यापी बारीक परत जल तथा मिट्टी जोकि उनके प्राकृतिक प्रवास हैं सहित एक प्रणाली के रूप में पारिभाषित किया जा सकता है। पर्यावरण अर्थव्यवस्था के लिए ऊर्जा तथा वस्तुओं एवं सुख की अनुभूतियों के लिए अपरिष्कृत प्रकृति प्रदान करता है। इस प्रणाली को पारिस्थितिक तंत्र कहा जाता है।

12.10 अक्षय विकास की रणनीतियां एवं उपागम (Stratigies and Approaches of Sustainable Development)

किसी देश के नियोजन एवं दयनीय विकास की रणनीतियां इस प्रकार की होनी चाहिए कि वो उस देश में गरीबी एवं भूखमरी भविष्य में भी न आ सके। विकास की रणनीति भविष्य को ध्यान में रखकर बनानी चाहिए।

जिससे देश में भविष्य में भी खुशहाली बनी रह सके और धरणीय विकास के रूप में धारण कर सके। इसके लिए निम्नलिखित पूर्व शर्ते आवश्यक हैं। जिन्हें की रणनीतियों के रूप रूप में देखा जाना चाहिए।

1. विकसित और विकासशील देशों के महत्व अन्तर्राष्ट्रीय वितरण प्रणाली न्याय और समान्तर पर निर्धारित होना चाहिए।
2. सम्पन्नता और उत्पादन पर्यावरणीय असन्तुलन की कीमत स्वीकार नहीं हैं।
3. देश की सामाजिक संरचना और व्यवस्था इस प्रकार की होनी चाहिए कि वह दलितों एवं गरीबों का कल्याण कर सकें। और समाज के सभी वर्गो को एक सूत्र में बांधकर चल सके। उनमें आपसी वैमनस्य नहीं होनी चाहिए और न ही सामाजिक व्यवस्था को ऐसी व्यवस्था को बढ़ावा देना चाहिए।
4. स्वदेशी प्रौद्योगिकी की विदेशी प्रौद्योगिकी पर अधिक निर्भर नहीं रहना चाहिए। देश के प्रौद्योगिकी का विकास किया जाना चाहिए।
5. आर्थिक व्यवस्था लचीली, स्वार्थी एवं सूक्ष्म दृष्टि की नहीं होनी चाहिए।
6. राजनैतिक व्यवस्था कल्याणकारी राज्य और प्रजातंत्र के सिद्धान्तों पर आधारित होनी चाहिए।
7. शिक्षा व्यवस्था विद्यापत्त और उपयोगी होनी चाहिए।
8. सरकार को भ्रष्टाचार मुक्त और सभी वर्गों का समर्थन प्राप्त होना चाहिए।
9. एक सुदृढ़ पारिवारिक अवस्था समाज में पायी जानी चाहिए। जहां परिवार और व्यक्ति की स्वतंत्रता भी स्वीकार की जा रही है।
10. 1992 में हुयी पर्यावरण तथा विकास डियोगी सेनरी सम्मेलन के नाम से जाना जाता है। आधार तैयार किया इस सम्मेलन में पर्यावरण क्षरण तथा भयानक गरीबी विषमता के सम्बन्ध में विश्व समुदाय में एक एजेण्डा तैयार किया तथा पोश णीय विकास की व्यवस्था केा बनाये रखने के लिए एक रणनीति के रूप में सभी विकसित और विकासशील देशों ने मिलकर एक कार्य योजना तैयार की ताकि विश्व आगे चलकर पोषणीय विकास के पथ पर आसानी से चल सके। यहां पर रणनीति के रूप में ये स्वीकार किया गया कि आर्थिक विकास पर्यावरण संरक्षण तथा सामाजिक विकास पोश णीय विकास के तीन प्रमुख स्तम्भ हैं। विश्व के अधिकांश देशं ने **रियो** घोषणा पत्र पर हस्ताक्षर किये। फिर भी उनमें से बहुत से ऐसे देश है जो हस्ताक्षर करने के पश्चात् भी इनका ठीक से पालन नहीं कर पा रहे हैं।

सम्मेलन में संयुक्त राष्ट्र संघ के महासचिव कोफी उनान ने पांच प्राथमिकता क्षेत्रों को सर्वोच्च महत्व दिये जाने पर बल दिया गया ,वे हैं -जल एवं सफाई, ऊर्जा , स्वास्थ्य, कृषि, जैव विविधता

12.11 वहनीय विकास के लिए सुझाव (Suggestions Regarding Sustainable development)

1983 विश्व आयोग में वहनीय विकास के लिए कुछ सुझाव प्रस्तुत किय है, जो निम्नलिखित है:-

1. मानवीय आवश्यकताओं पर नियंत्रण लगाना चाहिए।

2. सभी देशों को गरीबी निवारण कार्यक्रम को सबसे प्रमुख कार्यक्रम के रूप में चला कर अपने देश कीगरीबी को समाप्त करना चाहिए।
3. विकास के सभी कार्यक्रमों में पर्यावरण संरक्षण परविशेष बल दिया जाना चाहिए।
4. वहनीय विकास के लिए समानता और संसाधनों का समान बंटवारा संकल्पना विकसित और विकासशील देशों के बीच भी अपनायी जानी चाहिए।

12.12 सारांश (Summary)

सारांश के रूप में वहनीय विकास, विकास की ऐसी प्रक्रिया है जो न केवल हमारे प्राकृतिक संसाधनों का संरक्षण करने पर बल देती है वरन् उनकी बर्बादी पर रोक लगाती है साथ ही यह विकास की ऐसी अवधारणा है। जिसमें आर्थिक, राजस्व सम्बन्धी, व्यवसाय, कृषि तथा औद्योगिक नीतियों द्वारा ऐसे विकास को उन्नत करने के लिए निर्मित करना जो आर्थिक सामाजिक तथा पारिस्थितिक से अक्षय होता है।

12.13 अभ्यासार्थ प्रश्न (Questions for Practice)

(1) वहनीय विकास की अवधारणा से आप क्या समझते हैं?

(2) वहनीय विकास के अर्थ पर प्रकाश डालिए।

(3) वहनीय विकास एवं आर्थिक विकास में अन्तर कीजिए।

(4) वहनीय विकास हेतु वैश्विक प्रयास को स्पष्ट कीजिए ।

12.14 सन्दर्भ पुस्तकें (Reference Books)

1. Singh, Tarlok, Social Policy, Encyclopaedia of Social Work in India, Vol II- Planning commission, GOI, New Delhi, 1968.

2. Singh, S., Mishra, P.k. D.k. and Singh, A.k. N.k. Bharat Mein Samajik Niti, Niyojan Evam Vikas, Deva Publications, Lucknow, 2006.

3. Bhartiya, A.k. K.k. and Singh, D.k. K.k. Social Policy in India, NRBC, Lucknow, 2009.

4. Agnihotri, I.k.and Awasthi, A.k.Economic Principles, Alok Prakashan, Allahabad, 1999.

5. Sovani, N.k. V.k. Whither Social Planners and Social Plannig? K.Gokhle, S.k.D.k. (ed.) Social Welfare: Legend and Legacy.

6. Kahn, A, J, Studies in Social Policy and Planning, Russel Sage Foundation, 1969.

7. Singh, S.k. P.k. Economic Development and Planning, S.k. Chand and Company Ltd., New Delhi, 2000.

8. Economic Development-Principles and Patterns (ed.k. by H.F.k. Williamson and C.k. A.k. Buttrick)

9. G.k. M.k. Meier and R.k. E.k. Baldwin, Economic Development Theory, History, Policy.

10. L.k. W.k. Shanan, Underdeveloped Areas,.

11. Buchnan and Ellis, Approaches to Economic Development.